अक्तूबर-दिसम्बर, 2017 (संयुक्तांक)

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक
डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक
कमला कान्त

महत्वपूर्ण निर्णय

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 173 – यान दुर्घटना – यान का बीमाकृत होना – दुर्घटना में यात्री की मृत्यु होना – यान, बीमा की शर्तों और निबंधनों के उल्लंघन में चलाया जाना – प्रतिकर संदाय करने का बीमा कंपनी का दायित्व – जहां यान, बीमा की शर्तों और निबंधनों के उल्लंघन में चलाया जाता है वहां भी बीमा कंपनी प्रतिकर के दायित्व से बच नहीं सकती है, तथापि, बीमा कंपनी अपराध करने वाले यान के स्वामी से स्वयं द्वारा संदाय प्रतिकर की धनराशि वसूल करने की हकदार होगी ।

नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम आशीष कुमार पटेल और अन्य 161

संसद् के अधिनियम

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2010 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (21) – (39)

पृष्ठ संख्या 161 – 316 (2017) 2 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका – अक्तूबर-दिसम्बर, 2017 (संयुक्तांक) (पृष्ठ संख्या 161 – 316)

Cover ii

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग

डा. बी. एन. मणि,
सेवानिवृत्त अपर विधि सलाहकार,
विधि मंत्रालय

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

डा. ऋषिपाल सिंह,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, राजभाषा खंड

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री विनोद कुमार आर्य,
संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री असलम खान और पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 36

वार्षिक : ₹ 135

© 2017 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा................................. द्वारा मुद्रित ।

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

अक्तूबर-दिसम्बर, 2017

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अजनेश कुमार **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य	275
अनेक सिंह और अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य	218
कन्हैयालाल और अन्य **बनाम** सोहन लाल और अन्य	244
जमुना सहाय और अन्य **बनाम** सुश्री नयन तारा और अन्य	192
नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड **बनाम** आशीष कुमार पटेल और अन्य	161
नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड **बनाम** श्रीमती वृन्दा देवी और अन्य	233
ब्रह्म पाल और अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य	170
राम करन और अन्य **बनाम** श्रीमती कौशल्या देवी और अन्य	302

संसद् के अधिनियम

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2010 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	21 – 39

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

– धारा 173 – यान दुर्घटना – यान का बीमाकृत होना – दुर्घटना में यात्री की मृत्यु होना – यान, बीमा की शर्तों और निबंधनों के उल्लंघन में चलाया जाना – प्रतिकर संदाय करने का बीमा कंपनी का दायित्व – जहां यान, बीमा की शर्तों और निबंधनों के उल्लंघन में चलाया जाता है वहां भी बीमा कंपनी प्रतिकर के दायित्व से बच नहीं सकती है, तथापि, बीमा कंपनी अपराध करने वाले यान के स्वामी से स्वयं द्वारा संदाय प्रतिकर की धनराशि वसूल करने की हकदार होगी ।

नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **आशीष कुमार पटेल और अन्य** 161

– धारा 173, 147 और 149 – प्रश्नगत यान द्वारा दुर्घटना कारित होना – प्रश्नगत यान का उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाया जाना साबित होना – यान चालन के दौरान चालक के पास वैध चालन अनुज्ञप्ति होना – दुर्घटना दावा – बीमा कम्पनी का दायित्व – प्रतिकर की मात्रा – यदि यह साबित हो जाता है कि प्रश्नगत यान के चालक द्वारा यान को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाए जाने के कारण दुर्घटना घटित हुई है और चालक के पास वैध अनुज्ञप्ति थी तथा दुर्घटना के परिणामस्वरूप आहत व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो प्रतिकर के लिए बीमा कम्पनी दायी अभिनिर्धारित होगी और प्रतिकर की मात्रा, मृतक की आयु, आर्थिक स्थिति, आय के साधन और आश्रितों की संख्या आदि को ध्यान में रखते हुए, मान्य गुणक के अनुसार अवधारित की जाएगी और इस प्रकार अवधारित प्रतिकर युक्तियुक्त और विधिमान्य होगी ।

नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती वृन्दा देवी और अन्य** 233

पृष्ठ संख्या

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 226 [सपठित हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय लोक हित वाद नियम, 2010 का नियम 3 और 4] – लोक हित वाद – आपसी रंजिश और वैयक्तिक कुलबैर – किसी भी प्रकार से लोक हित अन्तर्निहित नहीं होना – तुच्छ और अप्रत्यक्ष हेतु – जहां अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि कोई वाद आपसी रंजिश और वैयक्तिक कुलबैर तथा तुच्छ और अप्रत्यक्ष हेतु से फाइल किया गया है और उसमें किसी भी प्रकार से कोई लोक हित अन्तर्निहित नहीं है तो ऐसे वाद को लोक हित के रूप में नहीं माना जा सकता है और यह प्रथमदृष्ट्या ही खारिज होने योग्य होगा ।

अजनेश कुमार बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** 275

– अनुच्छेद 226 [सपठित भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 4, 6, 5क और 17] – रिट – राज्य सरकार द्वारा अत्यावश्यकता खण्ड के अधीन लोक प्रयोजनार्थ भूमि अधिग्रहण करने के लिए अधिसूचना जारी किया जाना – अधिग्रहण के पूर्व अपेक्षित जांच नहीं कराना – सम्बन्धित भूमि स्वामियों को उचित और पर्याप्त प्रतिकर संदत्त करना और उनके द्वारा उसे स्वीकार करना – अधिसूचना को चुनौती दिया जाना – यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि राज्य सरकार ने भूमि अधिग्रहण के पूर्व अपेक्षित जांच नहीं कराई है जो कानूनन आज्ञापक है तो अधिसूचना रद्द किए जाने योग्य होगी परन्तु यदि यह साबित कर दिया जाता है कि सम्बन्धित भूमि को अत्यावश्यकता खण्ड के अधीन अधिगृहीत किया गया है और सम्बन्धित भूमि स्वामियों को पर्याप्त, उचित और ऋजु प्रतिकर का संदाय कर दिया गया है और उन्होंने उसे स्वीकार भी कर लिया है तो साम्या के संतुलन

पृष्ठ संख्या

और भूमि स्वामियों के संरक्षण को ध्यान में रखते हुए, ऐसी अधिसूचना को रद्द करने के बजाय मध्य का रास्ता अपनाते हुए इसे विधिमान्य ठहराया जा सकता है ।

ब्रह्म पाल और अन्य बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 170

– अनुच्छेद 226 [सपठित भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 4, 6 और 17] – रिट – राज्य सरकार द्वारा लोक प्रयोजनार्थ एवं अत्यावश्यकता में भूमि अर्जित करना – सम्बन्धित अधिसूचना जारी होना – युक्तियुक्त अवधि के भीतर अर्जन कार्यवाहियां पूर्ण नहीं किया जाना – अधिसूचना व्यपगत होना – यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि राज्य द्वारा भूमि अर्जित करने की सम्पूर्ण कार्यवाहियां युक्तियुक्त कानूनी अवधि के भीतर पूर्ण नहीं की गई हैं तो ऐसी दशा में जारी अधिसूचना व्यपगत हो जाएगी और अर्जित भूमि उसके स्वामी को वापस हो जाएगी ।

अनेक सिंह और अन्य बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 218

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– धारा 96 [सपठित भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 54] – अपील – विक्रय-विलेख – अंतरण – यह स्पष्ट नहीं होना कि विक्रय-विलेख द्वारा प्रश्नगत सम्पत्ति का अन्तरण किया गया है या मात्र उसमें प्रतिकर प्राप्त करने का अधिकार अन्तरित किया गया है – विक्रय-विलेख की इस प्रकृति के बारे में चुनौती देना – चुनौती देते हुए वाद लाने का अधिकार – इसे साबित करने का भार उस पक्षकार पर होता है जो इसे चुनौती देता है – यदि कोई पक्षकार किसी विक्रय-विलेख की प्रकृति के बारे में आक्षेप करता है और उसे चुनौती देता है तो उसकी प्रकृति के बारे में साबित करने का भार उसी पक्षकार पर होता है अन्यों पर

पृष्ठ संख्या

नहीं और वाद लाने का अधिकार उसी पक्षकार का होता है जिसका उस प्रश्नगत सम्पत्ति में हित और अधिकार निहित होता है ।

जमुना सहाय और अन्य बनाम **सुश्री नयन तारा और अन्य** 192

– धारा 100 [सपठित भारतीय न्यास अधिनियम, 1882] – बंधककर्ता द्वारा बंधकदारों के पास प्रश्नगत संपत्ति का बंधक रखना – बंधकदारों द्वारा सम्पत्ति को किराए पर दिया जाना – बंधक विलेख के अनुसार बंधक सम्पत्ति का मोचन न होना – पक्षकारों द्वारा समझौते के अनुसरण में बंधक सम्पत्तियों का कब्जा नहीं सौंपना – विनिर्दिष्ट अनुपालन – यदि किसी बंधक सम्पत्ति के बारे में पक्षकारों के बीच आपसी समझौते द्वारा बंधक का मोचन कर लिया जाता है तो उक्त समझौते के अनुसार ही उक्त सम्पत्ति का बंधक मोचन विनिर्दिष्टतः अनुज्ञेय है, यदि कोई पक्षकार इसका पालन नहीं करता है तो पीड़ित पक्षकार, बंधक विलेख की शर्तों के अनुसार सम्पत्ति का कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी होता है ।

कन्हैयालाल और अन्य बनाम **सोहन लाल और अन्य** 244

– धारा 100 – द्वितीय अपील – राजस्व प्राधिकारियों के साथ दुरभिसंधि करके अपने नाम में राजस्व प्रविष्टि कराना – नाम प्रविष्ट कराने का कोई आधार नहीं होना – किसी भी दस्तावेजी या मौखिक साक्ष्यों द्वारा इसकी पुष्टि नहीं होना – ऐसी दशा में, इस प्रकार की नाम प्रविष्टि अवैध और गलत अभिनिर्धारित होना – यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि वाद भूमि की राजस्व प्रविष्टियों में किसी व्यक्ति के नाम की गलत तौर पर प्रविष्टि हुई है अर्थात् राजस्व प्राधिकारियों के साथ दुरभिसंधि करके और उनका कोई आधार भी नहीं है, न

पृष्ठ संख्या

ही इनका किसी मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य से समर्थन होता है, तो ऐसी दशा में, इस प्रकार की गई प्रविष्टि अवैध और गलत अभिनिर्धारित कर दी जाएगी ।

राम करन और अन्य बनाम **श्रीमती कौशल्या देवी और अन्य** 302

नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

आशीष कुमार पटेल और अन्य

तारीख 21 जनवरी, 2016

न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केसरवानी

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 173 – यान दुर्घटना – यान का बीमाकृत होना – दुर्घटना में यात्री की मृत्यु होना – यान, बीमा की शर्तों और निबंधनों के उल्लंघन में चलाया जाना – प्रतिकर संदाय करने का बीमा कंपनी का दायित्व – जहां यान, बीमा की शर्तों और निबंधनों के उल्लंघन में चलाया जाता है वहां भी बीमा कंपनी प्रतिकर के दायित्व से बच नहीं सकती है, तथापि, बीमा कंपनी अपराध करने वाले यान के स्वामी से स्वयं द्वारा संदाय प्रतिकर की धनराशि वसूल करने की हकदार होगी ।

वर्तमान मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि तारीख 5 अक्तूबर, 2013 को दावेदार-प्रत्यर्थी एक यान (मैजिक) रजिस्ट्रेशन संख्या यू पी 45 टी 1563 में यात्रा कर रहा था । अनेक दूसरे यात्री भी उक्त यान में यात्रा कर रहे थे जो यान लगभग रात्रि 11.30 बजे दुर्घटनाग्रस्त हो गया जिसमें दावेदार-प्रत्यर्थी को क्षति पहुंची । प्रथम इत्तिला सूचना अगले दिन अर्थात् तारीख 6 अक्तूबर, 2013 को लगभग प्रातः 4.00 बजे दर्ज कराई गई थी । इस प्रकार, प्रथम इत्तिला सूचना दुर्घटना के कुछ घंटो बाद दर्ज कराई गई थी । अधिकरण के समक्ष दावा याचिका दावेदारों-प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल की गई थी जो मृतक के उत्तराधिकारी हैं । अधिकरण द्वारा दावा याचिका मंजूर कर लिया गया था । इससे व्यथित होकर यह अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा यूनाइटेड इंडियन इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम सुजाता अरोड़ा और अन्य वाले मामले का प्रबलता से अवलंब लिया है, इसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि

जहां अधिकरण ने यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि यदि सुसंगत समय पर यान को चलाने वाले व्यक्ति के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी तो यह बीमा पालिसी के निबंधनों और शर्तों का उल्लंघन करने के समान होता है और इसलिए, बीमा कंपनी पर कोई दायित्व अधिरोपित नहीं किया जा सकता है । आक्षेपित अधिनिर्णय में, अधिकरण ने यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि अपराध करने वाले यान के चालक की चालन अनुज्ञप्ति को साक्ष्य में फाइल किया गया है जिससे यह सिद्ध होता है कि चालन अनुज्ञप्ति, तारीख 12 अप्रैल, 2012 से 11 फरवरी, 2014 तक प्रभावी थी जबकि दुर्घटना तारीख 5 अक्तूबर, 2013 को घटी थी और इस प्रकार, दुर्घटना की तारीख और समय पर, अपराध करने वाले यान के चालक की चालन अनुज्ञप्ति, विधिमान्य और प्रभावी थी और अपीलार्थी बीमा कंपनी द्वारा कोई प्रतिकूल साक्ष्य फाइल नहीं किया जा सका है । इस प्रकार, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिए गए निर्णय, वर्तमान मामले के तथ्यों में अपीलार्थी के मामले का समर्थन नहीं करते हैं । जहां तक अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल के निवेदन का संबंध अधिनिर्णीत धनराशि का संदाय करने के लिए बीमा कंपनी के विवादित दायित्व से है, न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि यह संपूर्ण रूप से निर्विवाद यह है कि अपराध करने वाले यान की बैठने की अधिकृत क्षमता 6 थी जब कि इस यान में 17 यात्री यात्रा कर रहे थे किंतु बीमा कंपनी अपराध करने वाले यान में यात्रा करने वाले यात्रियों की अधिकृत संख्या के संबंध में प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से बच सकती है । आक्षेपित अधिनिर्णय का वह भाग जिसमें छह व्यक्तियों से अधिक के बारे में अधिनिर्णय अर्थात् जिसमें अपराध करने वाले यान में बैठने की अधिकृत क्षमता से अधिक व्यक्तियों के संबंध में प्रतिकर का अधिनिर्णय किया जा सकता है, अपीलार्थी-बीमा कंपनी को उसे यान के स्वामी से वसूल करने का अधिकार दिया गया है । (पैरा 7 और 8)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2014]	टी. ए. सी. 2014 (3) एस. सी. 29 : **यूनाइटेड इंडियन इंश्योरेंस कंपनी लि.** बनाम **सुजाता अरोड़ा और अन्य;**	3
[2011]	जे. टी. 2011 (3) एस. सी. 149 : **यूनाइटेड इंडिया कंपनी लि.** बनाम **के. एम. पूनम और अन्य ।**	6

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2016 की प्रथम अपील सं. 165.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री मनीष कुमार निगम

प्रत्यर्थी की ओर से कोई नहीं

न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केसरवानी – अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री मनीष कुमार निगम को सुना ।

2. यह अपील, मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण/अपर जिला न्यायाधीश, न्यायालय सं. 1 चंदौली द्वारा 2013 की मोटर दुर्घटना दावा याचिका सं. 145 में पारित तारीख 14 अक्तूबर, 2015 के अधिनिर्णय को चुनौती देते हुए फाइल की गई है, जिसमें यान (मैजिक) रजिस्ट्रेशन संख्या यू पी 45 टी 1563 द्वारा कारित दुर्घटना में तारीख 5 अक्तूबर, 2013 को गंभीर क्षतियों के कारण दावेदार-प्रत्यर्थी के लिए 74,150/- रुपए की धनराशि अधिनिर्णीत की गई थी जिसमें क्षतिग्रस्त व्यक्ति और कुछ अन्य यात्री यात्रा कर रहे थे ।

3. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि अपराध करने वाले यान में बैठने की अधिकृत क्षमता 6 थी जबकि उसमें 17 यात्री यात्रा कर रहे थे और इसलिए, अधिकरण ने प्रतिकर का संदाय करने के लिए प्रश्नगत यान के स्वामी का दायित्व नियत करने के बजाय बीमा कंपनी का दायित्व नियत करके विधि की स्पष्ट त्रुटि कारित की है । उन्होंने यह निवेदन किया है कि अपराध करने वाले यान के चालक के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी । इसलिए, माननीय उच्चतम न्यायालय के **यूनाइटेड इंडियन इंश्योरेंस कंपनी लि.** बनाम **सुजाता अरोड़ा और अन्य**[1] वाले मामले में विनिश्चय को दृष्टिगत करते हुए, अपीलार्थी अधिनिर्णीत धनराशि का संदाय करने के लिए दायी नहीं है ।

4. मैंने अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल के निवेदन पर ध्यानपूर्वक विचार किया है ।

5. वर्तमान मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि तारीख 5 अक्तूबर, 2013 को दावेदार-प्रत्यर्थी एक यान (मैजिक) रजिस्ट्रेशन संख्या यू पी 45 टी 1563 में यात्रा कर रहा था । अनेक दूसरे यात्री भी उक्त यान में यात्रा

---

[1] टी. ए. सी. 2014 (3) एस. सी. 29.

कर रहे थे जो यान लगभग रात्रि 11.30 बजे दुर्घटनाग्रस्त हो गया था जिसमें दावेदार-प्रत्यर्थी को क्षति पहुंची थी । अगले दिन अर्थात् तारीख 6 अक्तूबर, 2013 को लगभग प्रातः 4.00 बजे एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी । इस प्रकार, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दुर्घटना के कुछ घंटो बाद दर्ज कराई गई थी । दावा याचिका, दावेदारों-प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल की गई थी जो मृतक के उत्तराधिकारी हैं ।

6. आक्षेपित अधिनिर्णय में, अधिकरण ने मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पर विचार किया और पूर्वोक्त उल्लिखित रूप से घटित दुर्घटना के संबंध में तथ्य का निष्कर्ष अभिलिखित किया, जिसमें पूर्वोक्त दावेदार-प्रत्यर्थी को गंभीर क्षतियां पहुंची थीं । तथ्य के निष्कर्ष में यह भी अभिलिखित किया है कि अपराध करने वाला यान बीमा पालिसी सहित विधिमान्य दस्तावेजों से अंतर्निहित था और यान के चालक के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति थी । अधिकरण ने उपर्युक्त उल्लिखित इस न्यायालय के समक्ष उद्भूत की गई अपीलार्थी की दलील पर भी विचार किया है किंतु माननीय उच्चतम न्यायालय के **यूनाइटेड इंडिया कंपनी लि.** बनाम **के. एम. पूनम और अन्य**[1] वाले मामले के निर्णय का अवलंब लेते हुए उक्त दलील को खारिज कर दिया था । अधिकरण ने 74,150/- रुपए की धनराशि का संगणित अधिनिर्णय किया । अधिनिर्णय की मात्रा के संबंध में इस न्यायालय के समक्ष कोई विवाद नहीं है किंतु विवाद केवल प्रतिकर संदाय करने के लिए बीमा कंपनी के दायित्व के संबंध में है । अपीलार्थी बीमा कंपनी का पक्षकथन यह है कि बीमा कंपनी मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अधीन प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी नहीं है और उसके स्थान पर अपराध करने वाले यान का स्वामी अधिनिर्णीत धनराशि संदाय करने के लिए दायी है ।

7. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा **यूनाइटेड इंडियन इंश्योरेंस कंपनी लि.** बनाम **सुजाता अरोड़ा और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले का प्रबलता से अवलंब लिया गया है, इसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां अधिकरण ने यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि यदि सुसंगत समय पर यान को चलाने वाले व्यक्ति के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी तो यह बीमा पालिसी के निबंधनों और शर्तों का उल्लंघन करने के समान होता है और इसलिए, बीमा कंपनी पर कोई दायित्व अधिरोपित नहीं

---

[1] जे. टी. 2011 (3) एस. सी. 149.

किया जा सकता है । आक्षेपित अधिनिर्णय में, अधिकरण ने यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि अपराध करने वाले यान के चालक की चालन अनुज्ञप्ति को साक्ष्य में फाइल किया गया है जिससे यह सिद्ध होता है कि चालन अनुज्ञप्ति, तारीख 12 अप्रैल, 2012 से 11 फरवरी, 2014 तक प्रभावी थी जबकि दुर्घटना तारीख 5 अक्तूबर, 2013 को घटी थी और इस प्रकार, दुर्घटना की तारीख और समय पर, अपराध करने वाले यान के चालक की चालन अनुज्ञप्ति, विधिमान्य और प्रभावी थी और अपीलार्थी बीमा कंपनी द्वारा कोई प्रतिकूल साक्ष्य फाइल नहीं किया जा सका है । इस प्रकार, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिए गए निर्णय, वर्तमान मामले के तथ्यों में अपीलार्थी के मामले का समर्थन नहीं करते हैं ।

8. जहां तक अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल के निवेदन का संबंध अधिनिर्णीत धनराशि का संदाय करने के लिए बीमा कंपनी के विवादित दायित्व से है, मेरा यह निष्कर्ष है कि यह संपूर्ण रूप से निर्विवाद है कि अपराध करने वाले यान की बैठने की अधिकृत क्षमता 6 थी जब कि इस यान में 17 यात्री यात्रा कर रहे थे किंतु बीमा कंपनी अपराध करने वाले यान में यात्रा करने वाले यात्रियों की अधिकृत संख्या के संबंध में प्रतिकर संदाय करने के अपने दायित्व से बच सकती है । आक्षेपित अधिनिर्णय का वह भाग जिसमें छह व्यक्तियों से अधिक के बारे में अधिनिर्णय अर्थात् जिसमें अपराध करने वाले यान में बैठने की अधिकृत क्षमता से अधिक व्यक्तियों के संबंध में प्रतिकर का अधिनिर्णय किया जा सकता है, अपीलार्थी-बीमा कम्पनी को उसे यान के स्वामी से वसूल करने का अधिकार दिया गया है ।

9. आक्षेपित अधिनिर्णय में अधिकरण द्वारा अपनाए गए मत का, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लि.** बनाम **के. एम. पूनम और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि से समर्थन मिलता है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "20. मृतक तृतीय पक्षकार के लिए बीमाकर्ताओं के दायित्व के संबंध में विधि या मोटर यानों के अंतर्वलित अनेक प्रकारों की दुर्घटनाओं में हुई क्षति इसमें ऊपर उल्लिखित को निर्दिष्ट करते हुए इस न्यायालय के कई विनिश्चयों में स्पष्ट किया गया है । तृतीय पक्षकार के जोखिम का प्रकार यह है कि हम इस न्यायालय से संबंधित बीमा करार निष्पादित करने में और बीमाकर्ता और बीमाकृत

के बीच अन्तर्विष्ट शर्तों के तात्पर्यित भंग को सम्मिलित करते हैं ।

21. बलजीत कौर वाले मामले में किए गए विनिश्चय से जिसको बाद में अंजना वाले मामले में भी उच्चारित किया है जिससे यह प्रकट होता है कि बीमा पालिसी विधिमान्य किए जाने के लिए मोटर यान अधिनियम, 1988 के अध्याय XI की अपेक्षाओं के साथ स्वीकार करना होगा जो पर-व्यक्ति जोखिम विरुद्ध मोटर यानों के बीमा के साथ व्यवहार करता है । अधिनियम की धारा 146 यह अनुबंध करती है कि कोई भी व्यक्ति सार्वजनिक स्थान में मोटर यान का उपयोग यात्री से भिन्न रूप में तभी करेगा या किसी अन्य व्यक्ति से तभी कराएगा या उसे करने देगा तब, यथास्थिति, उस व्यक्ति या उस अन्य व्यक्ति द्वारा उस यान के उपयोग के संबंध में ऐसी बीमा पालिसी प्रवृत्त है जो इस अध्याय की अपेक्षाओं के अनुपालन में है, अन्यथा नहीं । अधिनियम की धारा 147 और धारा 146 के उपबंधों का एक विस्तार है और इसमें पालिसियों की अपेक्षाओं और उनके दायित्व की सीमा का वर्णन करती है । धारा 147(1)(क) यह उपबंध करती है कि बीमा पालिसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जारी की जानी चाहिए जो एक प्राधिकृत बीमाकर्ता है । धारा (1)(ख) यह उपबंध करती है कि बीमा पालिसी ऐसी पालिसी होनी चाहिए जो पालिसी में विनिर्दिष्ट व्यक्ति या व्यक्तियों का वर्ग उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट विस्तार तक के लिए बीमा करती है । धारा 147 की उपधारा (2) यह उपदर्शित करती है कि उपधारा (1) के परन्तुक के अधीन रहते हुए, जिसमें कतिपय विनिर्दिष्ट मामलों में बीमाकर्ता के दायित्व नहीं आते हैं, किसी बीमा पालिसी के अंतर्गत अन्य बातों के साथ, उपगत दायित्व की राशि के लिए किसी दुर्घटना की बाबत उपगत कोई दायित्व इसमें विनिर्दिष्ट होना चाहिए ।

22. बीमाकर्ता का दायित्व नियत करने के उद्देश्य से, धारा 147 के उपबंध अधिनियम की धारा 149 के साथ पढ़े जाने हैं जिसका संतोषजनक निर्णय के लिए बीमाकर्ता के कर्तव्य का संबंध है और पर-व्यक्ति जोखिमों की बीमाकृत व्यक्ति के विरुद्ध निर्णय करती है । यद्यपि, बीमा कंपनी की ओर से, यह दलील दी गई है कि इसमें कोई पर-व्यक्ति जोखिम दुर्घटना में अन्तर्वलित नहीं थे और मनहूस यान में यात्रा करने वाले व्यक्ति निःशुल्क यात्री थे, बीमा कंपनी इस तथ्य से बच नहीं सकती है कि यान छह व्यक्तियों को ले जाने के लिए

बीमाकृत था और बीमा कंपनी को दायित्व यान के ठेकेदारों के कम से कम छह से अधिक सीमा तक जिसमें चालक भी सम्मिलित है को प्रतिकर का संदाय करना था ।

23. मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 149 की उपधारा (1) स्पष्ट रूप से यह साफ कर देती है कि जब एक बार कोई बीमा प्रमाणपत्र धारा 147 की उपधारा (3) के अधीन जारी कर दिया जाता है तो इस बात के होते हुए भी कि बीमाकर्ता पालिसी को शून्य करने या रद्द करने का हकदार है, उसे डिक्री का फायदा उठाने के हकदार व्यक्ति को, उस दायित्व के संबंध में उसके अधीन देय राशि, जो बीमाकर्ता राशि से अधिक न होगी, खर्चों की बाबत देय किसी रकम तथा निर्णयों पर ब्याज संबंधी किसी अधिनियमिति के आधार पर उस राशि पर ब्याज की बाबत देय किसी धनराशि सहित इस प्रकार देगा मानो वह निर्णीतऋणी हो । तथापि, उपधारा (2), निर्णयों या अधिनिर्णयों की बाबत उपधारा (1) के अधीन बीमाकर्ता द्वारा किसी रकम के संदाय को तब तक रोका जा सकता है जब तक बीमाकर्ता को उन कार्यवाहियों में नोटिस न दी गई हों जिसमें उक्त निर्णय या अधिनिर्णय दिया गया है और कोई बीमाकर्ता जिसे ऐसा नोटिस दिया गया है उसका पक्षकार बनने का हकदार होगा और इसमें उसे पालिसी की विनिर्दिष्ट शर्त को भंग करने में अंतर्वलित प्रगणित आधारों पर की गई कार्रवाई की प्रतिरक्षा करने का हक होगा ।

24. इस प्रकार, बीमाकर्ता का दायित्व बीमा पालिसी के अंतर्गत आने वाले व्यक्तियों की संख्या को परिरुद्ध करता है और जो उससे परे नहीं है । दूसरे शब्दों में वर्तमान मामले में, चूंकि प्रश्नगत यान के अंतर्गत छह पट्टेदार जिसमें चालक भी सम्मिलित है, यान के स्वामी की बीमा पालिसी, इस बात के होते हुए भी बीमाकर्ता के दायित्व को केवल छह व्यक्तियों को परिरुद्ध करेगी जिस यान में सवार व्यक्तियों की संख्या बहुत अधिक थी । ऐसे अधिक व्यक्तियों की संख्या को पर-व्यक्तियों के रूप में समझा जाना चाहिए परन्तु उनके लिए पालिसी में किस्त को संदत्त नहीं किया गया था, बीमाकर्ता प्रतिकर धनराशि का संदाय करने के लिए दायी नहीं होगा जहां तक उनसे संबंधित है । तथापि, व्यक्तियों की बाबत भी संदाय करने का बीमा कंपनी का दायित्व अधिनियम की धारा 149 की उपधारा (1) के उपबंधों के अधीन निरन्तर बीमा पालिसी के अंतर्गत

नहीं आते हैं क्योंकि वह उससे वसूल करने के हकदार होंगे यदि यह साबित हो जाता है कि पालिसी की शर्तों में से एक यान के स्वामी द्वारा उपवर्जित करती है । तत्काल मामले में, यान में यात्रा करने वाले व्यक्तियों में से किसी को भी छह यात्रियों से अधिक की अनुमति नहीं थी यदि यान के स्वामी से प्रतिकर लेने का हकदार अभिनिर्धारित किया जाता है, तो वह बीमाकर्ता से प्रतिकर धनराशि प्राप्त करने का हकदार बना रहेगा, जिसे वह यान के बीमाकृत स्वामी से बाद में वसूल सकता है ।

25. जैसाकि इसमें ऊपर उल्लिखित किया गया है, तत्काल मामले में, यान के स्वामी द्वारा ली गई बीमा पालिसी प्रश्नगत यान में यात्रा कर रहे यात्री जिसमें यान का चालक भी सम्मिलित है, छह यात्रियों की बाबत थी । छह यात्रियों से अधिक अन्य यात्रियों के संदाय का दायित्व यह होगा कि यान का स्वामी जो क्षति का प्रतिकर या अधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत प्रतिकर को बढ़ाने के लिए मृतक के कुटुंब के लिए अपेक्षित होगा ।

26. निष्कर्ष निकालते हुए कि प्रतिकर संदाय के लिए बीमा कंपनी का दायित्व केवल यान के अंदर यात्रा करने वाले छह यात्रियों के लिए सीमित था और कि अन्य यात्रियों के संदाय का दायित्व यान के स्वामी का था, इस मामले में, हमने कुछ समस्या का सामना किया है क्योंकि अंजना श्याम वाला मामला सामने आया था । व्यक्तियों की संख्या से अधिक होने के लिए प्रतिकर किया जाना है जो प्रश्नगत यान में यात्रियों को ले जाने की विधिमान्यता हो सकती है । जो संदत्त किए जाने की धनराशि के अनुपात में से एक उद्भूत होती है । चूंकि इसमें पांच यात्रियों जिसमें चालक सम्मिलित नहीं है, की पहचान के लिए पद्धति को उठाया और चुना नहीं जा सकता है जिसकी बाबत प्रतिकर को बीमा कंपनी द्वारा संदत्त करना होगा, न्याय के उद्देश्य को पूरा करने के लिए हम बलजीत कौर वाले मामले में अंगीकृत की गई प्रक्रिया को लागू कर सकते हैं और प्रत्यक्ष रूप से कि बीमा कंपनी को सभी दावेदारों के लिए अधिनिर्णीत प्रतिकर की संपूर्ण राशि जमा करनी चाहिए और ऐसी जमा की गई धनराशि उनके दावे की बाबत दावेदारों में वितरित की जानी चाहिए, बीमा कंपनी को यह स्वतंत्रता होगी कि वह उनके द्वारा संदत्त धनराशि को वसूल करे और यान के स्वामी से बीमा पालिसी के अंतर्गत आने वाले व्यक्तियों की बाबत उपरोक्त प्रतिकर धनराशि संदेय करे जैसाकि

बलजीत कौर वाले मामले में निदेशित किया गया है ।

27. दूसरे शब्दों में, अपीलार्थी बीमा कंपनी इस आदेश की तारीख से दो माह के भीतर अधिनिर्णीयों के पक्ष में अधिनिर्णीत धनराशि की कुल राशि अधिकरण में जमा करेगी और उसे उन दावेदारों के दावों की संतुष्टि के लिए उपयोग किया जाए जो व्यक्ति ऐसी बीमा पालिसी के अन्तर्गत नहीं आते हैं । बीमा कंपनी यान के स्वामी से निष्पादन में डिक्री को रखते हुए अपने दायित्व से अधिक संदत्त की गई धनराशि वसूल करने की हकदार होगी । पूर्वोक्त प्रयोजन के लिए, छह अधिनिर्णयों की कुल राशि जिसमें वह अधिकतम है बीमा कंपनी के दायित्व के रूप में यह अर्थ लगाना होगा । इस आदेश के निबंधनों में जमा की गई सभी अधिनिर्णयों की कुल धनराशि से उक्त राशि काटने के बाद, बीमा कंपनी यान के स्वामी से बाकी राशि वसूल करने की हकदार होगी क्योंकि यदि इसमें अधिकरण द्वारा बीमा कंपनी के पक्ष में कोई धनराशि डिक्री की गई है । बीमा कंपनी को यान के स्वामी से अपने दायित्व से अधिक संदत्त धनराशि वसूल करने के लिए इस संबंध में कोई पृथक् वाद फाइल करने की आवश्यकता नहीं होगी ।"

10. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, मैं इस अपील में कोई गुणागुण नहीं पाता हूं । परिणामतः, यह अपील असफल होती है और तद्द्वारा खारिज की जाती है ।

11. इस न्यायालय के समक्ष जमा की धनराशि, समायोजित करने के लिए संबंधित अधिकरण को वापस भेजी जाएगी ।

अपील खारिज की गई ।

मही./क.

ब्रह्म पाल और अन्य

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 4 अक्तूबर, 2016

न्यायमूर्ति तरुण अग्रवाल और न्यायमूर्ति विपिन सिन्हा

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 4, 6, 5क और 17] – रिट – राज्य सरकार द्वारा अत्यावश्यकता खण्ड के अधीन लोक प्रयोजनार्थ भूमि अधिग्रहण करने के लिए अधिसूचना जारी किया जाना – अधिग्रहण के पूर्व अपेक्षित जांच नहीं कराना – सम्बन्धित भूमि स्वामियों को उचित और पर्याप्त प्रतिकर संदत्त करना और उनके द्वारा उसे स्वीकार करना – अधिसूचना को चुनौती दिया जाना – यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि राज्य सरकार ने भूमि अधिग्रहण के पूर्व अपेक्षित जांच नहीं कराई है जो कानूनन आज्ञापक है तो अधिसूचना रद्द किए जाने योग्य होगी परन्तु यदि यह साबित कर दिया जाता है कि सम्बन्धित भूमि को अत्यावश्यकता खण्ड के अधीन अधिगृहीत किया गया है और सम्बन्धित भूमि स्वामियों को पर्याप्त, उचित और ऋजु प्रतिकर का संदाय कर दिया गया है और उन्होंने उसे स्वीकार भी कर लिया है तो साम्या के संतुलन और भूमि स्वामियों के संरक्षण को ध्यान में रखते हुए, ऐसी अधिसूचना को रद्द करने के बजाय मध्य का रास्ता अपनाते हुए इसे विधिमान्य ठहराया जा सकता है ।

वर्तमान मामले में के मुख्य तथ्य ये हैं कि राज्य सरकार द्वारा भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 4(1) के अधीन तारीख 12 मार्च, 2008 की अधिसूचना जारी की थी, यह अधिसूचित करते हुए कि अनुसूची में उल्लिखित भूमि, लोक प्रयोजन अर्थात् ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण के माध्यम से गौतम बुद्ध नगर में योजनाबद्ध औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक है । अधिसूचना में यह भी उपदर्शित था कि अधिनियम, 1894 की धारा 17 की उपधारा (1) के उपबंध भी लागू होंगे, क्योंकि भूमि, योजनाबद्ध औद्योगिक विकास के लिए अति-आवश्यक रूप से अपेक्षित थी और इसलिए, अधिनियम, 1894 की धारा 5क के अधीन जांच में कारित विलम्ब को माफ करना आवश्यक है । अधिसूचना में यह

उपदर्शित था कि अधिनियम, 1894 की धारा 5क के उपबंध लागू नहीं होंगे और उक्त उपबंध के अधीन जांच को बन्द कर देना होगा । इसलिए, राज्य सरकार ने अधिनियम, 1894 की धारा 6 के अधीन तारीख 30 जून, 2008 की घोषणा जारी करने की कार्यवाही की और यह समाधान होने पर कि मामला, अति-आवश्यक में से एक था इसलिए, कलक्टर को प्रश्नगत भूमि का कब्जा लेने का निर्देश दिया गया था । तारीख 12 मार्च, 2008 और तारीख 30 जून, 2008 की अधिसूचनाओं को चुनौती देते हुए, कई रिट याचिकाएं फाइल की गई थीं । 2008 की रिट याचिका सं. 45777, हरिश चन्द्र और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य वाला मामला इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ के समक्ष विचार के लिए लाया गया था । न्यायालय ने तारीख 25 नवम्बर, 2008 के निर्णय द्वारा इस रिट याचिका को खारिज कर दिया और अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन जारी अधिसूचनाओं को कायम रखा, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि भूमि, अति-आवश्यक रूप से अपेक्षित थी और भूमि अर्जित करने के लिए न्यायोचित कारण थे । उसी ग्राम पटवारी की रिट याचिकाओं का एक अन्य समूह विचार के लिए इस न्यायालय के एक अन्य खंड न्यायपीठ के समक्ष लाया गया जो 2009 की रिट याचिका सं. 17068, हरकरन सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य वाला मुख्य मामला था । रिट याचिकाओं के इन समूहों को तारीख 19 जुलाई, 2011 के निर्णय द्वारा मंजूर कर लिया गया था और अधिनियम, 1894 की धारा 4 के अधीन जारी तारीख 12 मार्च, 2008 की अधिसूचना और अधिनियम, 1894 की धारा 6 के अधीन किए गए तारीख 30 जून, 2008 की उद्घोषणा को अभिखंडित कर दिया गया था । खंड न्यायपीठ ने यह भी निर्देश दिया था भूमि का कब्जा वापस भूमि स्वामियों को दिया जाए । इस प्रक्रम पर, यह भी उल्लिखित किया जाता है कि याची ब्रह्म पाल ने भी अन्यों के साथ अर्जन कार्यवाहियों को चुनौती देते हुए 2010 की रिट याचिका सं. 2074 फाइल की थी, जिसे भी हरकरन सिंह की रिट याचिका के साथ जोड़ दिया गया था और तारीख 19 जुलाई, 2011 के सामान्य निर्णय द्वारा मंजूर कर लिया गया था । रिट याचिकाओं का तृतीय समूह गजराज और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य और उसी ग्राम पटवारी के अन्य साथी की रिट याचिकाएं तृतीय खंड न्यायपीठ के समक्ष विचार के लिए आईं । इस खंड न्यायपीठ ने इस न्यायालय के दो विभिन्न खंड न्यायपीठों द्वारा अभिव्यक्त दो विरोधाभासी मतों का उल्लेख किया । इस खंड न्यायपीठ ने तारीख 26

जुलाई, 2011 को एक आदेश पारित किया, यह मत अभिव्यक्त करते हुए कि मामले को हल करने के लिए एक बृहत्तर न्यायपीठ गठित किया जाना अपेक्षित है । खंड न्यायपीठ के उपर्युक्त आदेश के आधार पर, मुख्य न्यायाधीश द्वारा मामले को तीन न्यायाधीशों की एक पूर्ण पीठ को निर्दिष्ट कर दिया गया था । पूर्ण न्यायपीठ ने विचार के लिए कम से कम 17 विवाद्यक विरचित किए । वर्तमान संविवाद पर विचार करने के लिए सुसंगत विवाद्यक, विवाद्यक सं. 5, 10, 16 और 17 हैं । अधिनियम, 1894 की धारा 17(1) और 17(4) के अधीन अति-आवश्यक खंड का अवलंब लेने के मुद्दे पर, पूर्ण न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि राज्य सरकार द्वारा अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेते हुए, अधिनियम, 1894 की धारा 5क के अधीन जांच छोड़ दी थी जबकि अधिनियम, 1894 की धारा 4 के अधीन अधिसूचना जारी करना दूषित था । पूर्ण न्यायपीठ ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि जांच छोड़ना अवैध होने के नाते सभी याची अधिनियम, 1894 की धारा 5 के अधीन आक्षेपों को फाइल करने के लिए अवसर पाने के हकदार हैं । अधिनियम, 1894 की धारा 11क को ध्यान में रखते हुए, अर्जन कार्यवाहियों के व्यपगत होने के प्रश्न पर, पूर्ण न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि भूमि अर्जन कार्यवाहियां, सतेन्द्र प्रसाद जैन बनाम उत्तर प्रदेश राज्य वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए, व्यपगत नहीं होती हैं जिसे अब भी प्रभावी अभिनिर्धारित किया । पूर्ण न्यायपीठ ने यह सुस्पष्टतः अभिनिर्धारित किया कि हरिश चन्द्र वाले मामले के विनिश्चय को अनुमोदित नहीं किया जा सकता है और हरकरन सिंह वाले मामले में विनिश्चय का अनुसरण किया जाना चाहिए, अर्थात् यह कि अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेना न्यायोचित नहीं था । भूमि स्वामियों ने गजराज और अन्य वाले मामले में पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय के विरुद्ध माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत याचिका, 2015 की सिविल अपील सं. 4506, सावित्री देवी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य तथा अन्य साथियों ने भी अपीलें फाइल की थीं । माननीय उच्चतम न्यायालय ने गजराज वाले मामले में, पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय की पुष्टि करते हुए, तारीख 14 मई, 2015 के निर्णय द्वारा सावित्री देवी वाले मामले में भूमि-स्वामियों की अपीलों का निपटारा किया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने भूमि स्वामियों के इस अभिवाक् को स्वीकार कर लिया था कि अधिनियम, 1894 की धारा 17 में अन्तर्विष्ट

अति-आवश्यक खंड का अवंलब लेना, अननुज्ञेय और अनधिकृत था । इसी समय पर, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि उच्च न्यायालय यह उल्लिखित करने के पश्चात् कि कई ग्रामों में भूमि का कब्जा ले लिया गया था और सारवान् विकास कार्य कर दिए गए थे और कुछ मामलों में प्रतिकर भी संदत्त कर दिए गए थे, इसलिए, उच्च न्यायालय ने अधिसूचना अभिखंडित करने के बजाय दोनों पक्षकारों में साम्या का संतुलन बनाने के प्रयास में बीच का रास्ता अपनाया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि उच्च न्यायालय ने अधिसूचना अभिखंडित करने के बजाय प्रतिकर में बढ़ोतरी कर दी थी और 10 प्रतिशत की सीमा तक विकसित आबादी भूमि को आबंटित करने का भी निर्देश दिया था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने मामले का विश्लेषण करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि पूर्ण न्यायपीठ यह अभिनिर्धारित करने में न्यायोचित था कि अधिनियम, 1894 की धारा 17 में अन्तर्विष्ट आपात खंड का अवलंब लेना अननुज्ञेय और अनावश्यक था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय ने अधिसूचना अभिखंडित करने के बजाय बीच का रास्ता अपनाया और समस्या का समाधान निकालने में लम्बा रास्ता तय किया और इस तरीके से साम्या का संतुलन बनाया जो भूमि स्वामियों के पक्ष में था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय ने आधारभूत वास्तविकताओं पर सही ही विचार किया है और अधिसूचनाओं को अभिखंडित करने के बजाय भूमि स्वामियों को अतिरिक्त प्रतिकर मंजूर करने के साथ ही विकसित आबादी भूमि का आबंटन करते हुए, पर्याप्त प्रतिकर द्वारा मामले में यथार्थ और व्यवहारिक समाधान निकाला । तद्नुसार, माननीय उच्चतम न्यायालय ने गजराज वाले मामले में पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया था । ग्रेटर नोएडा ने माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत याचिका फाइल करते हुए, हरकरन सिंह वाले मामले में, तारीख 19 जुलाई, 2011 को दिए गए निर्णय को चुनौती दी साथ ही गजराज वाले मामले में, अर्थात् 2012 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 19301, ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण बनाम प्रमोद और अन्य तथा अन्य साथियों की अपीलों में, तारीख 21 अक्तूबर, 2011 को पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय को भी चुनौती दी । माननीय उच्चतम न्यायालय ने पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय की पुष्टि करते हुए, तारीख 3 फरवरी, 2015 के निर्णय द्वारा विशेष इजाजत याचिका का निपटारा किया, यह अभिनिर्धारित

करते हुए कि विशिष्ट तथ्यों में, उच्च न्यायालय, अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन प्राधिकरण द्वारा जारी अधिसूचनाओं को कायम रखते हुए, भूमि स्वामियों को विकसित भूमि का 10 प्रतिशत भूमि आबंटित करने में न्यायोचित था । न्यायालय द्वारा सभी रिट याचिकाओं को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – निःसंदेह, पूर्ण न्यायपीठ ने हरकरन सिंह वाले मामले में खंड न्यायपीठ के विनिश्चय को अनुमोदित किया था किन्तु, सम्पूर्ण निर्णय को अनुमोदित नहीं किया था । पूर्ण न्यायपीठ ने हरकरन सिंह वाले मामले के विनिश्चय को मात्र उस सीमा तक अनुमोदित किया था जहां तक कि यह अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेने से संबंधित था । पूर्ण न्यायपीठ ने विवाद्यक सं. 5 पर विचार करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया कि राज्य सरकार द्वारा अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेते हुए, अधिनियम, 1894 की धारा 5क के अधीन जांच करना छोड़ दिया गया था जबकि अधिनियम, 1894 की धारा 4 के अधीन अधिसूचना जारी करना दूषित था । जांच को छोड़ना अवैध होने के नाते, सभी याची अधिनियम, 1894 की धारा 5क के अधीन आक्षेप फाइल करने का अवसर पाने के हकदार हो गए थे । पूर्वोक्त निष्कर्ष निकालने के पश्चात्, पूर्ण न्यायपीठ ने परिणामतः, उस सीमा तक हरकरन सिंह वाले मामले को अनुमोदित कर दिया था । खंड न्यायपीठ ने हरकरन सिंह वाले मामले के विनिश्चय में अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन अधिसूचनाओं को अभिखंडित कर दिया था । तथापि, पूर्ण न्यायपीठ ने अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन अधिसूचनाओं को उस सीमा तक अभिखंडित नहीं किया, जहां तक यह ग्राम पटवारी से संबंधित था । पूर्ण न्यायपीठ ने अन्य कारकों अर्थात् कई ग्रामों की भूमि को कब्जे में लेने और उन पर सारभूत विकास कार्य करने पर विचार किया, इस तथ्य के अलावा कि बड़े पैमाने पर भूमि स्वामियों को प्रतिकर संदत्त कर दिया गया था । पूर्ण न्यायपीठ ने अधिसूचनाओं को अभिखंडित करने के बजाय दोनों पक्षों में साम्या का संतुलन बनाते हुए मध्य का रास्ता अपनाया और अधिसूचनाओं को अभिखंडित करने के बजाय, प्रतिकर में बढ़ोतरी कर दी और भूमि स्वामियों को विकसित भूमि में 10 प्रतिशत की सीमा तक आबंटित करने का निर्देश भी दिया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय की पुष्टि करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय अधिसूचनाओं को अभिखंडित नहीं करने में न्यायोचित था और मध्य का रास्ता अपनाने में भी

न्यायोचित था । न्यायालय का यह भी निष्कर्ष है कि हरकरन सिंह वाले मामले के विनिश्चय को माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष ग्रेटर नोएडा द्वारा ग्रेटर नोएडा बनाम प्रमोद और अन्य वाले मामले में चुनौती दी गई थी, जिसका निपटारा माननीय उच्चतम न्यायालय ने तारीख 3 फरवरी, 2015 के निर्णय द्वारा किया था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने गजराज वाले मामले में पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय के निबंधनों में विशेष इजाजत याचिका का निपटारा करते हुए, यह निष्कर्ष निकाला कि मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय मध्य का रास्ता अपनाने और भूमि स्वामियों को अतिरिक्त प्रतिकर का संदाय करने तथा विकसित भूमि का एक हिस्सा आबंटित करने में न्यायोचित था । हरकरन सिंह वाले मामले में उच्च न्यायालय के विनिश्चय को चुनौती देते हुए ग्रेटर नोएडा द्वारा फाइल की गई विशेष इजाजत याचिका का निपटारा पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय के निबंधनों में किया गया । इस प्रकार, हरकरन सिंह वाले मामले में खंड न्यायपीठ के विनिश्चय को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा ग्रेटर नोएडा बनाम प्रमोद और अन्य वाले मामले में दिए गए विनिश्चय में आमेलित कर दिया गया था । वस्तुतः, हरकरन सिंह वाले मामले में खंड न्यायपीठ के विनिश्चय को विवक्षितः उलट दिया गया था । ग्राम पटवारी से संबंधित गजराज वाले मामले में पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय को कायम रखा गया अर्थात् यह कि राज्य सरकार द्वारा अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेना अवैध था किन्तु अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन जारी अधिसूचनाएं उस कारण से अधिसूचित नहीं होंगी अपितु इन्हें अतिरिक्त प्रतिकर का संदाय करते हुए और 10 प्रतिशत की सीमा तक विकसित आबादी भूमि का आबंटन करते हुए, कायम रखा गया था । याची के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा दी गई इस दलील को कि हरकरन सिंह वाले मामले के विनिश्चय की पूर्ण न्यायपीठ द्वारा और माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पुष्टि कर दी गई थी, भ्रांतिपूर्ण है और इसे कायम नहीं रखा जा सकता है । याचियों द्वारा उद्भूत यह दलील कि अधिनिर्णय पुराने अधिनियम के अधीन दिया गया है, प्रत्यक्षतः भ्रांतिपूर्ण है । अधिनिर्णय के परिशीलन से न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि प्रतिकर का अवधारण, अधिनियम, 2013 के उपबंधों के अनुसरण में किया गया है । अधिनिर्णय में पुराने अधिनियम का मात्र संदर्भ देने का अभिप्राय यह नहीं है कि अधिनिर्णय पुराने अधिनियम के अधीन किया गया है । न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि प्रतिकर का अवधारण, अधिनियम, 2013 की धारा 24 और

25 के अनुसरण में किया गया है । इस कारण से याची द्वारा उद्भूत दलील प्रत्यक्षतः भ्रांतिपूर्ण और नामंजूर की जाती है । एक कमजोर प्रयास यह किया गया था कि अधिनिर्णय दो वर्षों के पश्चात् दिया गया था और पुराने अधिनियम की धारा 11क को ध्यान में रखते हुए अधिनिर्णय दूषित हो जाता है । स्वीकृततः, अधिनियम, 1894 की धारा 17(1) का अवलंब लिया गया था और कब्जा लिया गया था । गजराज वाले मामले में पूर्ण न्यायपीठ ने इस प्रश्न पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि अधिनियम, 1894 की धारा 17 का अवलंब लेने को ध्यान में रखते हुए, अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत नहीं हुई हैं और यह कि सतेन्द्र प्रसाद जैन वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय में इसे कायम रखा गया है । इस प्रकार, याची पुनः उस विवाद्यक को उद्भूत नहीं कर सकता है जिस पर पूर्ण न्यायपीठ द्वारा पहले ही विचार किया जा चुका है । किसी भी दशा में न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि सावित्री देवी वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित तारीख 14 मई, 2015 के विनिश्चय के अनुसरण में आक्षेपित अधिनिर्णय तत्काल ही तारीख 10 जुलाई, 2015 को दिया गया था । न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अधिनिर्णय में कोई अवैधता नहीं है न ही याचियों द्वारा दिए गए आधारों पर इसे अभिखंडित किया जा सकता है । (पैरा 22, 23, 24, 25, 26 और 27)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2015]	विनिश्चित तारीख 3 फरवरी, 2015 : **ग्रेटर नोएडा** बनाम **प्रमोद और अन्य** ;	24
[2011]	2011 की रिट याचिका सं. 37443 : **गजराज और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	5
[1993]	(1993) 4 एस. सी. सी. 369 : **सतेन्द्र प्रसाद जैन** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ।	7

आरम्भिक (सिविल रिट) अधिकारिता : **2016 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 22910, 45897, 36970, 15796, 22897, 22899, 22906, 29297, 31961, 22901, 31345, 22309 और 30347.**

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याचियों की ओर से सर्वश्री कृष्ण कांत, शशि नन्दन और शिव कांत मिश्रा, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री रविन्द्र कुमार, रमेन्द्र प्रताप सिंह और अंजली उपाध्याय, केन्द्रीय स्थायी काउंसेल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति तरुण अग्रवाल ने दिया ।

न्या. अग्रवाल – रिट याचिकाओं के इस समूह में याचियों ने विभिन्न आधारों पर अधिनिर्णय को अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना की है, चूंकि विनिश्चित किए जाने वाले विवाद्यक सामान्य हैं इसलिए, इन सभी रिट याचिकाओं का एक साथ विनिश्चय किया जाना है । सुविधा के लिए 2016 की रिट याचिका सं. 22910 के तथ्य विचार में लिए जाते हैं ।

2. 2016 की रिट याचिका सं. 22910 में याची ब्रह्म पाल ने अपर जिला मजिस्ट्रेट (भूमि अर्जन), जिला गौतमबुद्ध नगर द्वारा राजस्व ग्राम पटवारी, परगना और तहसील-दादरी, जिला गौतम बुद्ध नगर में स्थित खसरा सं. 1092/1356, क्षेत्रफल 0.2960 हेक्टेयर, खसरा सं. 1149 क्षेत्रफल 0.1190 हेक्टेयर और खसरा सं. 1187 क्षेत्रफल 0.2160 के बारे में पारित तारीख 10 जुलाई, 2015 के अधिनिर्णय की विधिमान्यता और वैधता को प्रश्नगत करते हुए वर्तमान रिट याचिका फाइल की है । याची ने ग्राम पटवारी की भूमि के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा किए गए पारिणामिक कार्रवाई को अभिखंडित करने के लिए भी प्रार्थना की है और प्रश्नगत भूमि की प्रकृति और कब्जे में परिवर्तन नहीं करने के लिए प्रत्यर्थियों को समादेश देते हुए, परमादेश की रिट जारी करने के लिए भी प्रार्थना की है ।

3. रिट याचिका फाइल करने के मुख्य तथ्य यह हैं कि राज्य सरकार द्वारा भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम, 1894" कहा गया है) की धारा 4(1) के अधीन तारीख 12 मार्च, 2008 की अधिसूचना जारी की थी, यह अधिसूचित करते हुए कि अनुसूची में उल्लिखित भूमि लोक प्रयोजन अर्थात् ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण के माध्यम से गौतम बुद्ध नगर में योजनाबद्ध औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक है । अधिसूचना में यह भी उपदर्शित था कि अधिनियम, 1894 की धारा 17 की उपधारा (1) के उपबंध भी लागू होंगे, क्योंकि

भूमि, योजनाबद्ध औद्योगिक विकास के लिए अति-आवश्यक रूप से अपेक्षित थी और इसलिए अधिनियम, 1894 की धारा 5क के अधीन जांच में कारित विलम्ब को माफ करना आवश्यक है । अधिसूचना में यह उपदर्शित था कि अधिनियम, 1894 की धारा 5क के उपबंध लागू नहीं होंगे और उक्त उपबंध के अधीन जांच को बन्द कर देना होगा । इसलिए, राज्य सरकार ने अधिनियम, 1894 की धारा 6 के अधीन तारीख 30 जून, 2008 की घोषणा जारी करने की कार्यवाही की और यह समाधान होने पर कि मामला अति-आवश्यक में से एक था, इसलिए, कलक्टर को प्रश्नगत भूमि का कब्जा लेने का निर्देश दिया गया था ।

4. तारीख 12 मार्च, 2008 और तारीख 30 जून, 2008 की अधिसूचनाओं को चुनौती देते हुए कई रिट याचिकाएं फाइल की गईं थीं । 2008 की रिट याचिका सं. 45777, हरिश चन्द्र और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य वाला मामला इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ के समक्ष विचार के लिए लाया गया था । न्यायालय ने तारीख 25 नवम्बर, 2008 के निर्णय द्वारा इस रिट याचिका को खारिज कर दिया और अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन जारी अधिसूचनाओं को कायम रखा, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि भूमि अति-आवश्यक रूप से अपेक्षित थी और भूमि अर्जित करने के लिए न्यायोचित कारण थे । उसी ग्राम पटवारी की रिट याचिकाओं का एक अन्य समूह विचार के लिए इस न्यायालय के एक अन्य खंड न्यायपीठ के समक्ष लाया गया जो 2009 की रिट याचिका सं. 17068, हरकरन सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य वाला मुख्य मामला था । रिट याचिकाओं के इन समूहों को तारीख 19 जुलाई, 2011 के निर्णय द्वारा मंजूर कर लिया गया था और अधिनियम, 1894 की धारा 4 के अधीन जारी तारीख 12 मार्च, 2008 की अधिसूचना और अधिनियम, 1894 की धारा 6 के अधीन किए गए तारीख 30 जून, 2008 की उद्घोषणा को अभिखंडित कर दिया गया था । खंड न्यायपीठ ने यह भी निर्देश दिया था कि भूमि का कब्जा वापस भूमि स्वामियों को दिया जाए । इस प्रक्रम पर, यह भी उल्लिखित किया जाता है कि याची ब्रह्म पाल ने भी अन्यों के साथ अर्जन कार्यवाहियों को चुनौती देते हुए 2010 की रिट याचिका सं. 2074 फाइल की थी, जिसे भी हरकरन सिंह की रिट याचिका के साथ जोड़ दिया गया था और तारीख 19 जुलाई, 2011 के सामान्य निर्णय द्वारा मंजूर कर लिए गया था ।

5. रिट याचिकाओं का तृतीय समूह **गजराज और अन्य** बनाम **उत्तर**

प्रदेश राज्य और अन्य[1] और उसी ग्राम पटवारी के अन्य साथी की रिट याचिकाएं तृतीय खंड न्यायपीठ के समक्ष विचार के लिए आईं । इस खंड न्यायपीठ ने इस न्यायालय के दो विभिन्न खंड न्यायपीठों द्वारा अभिव्यक्त दो विरोधाभासी मतों का उल्लेख किया । इस खंड न्यायपीठ ने तारीख 26 जुलाई, 2011 को एक आदेश पारित किया, यह मत अभिव्यक्त करते हुए कि मामले को हल करने के लिए एक बृहत्तर न्यायपीठ गठित किया जाना अपेक्षित है । खंड न्यायपीठ के उपर्युक्त आदेश के आधार पर मुख्य न्यायाधीश द्वारा मामले को तीन न्यायाधीशों की एक पूर्ण पीठ को निर्दिष्ट कर दिया गया था ।

6. पूर्ण न्यायपीठ ने विचार के लिए कम से कम 17 विवाद्यक विरचित किए । वर्तमान संविवाद पर विचार करने के लिए सुसंगत विवाद्यक, विवाद्यक सं. 5, 10, 16 और 17 हैं । अधिनियम, 1894 की धारा 17(1) और 17(4) के अधीन अति-आवश्यक खंड का अवलंब लेने के मुद्दे पर पूर्ण न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि राज्य सरकार द्वारा अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेते हुए, अधिनियम, 1894 की धारा 5क के अधीन जांच छोड़ दी थी जबकि अधिनियम, 1894 की धारा 4 के अधीन अधिसूचना जारी करना दूषित था । पूर्ण न्यायपीठ ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि जांच छोड़ना अवैध होने के नाते सभी याची अधिनियम, 1894 की धारा 5 के अधीन आक्षेपों को फाइल करने के लिए अवसर पाने के हकदार हैं ।

7. अधिनियम, 1894 की धारा 11क को ध्यान में रखते हुए अर्जन कार्यवाहियों के व्यपगत होने के प्रश्न पर पूर्ण न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि भूमि अर्जन कार्यवाहियां, **सतेन्द्र प्रसाद जैन** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए व्यपगत नहीं होती हैं जिसे अब भी प्रभावी अभिनिर्धारित किया ।

8. हरिश चन्द्र और हरकरन सिंह वाले मामलों में इस न्यायालय के दो खंड न्यायपीठों के विरोधाभासी मतों के प्रश्न पर पूर्ण न्यायपीठ ने मामले के सभी पहलुओं पर और इस विषय पर सुसंगत निर्णयज विधियों पर विचार करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि हरिश चन्द्र वाले मामले

---

[1] 2011 की रिट याचिका सं. 37443.

[2] (1993) 4 एस. सी. सी. 369.

में खंड न्यायपीठ के निर्णय को अनुमोदित नहीं किया जा सकता है और यह कि हरकरन सिंह वाले मामले में खंड न्यायपीठ के निर्णय का अनुसरण किया जाना अपेक्षित है । पूर्ण न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि :-

"हरकरन सिंह वाले मामले में खंड न्यायपीठ के निर्णय में आनन्द सिंह वाले मामले को निर्दिष्ट किया गया जिसमें नारायण सिंह गौते वाले मामले का अवलंब लिया गया था । हरकरन सिंह वाले मामले में खंड न्यायपीठ ने राधेश्याम वाले मामले का भी अवलंब लिया जो उन विवाद्यकों में पूर्ण रूप से लागू होते हैं जो वर्तमान मामले में उद्भूत हुए हैं । पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह मत है कि हरिश चन्द्र वाले मामले में खंड न्यायपीठ के निर्णय को अनुमोदित नहीं किया जा सकता है और हरकरन सिंह वाले मामले में खंड न्यायपीठ के निर्णय का अनुसरण किया जाना चाहिए ।"

और यह भी अभिनिर्धारित किया कि :-

"पूर्ववर्ती चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह मत है कि हरिश चन्द्र वाले मामले में खंड न्यायपीठ के निर्णय को अनुमोदित नहीं किया जा सकता है जबकि हरकरन सिंह वाले मामले में खंड न्यायपीठ के निर्णय में अपनाए गए इस मत का कि धारा 17(4) का अवलंब न्यायोचित नहीं था, अनुमोदित किया जाता है ।"

9. पूर्ण न्यायपीठ ने यह सुस्पष्टतः अभिनिर्धारित किया कि हरिश चन्द्र वाले मामले के विनिश्चय को अनुमोदित नहीं किया जा सकता है और हरकरन सिंह वाले मामले में विनिश्चय का अनुसरण किया जाना चाहिए, अर्थात् यह कि अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेना न्यायोचित नहीं था ।

10. यह अभिनिर्धारित करने के पश्चात् कि अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेना न्यायोचित नहीं था, पूर्ण न्यायपीठ ने अन्य कारकों अर्थात् तृतीय पक्षकार के अधिकारों, अर्जन के पश्चात् क्षेत्र का विकास इत्यादि पर विचार किया और निम्नलिखित अनुतोषों को प्रदान किया :-

"(1) ग्राम निथारी से संबंधित 2011 की रिट याचिका सं. 45933, 2011 की रिट याचिका सं. 47545, ग्राम सदरपुर से संबंधित 2011 की रिट याचिका सं. 47522, ग्राम खोड़ा से संबंधित

2011 की रिट याचिका सं. 45196, 2011 की रिट याचिका सं. 45208, 2011 की रिट याचिका सं. 45211, 2011 की रिट याचिका सं. 45213, 2011 की रिट याचिका सं. 45216, 2011 की रिट याचिका सं. 45223, 2011 की रिट याचिका सं. 45224, 2011 की रिट याचिका सं. 45226, 2011 की रिट याचिका सं. 45229, 2011 की रिट याचिका सं. 45230, 2011 की रिट याचिका सं. 45235, 2011 की रिट याचिका सं. 45238, 2011 की रिट याचिका सं. 45283, ग्राम सुल्तानपुर से संबंधित 2011 की रिट याचिका सं. 46764, 2011 की रिट याचिका सं. 46785, ग्राम चौरा सदतपुर से संबंधित 2011 की रिट याचिका सं. 46407 और ग्राम अलवेर्दीपुर से संबंधित 2011 की रिट याचिका सं. 46470 जो असम्यक् विलम्ब से फाइल की गई है, खारिज की जाती हैं ।

(2)(i) 40 समूहों (ग्राम देवला) की रिट याचिकाएं, 2011 की रिट याचिका सं. 31126, 2009 की रिट याचिका सं. 59131, 2010 की रिट याचिका सं. 22800, 2011 की रिट याचिका सं. 37118, 2009 की रिट याचिका सं. 42812, 2009 की रिट याचिका सं. 50417, 2009 की रिट याचिका सं. 54424, 2009 की रिट याचिका सं. 54652, 2009 की रिट याचिका सं. 55650, 2009 की रिट याचिका सं. 57032, 2009 की रिट याचिका सं. 58318, 2010 की रिट याचिका सं. 22798, 2010 की रिट याचिका सं. 37784, 2010 की रिट याचिका सं. 37787, 2011 की रिट याचिका सं. 31124, 2011 की रिट याचिका सं. 31125, 2011 की रिट याचिका सं. 32234, 2011 की रिट याचिका सं. 32987, 2011 की रिट याचिका सं. 35648, 2011 की रिट याचिका सं. 38059, 2011 की रिट याचिका सं. 41339, 2011 की रिट याचिका सं. 47427 और 2011 की रिट याचिका सं. 47412 मंजूर की जाती हैं और तारीख 26 मई, 2009 और तारीख 22 जून, 2009 की अधिसूचनाएं और सभी पारिणामिक कार्रवाई अभिखंडित की जाती हैं । याची, प्रतिकर जमा करने के अध्यधीन, जो उन्होंने प्राधिकारी/कलक्टर के समक्ष करार/अधिनिर्णय के अधीन प्राप्त किए थे, अपनी भूमि को पुनः वापस पाने के हकदार होंगे ।

(2)(ii) ग्राम युसूफपुर चक सहबेरी से संबंधित 2010 की रिट याचिका सं. 17725, ओमवीर और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य

(समूह 38) मंजूर की जाती है । तारीख 10 अप्रैल, 2006 और तारीख 6 सितम्बर, 2007 की अधिसूचनाएं और सभी पारिणामिक कार्रवाई अभिखंडित की जाती है । याची, प्रतिकर वापस करने के अध्यधीन, जो उन्होंने प्राधिकारी/कलक्टर के समक्ष करार/अधिनिर्णय के अधीन प्राप्त किए थे, अपनी भूमि को पुनः वापस पाने के हकदार होंगे ।

(2)(iii) ग्राम अस्दुल्लापुर से संबंधित समूह-42 की 2011 की रिट याचिका सं. 47486 (राजी और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) मंजूर की जाती है । तारीख 27 जनवरी, 2010 और तारीख 4 फरवरी, 2010 की अधिसूचना के साथ ही सभी पश्चात्वर्ती कार्यवाहियां अभिखंडित की जाती हैं । याची अपनी भूमि को वापस पाने के हकदार होंगे ।

(3) अन्य सभी रिट याचिकाएं उपर्युक्त उल्लिखित पैरा (1) और (2) के सिवाय निम्नलिखित निर्देशों के साथ निपटाई जाती हैं –

‘(क) याची उसी अनुपात की सीमा तक (अर्थात् 64.70 प्रतिशत) के अतिरिक्त प्रतिकर का संदाय पाने के हकदार होंगे, जैसा कि ग्राम पटवारी के लिए संदत्त किया गया था जिसे उन्होंने 1997 के नियम/अधिनिर्णय के अधीन अतिरिक्त प्रतिकर के रूप में प्राप्त किया था, जिसका संदाय प्राधिकारी द्वारा यथाशीघ्र तारीख पर सुनिश्चित किया जाएगा । प्राधिकारी को यह विनिश्चय लेने के लिए खुला होगा कि वह अतिरिक्त प्रतिकर का कौन सा अनुपात आबंटियों को संदत्त करने के लिए कहता है । वे याची जिन्हें अभी तक प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया है उन्हें प्रतिकर के ही साथ-साथ अतिरिक्त प्रतिकर का संदाय किया जा सकता है जैसा कि उपर्युक्त आदेशित है । अतिरिक्त प्रतिकर का संदाय, अधिनियम, 1894 की धारा 18 के अधीन भूमि स्वामियों के अधिकारों, यदि कोई हों, पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना किया जाएगा ।

(ख) सभी याची, विकसित आबादी भूखंड में से उनके अर्जित भूमि की 10 प्रतिशत सीमा तक के भूखंड 2500 वर्ग मीटर की अधिकतम सीमा के अध्यधीन आबंटन पाने के हकदार होंगे । तथापि, हम यह प्राधिकारी के लिए खुला छोड़ते हैं कि

वह उन मामलों में जहां 6 प्रतिशत या 8 प्रतिशत की सीमा तक आबादी भूखंड का आबंटन पहले ही किया जा चुका है, वहां वह या तो अतिशेष भूखंड का आबंटन करे अथवा विकसित आवासीय भूखंडों के आबंटन की औसत दर के अनुसार अतिशेष समतुल्य रकम का संदाय प्रतिकर के रूप में भूमि स्वामियों को कर सकता है ।'

(4) प्राधिकारी, यह भी विनिश्चय ले सकता है कि क्या अतिरिक्त प्रतिकर का फायदा और 10 प्रतिशत की सीमा तक आबादी भूखंडों का आबंटन भी किया जा सकता है;

(क) उन भूमि धारकों की जिनकी अधिसूचनाओं को चुनौती देते हुए पूर्ववर्ती रिट याचिकाएं, अधिसूचनाओं को कायम रखते हुए खारिज कर दी गई हैं, और

(ख) वे भूमि धारक जो न्यायालय में नहीं आए हैं, अधिसूचनाओं से संबंधित जो निर्देश सं. 3 पर उल्लिखित रिट याचिकाओं में चुनौती की विषयवस्तु हैं ।

(5) ग्रेटर नोएडा और इसके आबंटियों को विकास नहीं करने का निर्देश दिया जाता है और यह भी निर्देश दिया जाता है कि राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र योजना परिषद् की मताभिव्यक्तियों और निर्देशों को प्राप्त होने तक मास्टर प्लान, 2021 का प्रवर्तन नहीं करेंगे जो राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र योजना परिषद् का समाधान होने तक मास्टर प्लान, 2021 में निगमित हैं । हम यह स्पष्ट करते हैं कि यह निर्देश उन मामलों में लागू नहीं होंगे जहां विकास कार्य, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र योजना परिषद् द्वारा सम्यक् रूप से अनुमोदित ग्रेटर नोएडा के पूर्ववर्ती मास्टर प्लान के अनुसरण में किए गए हैं ।

(6) हम, राज्य के मुख्य सचिव को यह भी निर्देश देते हैं कि वे प्रधान सचिव के स्तर से निम्न नहीं (सिवाय औद्योगिक विकास विभाग के अधिकारियों जिन्होंने सुसंगत फाइलों से संबंधित कार्य किया है) को ऐसे अधिकारियों के रूप में नियुक्त करें जो ग्रेटर नोएडा के (क) एन. सी. आर. पी. बोर्ड के अनुमोदन के बिना मास्टर प्लान, 2021 के प्रवर्तन की कार्यवाहियों, (ख) भूमि उपयोग परिवर्तित करने के लिए विनिश्चय, (ग) बिल्डरों को किए गए आबंटन और (घ) भूमि अर्जन के लिए विभेदकारी प्रस्थापनों के कार्यों से संबंधित जांच

करेगा और इसके पश्चात् राज्य सरकार मामले में समुचित कार्रवाई करेगा ।"

11. **गजराज और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में तारीख 21 अक्तूबर, 2011 को पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय को 2011 (11) ए. डी. जे. 1 में रिपोर्ट किया जाता है ।

12. भूमि स्वामियों ने **गजराज और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय के विरुद्ध माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत याचिका, 2015 की सिविल अपील सं. 4506, सावित्री देवी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य तथा अन्य साथियों ने भी अपीलें फाइल की थीं । माननीय उच्चतम न्यायालय ने **गजराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में, पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय की पुष्टि करते हुए, तारीख 14 मई, 2015 के निर्णय द्वारा सावित्री देवी वाले मामले में भूमि स्वामियों की अपीलों का निपटारा किया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने भूमि स्वामियों के इस अभिवाक् को स्वीकार कर लिया था कि अधिनियम, 1894 की धारा 17 में अन्तर्विष्ट अति-आवश्यक खंड का अवलंब लेना, अननुज्ञेय और अनधिकृत था । इसी समय पर, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि उच्च न्यायालय यह उल्लिखित करने के पश्चात् कि कई ग्रामों में भूमि का कब्जा ले लिया गया था और सारवान् विकास कार्य कर दिए गए थे और कुछ मामलों में प्रतिकर भी संदत्त कर दिए गए थे, इसलिए, उच्च न्यायालय ने अधिसूचना अभिखंडित करने के बजाय दोनों पक्षकारों में साम्या का संतुलन बनाने के प्रयास में बीच का रास्ता अपनाया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि उच्च न्यायालय ने अधिसूचना अभिखंडित करने के बजाय प्रतिकर में बढ़ोतरी कर दी थी और 10 प्रतिशत की सीमा तक विकसित आबादी भूमि को आबंटित करने का भी निर्देश दिया था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने सावित्री देवी वाले मामले में निम्नलिखित मत व्यक्त किया है :–

"पूर्वोक्त से, यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय द्वारा 3 निर्देश जारी किए गए थे, अर्थात् (1) अस्पष्टीकृत विलम्ब से फाइल की गई रिट याचिकाओं को खारिज करना, (2) उन 3 ग्रामों के संबंध में अधिसूचना अभिखंडित करना, जहां विकास कार्य नहीं हुए थे और (3) उन अन्य ग्रामों के संबंध में भूमि अर्जन की कार्रवाई को

अभिखंडित करने के बजाय इस अभिवाक् को स्वीकार कर लिया था कि धारा 17 का गलत तौर पर अवलंब लिया गया था, इसलिए, प्रतिकर के साथ ही विकसित आबादी भूखंड के आबंटन के लिए हक की सीमा में बढ़ोतरी कर दी थी ।"

और यह भी मत व्यक्त किया था कि :-

"उपर्युक्त से यह स्पष्ट हो जाता है कि उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि चूंकि धारा 17(1) और 17(4) का अवलंब लेना अनावश्यक और अनधिकृत था, इसलिए, इसमें के अपीलार्थियों की भूमि का अर्जन अवैध था । इस बात के होते हुए भी, उसी उच्च न्यायालय ने सम्पूर्ण अर्जन को अपास्त करने का अनुतोष मंजूर नहीं किया था और अपीलार्थियों की भूमि वापस कर दी थी । पूर्वोक्त निष्कर्षों के पश्चात्, उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि जहां तक भूमि अर्जन कार्यवाहियों में भूमि स्वामियों के विशिष्ट अनुतोष को मंजूर करने का संबंध है, यह विभिन्न महत्वपूर्ण कारकों पर निर्भर करता है । इस प्रकार, 'अनुतोषों' के विवाद्यक पर पूर्वोक्त शीर्षक के अधीन विनिर्दिष्टतः और स्वतंत्र रूप से चर्चा की गई है । यहां उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि तृतीय पक्षकार के अधिकारों का सृजन, अधिनियम, 1894 की धारा 6 के अधीन किए गए घोषणा के पश्चात्, विवादित भूमि पर किए गए विकास कार्य के साथ ही भूमि स्वामियों द्वारा उठाए गए कदमों को इस प्रकार के अनुतोष का अवधारण करने के लिए सुसंगत होगा कि भूमि स्वामियों को क्या अनुतोष मंजूर किए जा सकते हैं । इन कार्यवाहियों के संदर्भ में, पूर्वोक्त पहलुओं पर चर्चा करते हुए, उच्च न्यायालय ने यह इंगित किया कि तृतीय पक्षकार के अधिकारों के अधिकतर मामले, धारा 6 के अधीन घोषणा जारी होने के पश्चात् सृजित हुए थे और भूमि का कब्जा लेने के पश्चात् सारवान् विकास कार्य जिनमें निर्माण सम्मिलित है, किए गए थे । इस प्रकार, उन मामलों में, जहां विकास कार्य किए गए थे और/अथवा तृतीय पक्षकार के अधिकार सृजित किए गए थे, उच्च न्यायालय अर्जन में हस्तक्षेप करना समुचित नहीं समझता था । इसी समय पर, साम्या के संतुलन के आदेश में, इन भूमि स्वामियों को उच्चतर प्रतिकर मंजूर करने और विकसित भूमि में बेहतर हिस्सा देने की बात महसूस करना न्याय के उद्देश्य में होगा । इस एवज में ठीक-ठीक अनुतोष देने को समुचित प्रक्रम पर मंजूर किया जाएगा ।"

13. माननीय उच्चतम न्यायालय ने मामले का विश्लेषण करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि पूर्ण न्यायपीठ यह अभिनिर्धारित करने में न्यायोचित था कि अधिनियम, 1894 की धारा 17 में अन्तर्विष्ट आपात खंड का अवलंब लेना अननुज्ञेय और अनावश्यक था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय ने अधिसूचना अभिखंडित करने के बजाय बीच का रास्ता अपनाया और समस्या का समाधान निकालने में लम्बा रास्ता तय किया और इस तरीके से साम्या का संतुलन बनाया जो भूमि स्वामियों के पक्ष में था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय ने आधारभूत वास्तविकताओं पर सही ही विचार किया है और अधिसूचनाओं को अभिखंडित करने के बजाय भूमि स्वामियों को अतिरिक्त प्रतिकर मंजूर करने के साथ ही विकसित आबादी भूमि का आबंटन करते हुए, पर्याप्त प्रतिकर द्वारा मामले में यथार्थ और व्यवहारिक समाधान निकाला । तद्नुसार, माननीय उच्चतम न्यायालय ने **गजराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया था ।

14. ग्रेटर नोएडा ने माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत याचिका फाइल करते हुए, हरकरन सिंह वाले मामले में, तारीख 19 जुलाई, 2011 को दिए गए निर्णय को चुनौती दी साथ ही **गजराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अर्थात् 2012 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 19301, ग्रेटर नोएडा औद्योगिक विकास प्राधिकरण बनाम प्रमोद और अन्य तथा अन्य साथियों की अपीलों में, तारीख 21 अक्तूबर, 2011 को पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय को भी चुनौती दी ।

15. माननीय उच्चतम न्यायालय ने पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय की पुष्टि करते हुए, तारीख 3 फरवरी, 2015 के निर्णय द्वारा विशेष इजाजत याचिका का निपटारा किया, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि विशिष्ट तथ्यों में, उच्च न्यायालय, अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन प्राधिकरण द्वारा जारी अधिसूचनाओं को कायम रखते हुए, भूमि स्वामियों को विकसित भूमि का 10 प्रतिशत भूमि आबंटित करने में न्यायोचित था ।

16. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सावित्री देवी वाले मामले में, तारीख 14 मई, 2015 का विनिश्चय देने के पश्चात्, ग्राम पटवारी के संबंध में, अपर जिला मजिस्ट्रेट (भूमि अर्जन) द्वारा तारीख 10 मई, 2015 को एक अधिनिर्णय दिया गया जिसे इन रिट याचिकाओं में प्रश्नगत किया गया है ।

17. हमने, याची के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री शशि नन्दन, जिनकी सहायता श्री शिव कान्त मिश्रा ने की, संबंधित रिट याचिका में याची के विद्वान् काउंसेल श्री संतोष सिंह, ग्रेटर नोएडा के विद्वान् काउंसेल श्री रविन्द्र कुमार और श्री रमेन्द्र प्रताप सिंह और विद्वान् अपर महाधिवक्ता श्री कमल सिंह यादव, जिनकी सहायता विद्वान् मुख्य काउंसेल श्री आर. एस. प्रसाद ने की, को सुना ।

18. याचियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री शशि नन्दन ने यह दलील दी है कि हरकरन सिंह वाले मामले में, इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा दिए गए तारीख 19 जुलाई, 2011 के निर्णय की पुष्टि कर दी गई है और पक्षकारों के बीच यह अंतिम हो गया है । हरकरन सिंह वाले मामले में खंड न्यायपीठ ने ग्राम पटवारी से संबंधित अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन जारी अधिसूचनाओं को अभिखंडित कर दिया था और परिणामतः, प्रतिकर अवधारण करने के लिए कोई अधिनिर्णय नहीं किया जा सकता था । यह दलील दी कि पूर्ण न्यायपीठ ने हरकरन सिंह वाले मामले में खंड न्यायपीठ के विनिश्चय को अनुमोदित कर दिया था और इसलिए अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन जारी अधिसूचनाएं, जो अभिखंडित कर दी गई थीं, की वस्तुतः पूर्ण न्यायपीठ द्वारा पुष्टि कर दी गई थी, जिसकी माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा भी पुष्टि कर दी गई है और इसलिए, कोई अधिनिर्णय नहीं किया जा सकता था । वैकल्पिक रूप में यह तर्क दिया गया था कि हरकरन सिंह वाले मामले में दिए गए विनिश्चय की उपधारणा प्रत्यक्षतः या विवक्षितः उलट दिया गया था, इसलिए अधिनियम, यदि कोई हो, दिया जा सकता था और इसका अवधारण मात्र "भूमि अर्जन, पुर्नवास और पुनर्व्यवस्थापन में उचित प्रतिकर और पारदर्शिता अधिकार, अधिनियम, 2013" (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम, 2013" कहा गया है) के अधीन ही किया जा सकता था, क्योंकि उक्त अधिनियम, 2013 का अस्तित्व तारीख 1 जनवरी, 2014 से प्रभावी हुआ था । अधिनियम, 2013 की धारा 14 को ध्यान में रखते हुए, भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 निरसित हो गई थी । यह तर्क दिया गया कि अधिनिर्णय, उस भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के अधीन नहीं किया जा सकता था जो पहले ही निरसित हो गई थी ।

19. राज्य सरकार के विद्वान् अपर महाधिवक्ता श्री के. एस. यादव ने यह दलील दी कि अधिकतर भूमि स्वामियों को करार नियमावली, 1997 के अधीन पक्षकारों के बीच निष्पादित करार के अनुसरण में प्रतिकर दिया जा

चुका है । यह दलील दी गई कि **गजराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में खंड न्यायपीठ ने ग्राम पटवारी से संबंधित अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन अधिसूचनाओं को अभिखंडित नहीं किया था और वस्तुतः भूमि स्वामियों को अतिरिक्त प्रतिकर और विकसित आबादी भूमि का 10 प्रतिशत देते हुए अनुतोष मंजूर किया था । यह दलील दी गई कि हरकरन सिंह वाले मामले के निर्णय को पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय में विलीन कर दिया गया था और पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय की माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सावित्री देवी वाले मामले की पुष्टि कर दी गई थी ।

20. ग्रेटर नोएडा के विद्वान् काउंसेल श्री रविन्द्र कुमार के साथ श्री रमेन्द्र प्रताप सिंह ने भी यह निवेदन किया कि पूर्ण न्यायपीठ ने हरकरन सिंह के निर्णय को मात्र इस सीमा तक अनुमोदित किया था कि राज्य सरकार द्वारा अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेना अनुमोदित नहीं था । यह तर्क दिया गया कि तथापि, पूर्ण न्यायपीठ ने अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन जारी अधिसूचनाओं को अभिखंडित नहीं किया था, वस्तुतः अधिसूचनाओं को कायम रखा था, जहां तक कि यह ग्राम पटवारी से संबंधित था । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने सावित्री देवी वाले मामले में, इस पहलू पर विचार किया था और यह अभिनिर्धारित किया था कि यह अभिनिर्धारित करने के बजाय कि आपात खंड का अवलंब लेना अननुज्ञेय और अनधिकृत था, उच्च न्यायालय ने सही ही अधिसूचनाओं को अभिखंडित नहीं किया था और प्रतिकर बढ़ाते हुए तथा 10 प्रतिशत की सीमा तक विकसित आबादी भूमि को आबंटित करते हुए, मध्य का रास्ता अपनाया था । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि **गजराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में पूर्ण न्यायपीठ द्वारा दिए गए विनिश्चय के निबंधनों में प्रतिकर का अवधारण प्राधिकारी द्वारा अधिनियम, 2013 के अधीन किया गया था न कि पुराने अधिनियम के अधीन । यह दलील दी गई कि याचियों द्वारा उद्भूत दलील प्रत्यक्षतः भ्रांतिपूर्ण है और यह कि रिट याचिकाएं खारिज किए जाने योग्य हैं ।

21. याचियों के विद्वान् काउंसेल को सविस्तार सुनने के पश्चात् और उन पर गंभीरतापूर्वक विचार करने के पश्चात्, हमारा यह निष्कर्ष है कि याचियों द्वारा उद्भूत दलीलों को स्वीकार नहीं किया जा सकता है ।

22. निःसंदेह, पूर्ण न्यायपीठ ने हरकरन सिंह वाले मामले में खंड

न्यायपीठ के विनिश्चय को अनुमोदित किया था किन्तु, सम्पूर्ण निर्णय को अनुमोदित नहीं किया था । पूर्ण न्यायपीठ ने हरकरन सिंह वाले मामले के विनिश्चय को मात्र उस सीमा तक अनुमोदित किया था जहां तक कि यह अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेने से संबंधित था । पूर्ण न्यायपीठ ने विवाद्यक सं. 5 पर विचार करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया कि राज्य सरकार द्वारा अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेते हुए, अधिनियम, 1894 की धारा 5क के अधीन जांच करना छोड़ दिया गया था जबकि अधिनियम, 1894 की धारा 4 के अधीन अधिसूचना जारी करना दूषित था । जांच को छोड़ना अवैध होने के नाते, सभी याची अधिनियम, 1894 की धारा 5क के अधीन आक्षेप फाइल करने का अवसर पाने के हकदार हो गए थे । पूर्वोक्त निष्कर्ष निकालने के पश्चात्, पूर्ण न्यायपीठ ने परिणामतः, उस सीमा तक हरकरन सिंह वाले मामले को अनुमोदित कर दिया था ।

23. खंड न्यायपीठ ने हरकरन सिंह वाले मामले के विनिश्चय में अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन अधिसूचनाओं को अभिखंडित कर दिया था । तथापि, पूर्ण न्यायपीठ ने अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन अधिसूचाओं को उस सीमा तक अभिखंडित नहीं किया, जहां तक यह ग्राम पटवारी से संबंधित था । पूर्ण न्यायपीठ ने अन्य कारकों अर्थात् कई ग्रामों की भूमि को कब्जे में लेने और उन पर सारभूत विकास कार्य करने पर विचार किया, इस तथ्य के अलावा कि बड़े पैमाने पर भूमि स्वामियों को प्रतिकर संदत्त कर दिया गया था । पूर्ण न्यायपीठ ने अधिसूचनाओं को अभिखंडित करने के बजाय दोनों पक्षों में साम्या का संतुलन बनाते हुए मध्य का रास्ता अपनाया और अधिसूचनाओं को अभिखंडित करने के बजाय, प्रतिकर में बढ़ोतरी कर दी और भूमि स्वामियों को विकसित भूमि में 10 प्रतिशत की सीमा तक आबंटित करने का निर्देश भी दिया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय की पुष्टि करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय अधिसूचनाओं को अभिखंडित नहीं करने में न्यायोचित था और मध्य का रास्ता अपनाने में भी न्यायोचित था ।

24. हमारा, यह भी निष्कर्ष है कि हरकरन सिंह वाले मामले के विनिश्चय को माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष ग्रेटर नोएडा द्वारा **ग्रेटर नोएडा** बनाम **प्रमोद और अन्य**[1] वाले मामले में, चुनौती दी गई थी,

---

[1] विनिश्चित तारीख 3 फरवरी, 2015.

जिसका निपटारा, माननीय उच्चतम न्यायालय ने तारीख 3 फरवरी, 2015 के निर्णय द्वारा किया था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने **गजराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में, पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय के निबंधनों में विशेष इजाजत याचिका का निपटारा करते हुए, यह निष्कर्ष निकाला कि मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय मध्य का रास्ता अपनाने और भूमि स्वामियों को अतिरिक्त प्रतिकर का संदाय करने तथा विकसित भूमि का एक हिस्सा आबंटित करने में न्यायोचित था । हरकरन सिंह वाले मामले में, उच्च न्यायालय के विनिश्चय को चुनौती देते हुए, ग्रेटर नोएडा द्वारा फाइल की गई विशेष इजाजत याचिका का निपटारा पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय के निबंधनों में किया गया । इस प्रकार, हरकरन सिंह वाले मामले में, खंड न्यायपीठ के विनिश्चय को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **ग्रेटर नोएडा** बनाम **प्रमोद और अन्य** (उपर्युक्त)वाले मामले में दिए गए विनिश्चय में आमेलित कर दिया गया था । वस्तुतः, हरकरन सिंह वाले मामले में, खंड न्यायपीठ के विनिश्चय को विवक्षितः उलट दिया गया था । ग्राम पटवारी से संबंधित **गजराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में, पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय को कायम रखा गया अर्थात् यह कि राज्य सरकार द्वारा अधिनियम, 1894 की धारा 17(4) का अवलंब लेना अवैध था किन्तु अधिनियम, 1894 की धारा 4 और 6 के अधीन जारी अधिसूचनाएं उस कारण से दूषित नहीं होंगी अपितु इन्हें अतिरिक्त प्रतिकर का संदाय करते हुए और 10 प्रतिशत की सीमा तक विकसित आबादी भूमि का आबंटन करते हुए, कायम रखा गया था ।

25. याची के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा दी गई इस दलील को कि हरकरन सिंह वाले मामले के विनिश्चय की पूर्ण न्यायपीठ द्वारा और माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पुष्टि कर दी गई थी, भ्रांतिपूर्ण है और इसे कायम नहीं रखा जा सकता है ।

26. याचियों द्वारा उद्भूत यह दलील कि अधिनिर्णय पुराने अधिनियम के अधीन दिया गया है, प्रत्यक्षतः भ्रांतिपूर्ण है । अधिनिर्णय के परिशीलन से, हमारा यह निष्कर्ष है कि प्रतिकर का अवधारण, अधिनियम, 2013 के उपबंधों के अनुसरण में किया गया है । अधिनिर्णय में पुराने अधिनियम का मात्र संदर्भ देने का अभिप्राय यह नहीं है कि अधिनिर्णय पुराने अधिनियम के अधीन किया गया है । हमारा यह निष्कर्ष है कि प्रतिकर का अवधारण, अधिनियम, 2013 की धारा 24 और 25 के अनुसरण में किया गया है । इस कारण से, याची द्वारा उद्भूत दलील, प्रत्यक्षतः भ्रांतिपूर्ण है और नामंजूर

की जाती है ।

27. एक कमजोर प्रयास यह किया गया था कि अधिनिर्णय दो वर्षों के पश्चात् दिया गया था और पुराने अधिनियम की धारा 11क को ध्यान में रखते हुए, अधिनिर्णय दूषित हो जाता है । स्वीकृततः, अधिनियम, 1894 की धारा 17(1) का अवलंब लिया गया था और कब्जा लिया गया था । **गजराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में, पूर्ण न्यायपीठ ने इस प्रश्न पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि अधिनियम, 1894 की धारा 17 का अवलंब लेने को ध्यान में रखते हुए, अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत नहीं हुई हैं और यह कि **सतेन्द्र प्रसाद जैन** (उपर्युक्त) वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय में इसे कायम रखा गया है । इस प्रकार, याची पुनः उस विवाद्यक को उद्‌भूत नहीं कर सकता है जिस पर पूर्ण न्यायपीठ द्वारा पहले ही विचार किया जा चुका है । किसी भी दशा में, हमारा यह निष्कर्ष है कि सावित्री देवी वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित तारीख 14 मई, 2015 के विनिश्चय के अनुसरण में, आक्षेपित अधिनिर्णय तत्काल ही तारीख 10 जुलाई, 2015 को दिया गया था । हमारा यह निष्कर्ष है कि अधिनिर्णय में कोई अवैधता नहीं है न ही याचियों द्वारा दिए गए आधारों पर इसे अभिखंडित किया जा सकता है ।

28. पूर्वोक्त के प्रकाश में, हम, इन रिट याचिकाओं में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं । सभी रिट याचिकाएं असफल होती हैं और खारिज की जाती हैं ।

29. मामले की परिस्थितियों में, पक्षकार अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे ।

रिट याचिकाएं खारिज की गईं ।

क.

जमुना सहाय और अन्य

बनाम

सुश्री नयन तारा और अन्य

तारीख 2 नवम्बर, 2016

न्यायमूर्ति सुधीर अग्रवाल और न्यायमूर्ति आलोक कुमार मुखर्जी

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 96 [सपठित भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 54] – अपील – विक्रय-विलेख – अंतरण – यह स्पष्ट नहीं होना कि विक्रय-विलेख द्वारा प्रश्नगत सम्पत्ति का अन्तरण किया गया है या मात्र उसमें प्रतिकर प्राप्त करने का अधिकार अन्तरित किया गया है – विक्रय-विलेख की इस प्रकृति के बारे में चुनौती देना – चुनौती देते हुए वाद लाने का अधिकार – इसे साबित करने का भार उस पक्षकार पर होता है जो इसे चुनौती देता है – यदि कोई पक्षकार किसी विक्रय-विलेख की प्रकृति के बारे में आक्षेप करता है और उसे चुनौती देता है तो उसकी प्रकृति के बारे में साबित करने का भार उसी पक्षकार पर होता है अन्यों पर नहीं और वाद लाने का अधिकार उसी पक्षकार का होता है जिसका उस प्रश्नगत सम्पत्ति में हित और अधिकार निहित होता है ।

वर्तमान मामले में, विवाद्यक, ग्राम याकूबपुर, परगना और तहसील दादरी, जिला गाजियाबाद के गाटा संख्या 3, क्षेत्र 5-10-10 (पक्का) से संबंधित हैं । विवादित भूमि आरम्भतः वादियों-अपीलार्थियों से संबंधित थी । विवादित भूमि और कुछ अन्य भूमियों को अर्जित करने के लिए राज्य सरकार द्वारा तारीख 18 जून, 1991 की अधिसूचना, अधिनियम, 1894 की धारा 4(1) के अधीन तारीख 20 जुलाई, 1991 के उत्तर प्रदेश के राजपत्र में प्रकाशित की गई थी और इसके पश्चात्, अधिनियम, 1894 की धारा 6/17 के अधीन तारीख 18 दिसम्बर, 1991 की घोषणा भी तारीख 11 जनवरी, 1992 के उत्तर प्रदेश के राजपत्र में प्रकाशित की गई थी । इसके अनुसरण में, तारीख 30 मार्च, 1992 को कलक्टर द्वारा विवादित भूमि का कब्जा लिया गया था । विशेष भूमि अर्जन अधिकारी/अपर जिला मजिस्ट्रेट (भूमि अर्जन, नोएडा, गाजियाबाद) के समक्ष प्रतिकर का अवधारण लम्बित रहने के दौरान प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों ने 60,000/- रुपए के प्रतिफल में

तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख द्वारा विवादित भूमि के संबंध में प्रतिकर के अधिकार को क्रय करने का दावा किया । एस. एल. ए. ओ. ने तारीख 13 नवम्बर, 1995 के अधिनिर्णय द्वारा अधिनियम, 1894 के उपबंधों के अनुसार, 30% मुआवज़ा, 12% अतिरिक्त प्रतिकर और ब्याज के अलावा, 63.26 रुपए प्रति वर्ग गज की दर पर प्रतिकर अवधारित किया । वादी-अपीलार्थियों और प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों दोनों ने विवादित भूमि के प्रतिकर के लिए दावा किया । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों ने तारीख 25 मार्च, 1994 को एक आवेदन (प्रदर्श ए-4) फाइल करते हुए, तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख का अवलंब लेते हुए, बाजार मूल्य में वृद्धि के लिए आक्षेप के अध्यधीन प्रतिकर के लिए अपने अधिकारों का दावा किया । वादी-अपीलार्थियों ने 1996 की मूल वाद संख्या 48 संस्थित करते हुए, तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख को शून्य और अवैध घोषित करने की ईप्सा करते हुए, यह दलील दी कि उन्होंने कोई विक्रय-विलेख, जो भी हो, को निष्पादित नहीं किया है और उक्त विक्रय-विलेख कुछ नहीं हैं अपितु एक कूटरचित, निर्मित और बनावटी दस्तावेज है जो कुछ अन्य छद्‌म व्यक्तियों को प्रस्तुत करते हुए प्राप्त किया गया था । प्रतिकर के लिए हक के विवाद्यक के संबंध में कलक्टर ने धारा 30 के अधीन एक निर्देश किया और उसे 1996 की एल. ए. आर. संख्या 2 के रूप में निचले न्यायालय में रजिस्ट्रीकृत किया गया । 1996 की मूल वाद सं. 48 और 1996 की एल. ए. आर. संख्या 2, दोनों को एक ही निर्णय द्वारा विनिश्चित किया गया । चूंकि दोनों मामलों में विवाद्यक एक समान हैं, इसलिए, दोनों को एक साथ जोड़ा जाता है और निदर्शक वाद के रूप में 1996 की मूल वाद संख्या 48 को मानते हुए संयुक्त रूप से साक्ष्य अभिलिखित किए जाते हैं । वादियों-अपीलार्थियों की ओर से श्री अमर सिंह और रतन सिंह की क्रमशः अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के रूप में परीक्षा की गई जबकि राजीव सिंह त्यागी, हस्तलेख विशेषज्ञ की विशेषज्ञ साक्षी के रूप में परीक्षा की गई । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों की ओर से अशोक कश्यप, चन्द्रभान भारद्वाज, केसरी सिंह, हरिश चन्द भाटी की क्रमशः प्रतिवादी साक्षी 1, प्रतिवादी साक्षी 2, प्रतिवादी साक्षी 3 और प्रतिवादी साक्षी 4 के रूप में परीक्षा की गई । दोनों मामलों में, विवाद्यक संख्या 1 सारवान् था, अतएव, इन्हें एक साथ लिया गया और प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों के पक्ष में उत्तर दिया गया जिसके परिणामस्वरूप, वादियों-अपीलार्थियों की 1996 की मूल वाद संख्या 48 खारिज कर दी गई थी और एल. ए. आर. का उत्तर देते हुए,

यह अभिनिर्धारित किया गया कि प्रतिवादी-प्रत्यर्थी प्रतिकर पाने के हकदार हैं और परिणामस्वरूप, कलक्टर को प्रतिवादियों-प्रत्यर्थियों को प्रतिकर और अन्य फायदों का संदाय करने का निर्देश दिया गया । इस विनिश्चय से व्यथित होकर वर्तमान अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय को प्रश्नगत दस्तावेज अर्थात् तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख की परीक्षा करनी है कि क्या यह क्रेताओं को विवादित भूमि का अन्तरण करता है या मात्र प्रतिकर प्राप्त करने के अधिकार को अन्तरित करता है । यह दस्तावेज पेपर संख्या 5ए (प्रदर्श ए-3) है । दस्तावेज के आरम्भिक भाग में भी यह कथन करता है कि प्रथम पक्षकार, ग्राम याकूबपुर, जिला गाजियाबाद में स्थित गाटा संख्या 3, क्षेत्र 5 बीघा, 10 बिस्वा, 10 बिस्वांसी भूमि का पूर्ण स्वामी है । तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख में, यह कथन स्पष्टतः गलत या मिथ्या है क्योंकि पूर्वोक्त भूमि तारीख 30 मार्च, 1992 को उत्तर प्रदेश राज्य में पहले ही निहित हो गई थी जब कलक्टर ने अर्जन अधिसूचनाओं के अनुसरण में उसका कब्जा ले लिया था और उस भूमि का हक, उत्तर प्रदेश राज्य में बिना किसी विल्लंगम के निहित हो गया था । तत्पश्चात्, प्रदर्श ए-3 में, अधिनियम, 1882 की धारा 4 और 6 के अधीन जारी दो अधिसूचनाओं तारीख 18 जून, 1991 और तारीख 18 दिसम्बर, 1991 के बारे में भी उल्लेख किया गया है और इस तथ्य का भी उल्लेख किया गया है कि उसका कब्जा तारीख 30 मार्च, 1992 को कलक्टर द्वारा ले लिया गया है । इसमें यह भी कथन है कि राजस्व अभिलेखों में नामांतरण पहले ही किया जा चुका है और न्यू ओखला औद्योगिक विकास प्राधिकरण का नाम, विवादित संपत्ति के स्वामी के रूप में प्रविष्ट किया जा चुका है । उक्त कथन करते हुए, यह भी कथन किया गया है कि प्रथम पक्षकार अर्थात् विक्रेताओं ने पूर्वोक्त भूमि का पूर्ण प्राक्कलित प्रतिकर प्राप्त कर लिया है और अब उनका पूर्वोक्त भूमि में कोई हक या संबंध नहीं है । उसके बाद, यह कथन किया गया है कि विक्रेता पूर्वोक्त भूमि में हित का "कब्जे सहित स्वामी" है और उस प्रयोजन के लिए विधि के अधीन उसका दावा करने के हकदार हैं और ऐसा हित द्वितीय पक्षकार अर्थात् प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों को विक्रय/अन्तरित होने योग्य है । एक बार यह कहा गया है कि विक्रेताओं ने विवादित भूमि का सम्पूर्ण प्रतिकर एकत्रित किया है, यह तथ्य कि ऐसे प्रतिकर में मुकदमेबाजी के दौरान बढ़ोतरी हो गई थी, उसके पश्चात्, इसे

अन्तरित किया गया था, हमारे मत में, प्रश्नगत विलेख में "वाद लाने का अधिकार मात्र" को अन्तरित किया गया है और इसमें अधिनियम, 1882 की 6(ङ) लागू होगी । तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख में निम्नलिखित भी अनुध्यात है – "प्रथम पक्षगण द्वितीय पक्षगण को अधिकार देते हैं कि उपरोक्त भूमि के मुआवजे के संबंध में व उपरोक्त भूमि के अपने हित के विषयों में द्वितीय पक्षगण अपने नाम से 28(ए) एल. आर. ए. ऐक्ट के अन्तर्गत सक्षम अधिकारी (एस. एल. ए. ओ.) कलक्टर, गाजियाबाद के दफ्तर से प्राप्त करे तथा उपरोक्त भूमि का मुआवजा बढ़वाने के लिए सक्षम अधिकारी एस. एल. ए. ओ. (कलक्टर) के यहां अन्तर्गत धारा 18 एल. आर. ऐक्ट में अपने नाम से आपत्ति प्रस्तुत करे तथा जिला जज गाजियाबाद के न्यायालय में तथा माननीय उच्च न्यायालय, इलाहाबाद व उच्चतम न्यायालय, नई दिल्ली, भारत में कोई भी कार्यवाही करें और रेफरेंस तैयार कराएं और पैरवी करें तथा किसी भी आदेश की कोई अपील, निगरानी, रिट, नजरसानी किसी भी न्यायालय से सरकारी व गैर-सरकारी में अपने नाम से करें । उस पर प्रथम पक्षगण व उसके वारसान को कोई आपत्ति किसी भी प्रकार की नहीं होगी ।" उपर्युक्त अनुध्यात, मुकदमेबाजी में उच्चतर प्रतिकर प्राप्त करने के अवसर पर विचार करता है और उसे अन्तरित करने का आशय रखता है । यह सुस्पष्टतः "वाद लाने का अधिकार मात्र" है और विवादित भूमि में कोई हित नहीं है । इसलिए, हम प्रश्न संख्या 1 का उत्तर प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों के विरुद्ध और अपीलार्थियों के पक्ष में देते हैं । (पैरा 18 और 19)

अब न्यायालय द्वितीय प्रश्न पर विचार करता है, न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि सभी विक्रेताओं अर्थात् वादी-अपीलार्थियों (सिवाय 4, 5 और 8 के) ने तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख पर अपने-अपने अंगूठे का निशान लगाया है, ऐसा कथन किया गया है । साक्षी प्रीतम सिंह पुत्र किशन लाल और चन्द्र भान भारद्वाज पुत्र मेला राम हैं जो शाहदरा, दिल्ली के निवासी हैं । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों के बयान के अनुसार, सभी अपीलार्थियों, अपीलार्थी 4, 5 और 8 के सिवाय, ने विक्रय-विलेख पर अपने-अपने अंगूठे का निशान लगाया है । दस्तावेज को श्री हरिश चन्द भाटी, अधिवक्ता द्वारा लिखा गया था । उक्त दस्तावेज को हरिश चन्द भाटी, अधिवक्ता, प्रतिवादी साक्षी 4 और चन्द्र भान भारद्वाज, प्रतिवादी साक्षी 2 द्वारा निचले न्यायालय के समक्ष साबित किया गया था । रुचिकर रूप से निचले न्यायालय के निर्णय से यह दर्शित होता है कि यद्यपि प्रीतम सिंह

भी दस्तावेज के निष्पादन का एक साक्षी था किन्तु, प्रदर्श ए-3 पर उसके हस्ताक्षर नहीं हैं । विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि वादी-अपीलार्थियों ने ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है जिससे यह दर्शित होता हो कि दस्तावेज को कपट और मिथ्या व्यपदेशन द्वारा निष्पादित किया गया था क्योंकि उन्होंने विक्रय-विलेख के किसी साक्षी की परीक्षा नहीं की है । वादी-अपीलार्थियों ने तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख को इस आधार पर चुनौती दी है कि उन्होंने उक्त विक्रय-विलेख को निष्पादित नहीं किया है और दस्तावेज बनावटी है । अपीलार्थियों में से दो अमर सिंह और रतन सिंह साक्षी कठघरे में उपस्थित हुए और अपने आधार के समर्थन में अभिसाक्ष्य दिया । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 3, हस्तलेख विशेषज्ञ, जिसे वादी-अपीलार्थियों द्वारा प्रस्तुत किया गया था, द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में यह कथन किया गया है कि दस्तावेज पर हस्ताक्षर और अंगूठे का निशान, वादी-अपीलार्थियों के हस्ताक्षर और अंगूठे से भिन्न थे । इस प्रकार, इस तथ्य को साबित करने का भार आरम्भतः वादी-अपीलार्थियों पर था । इसके पश्चात्, प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों पर यह साबित करने का भार अन्तरित हो गया कि दस्तावेज असली है और वस्तुतः वादी-अपीलार्थियों द्वारा निष्पादित किया गया है । स्वीकृतः साक्षियों में से एक प्रीतम सिंह ने प्रदर्श ए-3, तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख पर हस्ताक्षर नहीं किए थे । उसे प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों द्वारा दस्तावेज के समर्थन में यह साबित करने के लिए भी प्रस्तुत नहीं किया गया कि दस्तावेज उसकी उपस्थिति में निष्पादित हुआ था और वह उसका साक्षी था । चूंकि प्रत्यर्थी प्रदर्श ए-3 का अवलंब लेने और उसका फायदा लेने के लिए आशयित हैं, अतएव अनुप्रमाणित करने वाले साक्षियों को प्रस्तुत करने का भार उन पर था और ऐसे साक्षियों में से एक के हस्ताक्षर नहीं होने का कारण भी स्पष्ट करना था । दस्तावेज पर उसका हस्ताक्षर अनुपस्थित होने के तथ्य को प्रतिवादी के साक्षी, प्रतिवादी साक्षी 4 अर्थात् हरिश चन्द भाटी, अधिवक्ता द्वारा स्वीकार किया गया है, जिसको उक्त दस्तावेज का लेखक होने का दावा किया गया है । निचले न्यायालय के निष्कर्षों में यह भी आया है कि अभि. सा. 1 अमर सिंह, अपीलार्थी सं. 6 ने अपने अभिसाक्ष्य में यह स्वीकार किया है कि हरिश चन्द भाटी एक अधिवक्ता था, जो अपीलार्थियों के साथ था जब उन्होंने भूमि अर्जन अधिकारी के कार्यालय से 80% प्रतिकर की रकम प्राप्त की थी और एस. एल. ए. ओ. के कार्यालय, सेक्टर-6, नोएडा से अतिशेष रकम 20% प्राप्त की थी । उपर्युक्त के होते हुए, यह मत

व्यक्त किया गया कि उप-रजिस्ट्रार का कार्यालय भी सेक्टर-6, नोएडा में है और इसलिए, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वादी-अपीलार्थी 20% शेष प्रतिकर की रकम लेने के लिए उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय में गए थे । निचले न्यायालय द्वारा ऐसा कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया गया है कि कितनी प्रतिकर की रकम शेष थी जिसे वादी-अपीलार्थी द्वारा प्राप्त की जानी थी और प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों को अन्तरित की गई थी । प्रश्नगत विक्रय-विलेख के माध्यम से प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों को 20% प्रतिकर की रकम को अन्तरित करने के बारे में निष्कर्ष कुछ नहीं है अपितु, यह अनुचित, गलत और अभिलेख पर के किसी सामग्री पर आधारित नहीं है । यह दर्शित करने के लिए ऐसी कोई चीज नहीं है कि वादी 20% प्रतिकर की रकम लेने गए थे किन्तु उन्हें संदत्त नहीं किया गया था अथवा वे प्राप्त नहीं कर सके थे । विशेषज्ञ की राय के बारे में, निचले न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि दो पक्षकारों ने दोनों ओर से क्रमशः अपने-अपने मामले के समर्थन में विशेषज्ञों की राय प्रस्तुत की है । विशेषज्ञों की परीक्षा, अभि. सा. 3 और प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में की गई थी । निचले न्यायालय ने इस बारे में स्वयं अपना कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया है कि किसकी रिपोर्ट विश्वसनीय या विश्वास किए जाने योग्य थी और यह अभिनिर्धारित किया कि इसके अन्यथा निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, यह निष्कर्ष निकालना न्यायोचित है कि प्रश्नगत दस्तावेज, वादी-अपीलार्थियों द्वारा निष्पादित की गई थी । इस प्रक्रम पर, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि यद्यपि दस्तावेज का लेखक, हरिश चन्द भाटी, जिसने उस पर हस्ताक्षर नहीं किए थे और अपने अभिसाक्ष्य में उसके द्वारा इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया गया था किन्तु उसने यह कथन किया था कि वह दस्तावेज पर हस्ताक्षर करना भूल गया होगा । जब कोई दस्तावेज, उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय में रजिस्ट्रीकृत होता है तो उप-रजिस्ट्रार द्वारा भी स्वयं अपने रजिस्टर में अंगूठे के निशान और हस्ताक्षर लिए जाते हैं । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों ने उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय से समुचित अभिलेख लेने का कोई प्रयास नहीं किया, विशिष्टतया तब जब दस्तावेज को छदम् व्यक्ति द्वारा कूटरचित और काल्पनिक रूप से प्राप्त होने के आधार पर चुनौती दी गई थी । यह लेखक के साथ ही दो साक्षियों में से एक साक्षी द्वारा भी हस्ताक्षरित नहीं है । न्यायालय के मत में, निचले न्यायालय ने विधिक त्रुटि कारित की है, प्रथमतः पूर्वोक्त दस्तावेज के कपट और मिथ्या व्यपदेशन के तथ्य को साबित करने का भार वादी-अपीलार्थियों पर डाला, इस आधार पर

कि दस्तावेज के किसी साक्षी की परीक्षा वादी के साक्षियों के रूप में नहीं की गई थी । वादी-अपीलार्थियों ने जब दस्तावेज को कूटरचित और काल्पनिक के रूप में चुनौती दी थी तो उन्होंने यह कभी स्वीकार नहीं किया था कि ऐसे दस्तावेज के साक्षी के रूप में उनके द्वारा किसी व्यक्ति को स्वीकार किया गया था । अतएव, वादियों द्वारा ऐसे साक्षियों को प्रस्तुत करने का प्रश्न ही उद्भूत नहीं हो सकता था । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों द्वारा दस्तावेज का फायदा लेने का दावा किया गया था । अतएव, दस्तावेज को साबित करने के लिए साक्षियों को प्रस्तुत करने का भार उन पर था । "सबूत का भार" और "भार" के बीच विभेद होता है । "सबूत का भार" और "साबित करने का भार" के बीच विभेद सुज्ञात है, इसलिए, इसे यहां दोहराने की आवश्यकता नहीं है । यह अत्यधिक सिद्ध है कि एक वाद फाइल किया जाता है तो साबित करने का भार उस वादी पर होता है जिसने न्यायालय से अनुतोष की ईप्सा की है और यदि वह अपने मामले को साबित करने में असफल रहता है तो वह कोई अनुतोष पाने का हकदार नहीं रह जाता है । प्रक्रम-दर-प्रक्रम साबित करने का भार स्थानांतरित होता रहता है । सम्पूर्ण तथ्यों पर विचार करते हुए, विशिष्टतया इस तथ्य पर कि 80% प्रतिकर को वादी-अपीलार्थियों द्वारा पहले ही प्राप्त किया जा चुका है और विचारण न्यायालय ने भी यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि वे शेष 20% प्रतिकर को भी लेने गए थे । उन्होंने अधिनियम, 1894 की धारा 9 के अधीन कलक्टर की नोटिस प्राप्त करने के पश्चात् कलक्टर के समक्ष आक्षेप फाइल किया था और प्रतिकर **उर्फ** 400/- रुपए प्रति वर्ग गज के लिए दावा किया था । न्यायालय के मत में, इन सभी तथ्यों से यह न्यायानुमत होता है कि वादी-अपीलार्थियों ने स्वयमेव ही आंकलित प्रतिकर की रकम प्राप्त करने के पश्चात् उच्चतर प्रतिकर के लिए विरोध किया था । ये सभी परिस्थितियां वादियों द्वारा स्थापित मामले के प्रकाश में ही अत्यधिक सुसंगत हैं । इस बारे में, अभिलेख पर न तो कोई साक्ष्य है न ही अन्यथा कुछ है जिससे कि यह सुरक्षित तौर पर निष्कर्ष निकाला जा सके कि तारीख 9 फरवरी, 1994 को प्रतिकर प्राप्त करने का कोई हित या अधिकार उपलब्ध था जो वादी-अपीलार्थियों द्वारा प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों को स्थानांतरित किया जा सकता था । इसके अतिरिक्त, जब उन्होंने स्वयमेव ही प्रतिकर **उर्फ** 400/- रुपए प्रति वर्ग गज के दावे पर सहमत हुए थे तो 60,000/- रुपए के बड़े प्रतिफल पर ऐसा विरोध अत्यधिक असंभाव्य है जब तक कि कुछ कारण न हों । सम्पूर्ण चर्चा

में, द्वितीय प्रश्न पर न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि इसे अपीलार्थियों के पक्ष में निकाला जाना न्यायोचित है । इस न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, प्रश्नगत सं. 1 और 2 का उत्तर अपीलार्थियों के पक्ष में दिया जाता है और प्रश्न सं. 3 का उत्तर प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों के विरुद्ध दिया जाता है । (पैरा 20, 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 32 और 33)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2014]	2014 (1) ए. डी. जे. 379 : **भारतीय खाद्य निगम** बनाम **कैलाश चन्द** ;	17
[2006]	ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1971 : **अनिल ऋषि** बनाम **गुरबक्श सिंह** ;	28
[2004]	जे. टी. 2004 (6) एस. सी. 442 : **आर. वी. ई. वेंकटचला गाउडर** बनाम **अरुलमिंगू विस्वेसरस्वामी और वी. पी. टेम्पल और एक अन्य** ;	29
[2003]	ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 4351 : **कृष्णा मोहन कुल** उर्फ **नानी चरन कुल और एक अन्य** बनाम **प्रतिमा मैटी और अन्य** ;	30
[2002]	2002 की प्रथम अपील सं. 804, विनिश्चित तारीख 1-3-2016 : **जल संस्थान आगरा** बनाम **श्रीमती कृष्णा कुमारी** ;	17
[2001]	(2001) 10 एस. सी. सी. 221 : **सुरेश चन्द** बनाम **कुन्दन** ;	14
[1980]	ए. आई. आर. 1980 एस. सी. 775 : **मैसर्स खुर्शीद शपूर, चेनाई और अन्य** बनाम **सहायक कलक्टर, संपदा ड्यूटी** ;	17
[1973]	ए. आई. आर. 1973 एस. सी. 281 : **भारत संघ** बनाम **श्री शारदा मिल्स लिमिटेड** ;	16
[1958]	ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 532 : **श्रीमती शांता बाई** बनाम **बाम्बे राज्य और अन्य** ।	14

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 1998 की प्रथम अपील सं. 642 और 489.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के साथ पठित भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 54 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से — सर्वश्री वी. सहाय, कमल सिंह यादव और बी. दयाल, विद्वान् काउंसेल

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री पारस नाथ सिंह, विद्वान् काउंसेल और रवि कान्त, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सुधीर अग्रवाल ने दिया ।

न्या. अग्रवाल – सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के साथ पठित भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम, 1894" कहा गया है) की धारा 54 के अधीन ये अपीलें, 1996 की मूल वाद सं. 48 के साथ अधिनियम, 1894 की धारा 30 के अधीन 1996 की भूमि अर्जन निर्देश (जिसे इसमें इसके पश्चात् "एल. ए. आर." कहा गया है) संख्या 2 में श्री देवेन्द्र कुमार जैन XII अपर जिला न्यायाधीश, गाजियाबाद द्वारा पारित क्रमशः तारीख 16 सितम्बर, 1998 और तारीख 29 सितम्बर, 1998 के निर्णय और डिक्री से उद्भूत हुई हैं । निचले न्यायालय ने वाद खारिज कर दिया और निर्देश का उत्तर देते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादी-प्रत्यर्थी विवादित अर्जित भूमि का प्रतिकर पाने के हकदार हैं ।

2. विवाद्यक, ग्राम याकूबपुर, परगना और तहसील दादरी, जिला गाजियाबाद के गाटा संख्या 3, क्षेत्र 5-10-10 (पक्का) से संबंधित हैं । विवादित भूमि आरम्भतः वादियों-अपीलार्थियों से संबंधित थी । विवादित भूमि और कुछ अन्य भूमियों को अर्जित करने के लिए राज्य सरकार द्वारा तारीख 18 जून, 1991 की अधिसूचना, अधिनियम, 1894 की धारा 4(1) के अधीन तारीख 20 जुलाई, 1991 के उत्तर प्रदेश के राजपत्र में प्रकाशित की गई थी और इसके पश्चात्, अधिनियम, 1894 की धारा 6/17 के अधीन तारीख 18 दिसम्बर, 1991 की घोषणा भी तारीख 11 जनवरी, 1992 के उत्तर प्रदेश के राजपत्र में प्रकाशित की गई थी । इसके अनुसरण में, तारीख 30 मार्च, 1992 को कलक्टर द्वारा विवादित भूमि का कब्जा लिया गया था । विशेष भूमि अर्जन अधिकारी/अपर जिला मजिस्ट्रेट (भूमि अर्जन, नोएडा, गाजियाबाद) (जिसे इसमें इसके पश्चात् "एस. एल. ए. ओ."

कहा गया है) के समक्ष प्रतिकर का अवधारण लम्बित रहने के दौरान प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों ने 60,000/- रुपए के प्रतिफल में तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख द्वारा विवादित भूमि के संबंध में प्रतिकर के अधिकार को क्रय करने का दावा किया । एस. एल. ए. ओ. ने तारीख 13 नवम्बर, 1995 के अधिनिर्णय द्वारा अधिनियम, 1894 के उपबंधों के अनुसार, 30% मुआवज़ा, 12% अतिरिक्त प्रतिकर और ब्याज के अलावा, 63.26 रुपए प्रति वर्ग गज की दर पर प्रतिकर अवधारित किया । वादी-अपीलार्थियों और प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों दोनों ने विवादित भूमि के प्रतिकर के लिए दावा किया । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों ने तारीख 25 मार्च, 1994 को एक आवेदन (प्रदर्श ए-4) फाइल करते हुए, तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख का अवलंब लेते हुए, बाजार मूल्य में वृद्धि के लिए आक्षेप के अध्यधीन प्रतिकर के लिए अपने अधिकारों का दावा किया । वादी-अपीलार्थियों ने 1996 की मूल वाद संख्या 48 संस्थित करते हुए, तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख को शून्य और अवैध घोषित करने की ईप्सा करते हुए, यह दलील दी कि उन्होंने कोई विक्रय-विलेख, जो भी हो, को निष्पादित नहीं किया है और उक्त विक्रय-विलेख कुछ नहीं हैं अपितु एक कूटरचित, निर्मित और बनावटी दस्तावेज है जो कुछ अन्य छद्म व्यक्तियों को प्रस्तुत करते हुए प्राप्त किया गया था ।

3. प्रतिकर के लिए हक के विवाद्यक के संबंध में कलक्टर ने धारा 30 के अधीन एक निर्देश किया और उसे 1996 की एल. ए. आर. संख्या 2 के रूप में निचले न्यायालय में रजिस्ट्रीकृत किया गया । 1996 की मूल वाद सं. 48 और 1996 की एल. ए. आर. संख्या 2, दोनों को एक ही निर्णय द्वारा विनिश्चित किया गया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने 1996 की मूल वाद संख्या 48 में निम्नलिखित 5 विवाद्यक विरचित किए :–

"(1) क्या विक्रय पत्र दिनांक 9 फरवरी, 1994 वादीगण द्वारा प्रतिवादीगण के पक्ष में निष्पादित किया गया था, यदि हां तो प्रभाव ?

(2) क्या वाद इस न्यायालय के क्षेत्राधिकार से बाहर है ?

(3) क्या वाद का मूल्यांकन कम किया गया है ?

(4) क्या न्याय शुल्क अपर्याप्त अदा किया गया ?

(5) वादी किस अनुतोष का अधिकारी है ?"

1996 की एल. ए. आर. संख्या 2 में निचले न्यायालय ने निम्नलिखित 3 विवाद्यक विरचित किए :–

"(1) क्या बैनामा/समर्पित पत्र दिनांक 9-2-1994 वादीगण द्वारा निष्पादित नहीं किया गया, यदि किया गया तो प्रभाव ?

(2) ए. डी. एम. (एल. ए.) नोएडा के आदेश दिनांक 6-6-1994 का प्रभाव ?

(3) मुआवजा पाने का अधिकारी कौन है ?"

4. चूंकि दोनों मामलों में विवाद्यक एक समान हैं, इसलिए, दोनों को एक साथ जोड़ा जाता है और निदर्शक वाद के रूप में 1996 की मूल वाद संख्या 48 को मानते हुए संयुक्त रूप से साक्ष्य अभिलिखित किए जाते हैं ।

5. वादियों-अपीलार्थियों की ओर से श्री अमर सिंह और रतन सिंह की क्रमशः अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के रूप में परीक्षा की गई जबकि राजीव सिंह त्यागी, हस्तलेख विशेषज्ञ की विशेषज्ञ साक्षी के रूप में परीक्षा की गई । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों की ओर से अशोक कश्यप, चन्द्रभान भारद्वाज, केसरी सिंह, हरिश चन्द भाटी की क्रमशः प्रतिवादी साक्षी 1, प्रतिवादी साक्षी 2, प्रतिवादी साक्षी 3 और प्रतिवादी साक्षी 4 के रूप में परीक्षा की गई । दोनों मामलों में, विवाद्यक संख्या 1 सारवान् था, अतएव, इन्हें एक साथ लिया गया और प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों के पक्ष में उत्तर दिया गया जिसके परिणामस्वरूप, वादियों-अपीलार्थियों की 1996 की मूल वाद संख्या 48 खारिज कर दी गई थी और एल. ए. आर. का उत्तर देते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया कि प्रतिवादी-प्रत्यर्थी प्रतिकर पाने के हकदार हैं और परिणामस्वरूप, कलक्टर को प्रतिवादियों-प्रत्यर्थियों को प्रतिकर और अन्य फायदों का संदाय करने का निर्देश दिया गया ।

6. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री वी. सहाय ने यह दलील दी कि प्रश्नगत भूमि पहले ही अर्जित की जा चुकी है और कलक्टर द्वारा तारीख 30 मार्च, 1992 को इसका कब्जा ले लिया गया है, अतएव, यह राज्य में निहित हो गई है, अतएव, ऐसा कुछ भी नहीं बचा था जिसे वादी-अपीलार्थियों द्वारा तारीख 9 फरवरी, 1994 को प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों को अंतरित किया जा सकता था, अतएव, प्रश्नगत विक्रय-विलेख, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम, 1882" कहा गया है) की धारा 6(ङ) को ध्यान में रखते हुए, आरम्भतः शून्य है । उन्होंने यह भी दलील दी कि आंकलित प्रतिकर का 80% वादी-अपीलार्थियों द्वारा पहले ही प्राप्त किया जा चुका है और ऐसा होने पर वस्तुतः ऐसा कुछ भी शेष बचा है जिसे प्रतिकर के अधिकार के रूप में यह

दावा किया जा सके कि तारीख 9 फरवरी, 1994 के अभिकथित विक्रय-विलेख के माध्यम से अंतरित किया जा सकता था । उन्होंने यह भी दलील दी कि प्रस्तुत साक्ष्य से, स्पष्टतः यह दर्शित होता है कि अभिकथित विक्रय-विलेख कूटरचित और काल्पनिक था, इसलिए, निचले न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में विधिक त्रुटि कारित की है कि विक्रय-विलेख असली दस्तावेज है और उसके आधार पर वाद डिक्री कर दिया था ।

7. इसके विपरीत, प्रत्यर्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री रवि कान्त ने, जिनकी सहायता विद्वान् काउंसेल श्री पारस नाथ सिंह ने की, यह तर्क दिया कि वस्तुतः प्रश्नगत विक्रय-विलेख प्रतिकर दावा करने का अंतरित अधिकार है जो संपत्ति का अधिकार है और इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि विक्रय-विलेख विधि की दृष्टि में अकृत है । उन्होंने यह भी दलील दी कि मूल वाद में विक्रय-विलेख रद्द करने के लिए अनुतोष में कोई प्रार्थना नहीं की गई थी और ऐसा होने पर वादी-अपीलार्थी पूर्वोक्त तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख की अवहेलना करने के लिए अनुतोष की ईप्सा नहीं कर सकते हैं ।

8. इन अपीलों को विनिश्चित करने के लिए इस न्यायालय द्वारा जिन मुद्दों पर विचार किया जाना आवश्यक है, वे निम्नलिखित हैं :–

(1) क्या तारीख 9 फरवरी, 1994 का विक्रय-विलेख, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम, 1882' कहा गया है) की धारा 6(ङ) को ध्यान में रखते हुए, शून्य है या अन्यथा ?

(2) क्या तारीख 9 फरवरी, 1994 का विक्रय-विलेख, कूटरचित और काल्पनिक दस्तावेज है, जैसा कि वादी-अपीलार्थियों द्वारा दावा किया गया है या निचले न्यायालय द्वारा यह सही ही अभिनिर्धारित किया गया है कि यह एक असली दस्तावेज है ?

(3) क्या निचला न्यायालय, यह अभिनिर्धारित करने में सही है कि प्रतिवादी-प्रत्यर्थी विवादित भूमि के प्रतिकर का संदाय पाने के हकदार हैं ?

9. प्रश्न संख्या 1 का उत्तर देने के अनुक्रम में, हमारा यह निष्कर्ष है कि इस तथ्य के संबंध में कोई विवाद्यक नहीं है कि विवादित भूमि, उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा अधिनियम, 1894 के अधीन अर्जन के लिए कार्यवाहियां आरम्भ करते हुए, अर्जित कर ली गई थीं और इस संबंध में, धारा 4 के

अधीन तारीख 18 जून, 1991 की अधिसूचना उत्तर प्रदेश राजपत्र में तारीख 20 जुलाई, 1991 को प्रकाशित कर दी गई थी और धारा 6/17 के अधीन तारीख 18 दिसम्बर, 1991 की घोषणा उत्तर प्रदेश राजपत्र में तारीख 11 जनवरी, 1992 को प्रकाशित कर दी गई थी और भूमि का कब्जा भी कलक्टर द्वारा तारीख 30 मार्च, 1992 को ले लिया गया था जिसके परिणामस्वरूप, भूमि, तारीख 30 मार्च, 1992 को उत्तर प्रदेश राज्य में निहित हो गई थी । धारा 9 के अधीन जारी अधिसूचनाओं को ध्यान में रखते हुए, एस. एल. ए. ओ. ने कतिपय आक्षेपकर्ताओं को सुनवाई का अवसर दिया और 63.26 रुपए प्रति वर्ग गज की दर पर बाजार मूल्य अवधारित करते हुए, अधिनियम, 1894 की धारा 18 के अधीन तारीख 13 नवम्बर, 1995 को अधिनिर्णय घोषित किया । अधिनियम की प्रति अभिलेख पर है और विवादित भूमि के संबंध में, अमर सिंह पुत्र हरि राम अर्थात् अपीलार्थी सं. 6 का आक्षेप विचार के लिए दर्शित है । अपीलार्थी ने 400/- रुपए प्रति वर्ग गज की दर पर प्रतिकर का दावा किया है किन्तु, एस. एल. ए. ओ. द्वारा 63.26 रुपए प्रति वर्ग गज की दर प्रस्थापित किया गया था । अभिलेखों से यह भी प्रकट होता है कि एस. एल. ए. ओ. द्वारा तारीख 13 नवम्बर, 1995 का अधिनिर्णय उद्घोषित किए जाने के ठीक पूर्व आंकलित प्रतिकर का 80% वादी-अपीलार्थियों को संदत्त किया जा चुका था ।

10. विवादित भूमि में से 1/4 हिस्से की सीमा तक अपीलार्थी सं. 6 अमर सिंह और अपीलार्थी सं. 10 चेत राम, 1/4 हिस्से तक अपीलार्थी सं. 1 से 5 बराबर और 1/5 हिस्से तक व्यक्तिगत तौर पर जबकि सम्पूर्ण विवादित भूमि में से शेष 1/4 हिस्से तक बराबर और 1/9 हिस्से तक व्यक्तिगत तौर पर अपीलार्थी सं. 7 से 9 द्वारा धारित किए जाने का दावा किया गया है । उन्होंने तारीख 13 नवम्बर, 1995 के अधिनिर्णय के अनुसार, प्रतिकर का संदाय करने का निवेदन करते हुए, तारीख 8 दिसम्बर, 1995 को अपर जिला मजिस्ट्रेट (भूमि अर्जन), नोएडा, फेज-II, गाजियाबाद (जिसे इसमें इसके पश्चात् "ए. डी. एम. (एल. ए.)" कहा गया है) के समक्ष एक आवेदन प्रस्तुत किया था । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों ने तारीख 1 फरवरी, 1996 को आक्षेप फाइल किया, यह कथन करते हुए कि प्रतिवादी ने प्रतिकर का दावा करते हुए, ए. डी. एम. (एल. ए.) के समक्ष तारीख 25 मार्च, 1994 को एक आवेदन पहले ही फाइल कर चुका था और इसमें के अपीलार्थियों ने अपना अनापत्ति पत्र फाइल किया था और इसके पश्चात् ही ए. डी. एम. (एल. ए.) ने प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों को प्रतिकर

संदाय करने के लिए तारीख 6 जून, 1994 का आदेश पारित किया था । स्वीकृततः, प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों ने तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख, जो उप-रजिस्ट्रार, नोएडा के कार्यालय में तारीख 17 फरवरी, 1994 को रजिस्ट्रीकृत हुआ था, के आधार पर प्रतिकर का दावा किया था । तथापि, वादी-अपीलार्थियों के उक्त विक्रय-विलेख के निष्पादन को ही विवादित किया गया है और यह दावा किया गया है कि वह कूटरचित और काल्पनिक है और वह छद्म व्यक्ति तथा मिथ्याव्यपदेशन द्वारा प्राप्त किया गया था ।

11. चूंकि विवादित भूमि उत्तर प्रदेश राज्य में निहित हो गई थी, जब अधिनियम, 1894 की धारा 17 के अधीन कलक्टर द्वारा कब्जा लिया गया था तो प्रथम प्रश्न, जिसकी हमें परीक्षा करनी है, यह है कि क्या तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख को निष्पादन योग्य दस्तावेज कहा जा सकता है ताकि, प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों के संपत्ति का अन्तरण प्रभावी हो सके । "संपत्ति का अंतरण" को अधिनियम, 1882 की धारा 5 के अधीन परिभाषित किया गया है और यह इस प्रकार है :–

> "(5) **'संपत्ति के अंतरण' की परिभाषा** – आगामी धाराओं में, 'संपत्ति के अंतरण' से ऐसा कार्य अभिप्रेत है, जिसके द्वारा कोई जीवित व्यक्ति एक या अधिक अन्य जीवित व्यक्तियों को या स्वयं को अथवा स्वयं और एक या अधिक अन्य जीवित व्यक्तियों को वर्तमान में या भविष्य में संपत्ति हस्तांतरित करता है और 'संपत्ति का अंतरण करना' ऐसा कार्य करना है ।
>
> इस धारा में 'जीवित व्यक्ति' के अन्तर्गत कंपनी या संगम या व्यक्तियों का निकाय, चाहे वह निगमित हो या न हो, आता है किन्तु एतस्मिन् अन्तर्विष्ट कोई भी बात कंपनियों, संगमों या व्यक्तियों के निकायों को या के द्वारा किए जाने वाले संपत्ति-अंतरण से संबंधित किसी भी तत्समय प्रवृत्त विधि पर प्रभाव न डालेगी ।"

12. शब्द "संपत्ति" को अधिनियम, 1882 के अधीन परिभाषित नहीं किया गया है, इसके बजाय, इसे धारा 3 के अधीन "स्थावर संपत्ति" के रूप में परिभाषित किया गया है, जो इस प्रकार है :–

> "'स्थावर संपत्ति' के अन्तर्गत खड़ा काष्ठ, उगती फसलें या घास नहीं आती ।"

13. वास्तव में, यह स्थावर संपत्ति को परिभाषित नहीं करती है अपितु उन चीजों को विनिर्दिष्ट करती है जो स्थावर संपत्ति के निबंधनों के भीतर

सम्मिलित नहीं है । हम, साधारण खंड अधिनियम, 1897 (जिसे इसमें इसके पश्चात् अधिनियम, 1897 कहा गया है) की धारा 3(26) में स्थावर संपत्ति की परिभाषा पाते हैं, जो अनन्य हैं और इस प्रकार हैं :–

"'स्थावर संपत्ति' के अन्तर्गत भूमि, भूमि से उद्भूत होने वाले फायदे और वे चीजें, जो भूबद्ध हैं या भूबद्ध किसी चीज से स्थायी रूप से जकड़ी हुई है, आएंगे ।"

14. **सुरेश चन्द** बनाम **कुन्दन**[1] वाले मामले के निर्णय के पैरा 6 में न्यायालय ने यह कहा है कि अधिनियम, 1882 के अधीन "स्थावर संपत्ति" की किसी विशेष परिभाषा के अभाव में, साधारण खंड अधिनियम, 1897 में अन्तर्विष्ट साधारण परिभाषा अभिभावी होगी । इसी प्रकार के प्रभाव की विधि, **श्रीमती शांता बाई** बनाम **बाम्बे राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में, अधिकथित की गई है । साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 3(26) के अधीन "स्थावर संपत्ति" की परिभाषा अनन्य है । वाक्य "भूमि से उद्भूत होने वाले फायदे" का बृहत्तर अभिप्राय कुछ नहीं है अपितु भूमि में हित है, उदाहरण के लिए भूमि का वार्षिक भत्ता प्रभार, भूखंड, हाट या बाजार पर निर्धारित उचित बकाए को एकत्रित करने का अधिकार, सरनजाम का कब्जा और प्रबन्धन का अधिकार, विशिष्ट भूमि के संबंध में कोई शुल्क या अन्य बकायों को एकत्रित करने का अधिकार, स्थावर संपत्ति के अधिग्रहण के सक्रिय जांच-पड़ताल, रास्ते, ऋजु, मछली पकड़ने का अधिकार इत्यादि ।

15. अधिनियम, 1882 की धारा 6, विनिर्दिष्टतः यह उपबंध करती है कि किसी भी किस्म की संपत्ति अंतरित की जा सकती है सिवाय जैसा कि अधिनियम, 1882 में अथवा तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अन्यथा उपबंधित है । यथाउपर्युक्त अपवाद 9 है और इस प्रकार हैं :–

"(क) किसी प्रत्यक्ष वारिस की संपदा का उत्तराधिकारी होने की संभावना, कुल्य की मृत्यु पर किसी नातेदार की वसीयत-संपदा अभिप्राप्त करने की संभावना या इसी प्रकृति की कोई अन्य संभावना मात्र अन्तरित नहीं की जा सकती;

(ख) किसी उत्तरभाव्य शर्त के भंग के कारण पुनः प्रवेश का अधिकार मात्र उस सम्पत्ति का, जिस पर तद्द्वारा प्रभाव पड़ा है, स्वामी के सिवाय किसी अन्य को अंतरित नहीं किया जा सकता;

---

[1] (2001) 10 एस. सी. सी. 221.

[2] ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 532.

(ग) कोई सुखाचार अधिष्ठायी स्थल से पृथक्तः अन्तरित नहीं किया जा सकता;

(घ) सम्पत्ति में का ऐसा हित, जो उपभोग में स्वयं स्वामी तक ही निर्बन्धित है, उसके द्वारा अन्तरित नहीं किया जा सकता;

(घघ) भावी भरणपोषण का अधिकार, चाहे वह किसी भी रीति से उद्भूत, प्रतिभूत या अवधारित हो, अन्तरित नहीं किया जा सकता;

(ङ) वाद लाने का अधिकार मात्र अन्तरित नहीं किया जा सकता;

(च) लोक पद अन्तरित नहीं किया जा सकता, और न लोक आफिसर का संबलम् उसके देय होने से, चाहे पूर्व या पश्चात् अन्तरित किया जा सकता;

(छ) वृत्तिकाएं, जो सरकार के सैनिक, नौसैनिक, वायुसैनिक और सिविल पेंशन भोगियों को अनुज्ञात हों, और राजनैतिक पेंशनें अन्तरित नहीं की जा सकतीं;

(ज) कोई भी अन्तरण (1) जहां तक वह तद्द्वारा उस हित की, जिस पर, प्रभाव पड़ा है, प्रकृति के प्रतिकूल हो, या (2) जो भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) की धारा 23 के अर्थ के अंतर्गत किसी विधिविरुद्ध उद्देश्य या प्रतिफल के लिए हो, या (3) जो ऐसे व्यक्ति को, जो अन्तरिती होने से विधितः निरर्हित हो, नहीं किया जा सकता ।"

16. वर्तमान मामले में, हमारा संबंध धारा 6(ङ) से हैं, जो यह कहता है कि "वाद लाने का अधिकार मात्र" अन्तरित नहीं किया जा सकता है । **भारत संघ** बनाम **श्री शारदा मिल्स लिमिटेड**[1] वाले मामले में, धारा 6 पर विचार करने के लिए आया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि कार्रवाई के मूल अधिकार का प्रयोग संविदा के भंग के लिए क्षतिपूर्ति के दावों या अपकृत्य के लिए क्षतिपूर्ति के दावों में किया जाना चाहिए और मुकदमेबाजी के मात्र अधिकार का समनुदेशन दूषित होता है । संपत्ति का समनुदेशन विधिमान्य होता है यद्यपि, कि संपत्ति, मुकदमेबाजी के बिना प्राप्त किए जाने में असमर्थ हो सकती है । इस नियम के पीछे कारण यह है कि क्षतिपूर्ति के लिए कार्रवाई का मात्र अधिकार समनुदेशित नहीं है

[1] ए. आई. आर. 1973 एस. सी. 281.

क्योंकि विधि ऐसे किसी संव्यवहार को मान्यता नहीं देती है जो वादक्रय का अनुरक्षण कर सकती है । यह मात्र तभी जब उस संव्यवहार की विषय-वस्तु में कोई हित हो, रख-रखाव के लांछन से संरक्षित की जा सकती है । वह हित समनुदेशन के अलावा अस्तित्व में होना चाहिए और उस सीमा तक इससे स्वतंत्र होना चाहिए ।

17. पहले के स्वामी द्वारा निष्पादित लिखत के अधीन प्रतिकर प्राप्त करने के अधिकार के संदर्भ में, जिसकी भूमि पश्चात्वर्ती क्रेताओं द्वारा बलपूर्वक अर्जित कर ली गई है तो क्या ऐसे मामलों में धारा 6(ङ) लागू होगी, जिस पर इस न्यायालय द्वारा **जल संस्थान आगरा** बनाम **श्रीमती कृष्णा कुमारी**[1] वाले नवीनतम मामले में विचार किया गया है और **मैसर्स खुर्शीद शपूर, चेनाई और अन्य** बनाम **सहायक कलक्टर, संपदा ड्यूटी**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय का अनुसरण करते हुए, और इस न्यायालय द्वारा **भारतीय खाद्य निगम** बनाम **कैलाश चन्द**[3] वाले मामले में दिए गए एक अन्य निर्णय का अनुसरण करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि "राज्य द्वारा अर्जित भूमि का प्रतिकर प्राप्त करने का अधिकार" एक संपत्ति है किन्तु जब एक बार धारा 4(1) के अधीन अधिसूचना जारी कर दी जाती है तो भूमि का स्वामी ऐसी भूमि के ऊपर कोई विल्लंगम सृजित नहीं कर सकता है जो सरकार को आबद्ध करती हो और पश्चात्वर्ती क्रेता ऐसी संपत्ति में कोई हक अर्जित नहीं करेगा । निर्णय के पैरा 31 में, इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "31. इस प्रकार, यह निवेदन कि पश्चात्वर्ती क्रेता को सभी प्रयोजनों, जिनमें प्रतिकर सम्मिलित है, के लिए कोई अधिकार नहीं है, में कोई गुणागुण नहीं है क्योंकि प्रतिकर प्राप्त करने का अधिकार, अधिनियम, 1882 की धारा 6 के अधीन समनुदेशनीय संपत्ति में अधिकार है । अतएव, पहले के स्वामियों द्वारा पश्चात्वर्ती क्रेताओं को निष्पादित विक्रय-विलेख में अर्जित भूमि पर कोई विल्लंगम सृजित नहीं किया जा सकता किन्तु यह विधिमान्य होगा जहां तक कि यह पहले के भूमि स्वामियों से पश्चात्वर्ती क्रेताओं को प्रतिकर का दावा करने के अधिकार के अन्तरण से संबंधित है ।"

---

[1] 2002 की प्रथम अपील सं. 804, विनिश्चित तारीख 1-3-2016.
[2] ए. आई. आर. 1980 एस. सी. 775.
[3] 2014 (1) ए. डी. जे. 379.

18. विधि की पूर्वोक्त प्रतिपादना के प्रकाश में, हमें प्रश्नगत दस्तावेज अर्थात् तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख की परीक्षा करनी है कि क्या यह क्रेताओं को विवादित भूमि का अन्तरण करता है या मात्र प्रतिकर प्राप्त करने के अधिकार को अन्तरित करता है । यह दस्तावेज पेपर संख्या 5ए (प्रदर्श ए-3) है । दस्तावेज के आरम्भिक भाग में भी यह कथन करता है कि प्रथम पक्षकार, ग्राम याकूबपुर, जिला गाजियाबाद में स्थित गाटा संख्या 3, क्षेत्र 5 बीघा, 10 बिस्वा, 10 विस्वांसी भूमि का पूर्ण स्वामी है । तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख में, यह कथन स्पष्टतः गलत या मिथ्या है क्योंकि पूर्वोक्त भूमि तारीख 30 मार्च, 1992 को उत्तर प्रदेश राज्य में पहले ही निहित हो गई थी जब कलक्टर ने अर्जन अधिसूचनाओं के अनुसरण में उसका कब्जा ले लिया था और उस भूमि का हक, उत्तर प्रदेश राज्य में बिना किसी विल्लंगम के निहित हो गया था । तत्पश्चात्, प्रदर्श ए-3 में, अधिनियम, 1882 की धारा 4 और 6 के अधीन जारी दो अधिसूचनाओं तारीख 18 जून, 1991 और तारीख 18 दिसम्बर, 1991 के बारे में भी उल्लेख किया गया है और इस तथ्य का भी उल्लेख किया गया है कि उसका कब्जा तारीख 30 मार्च, 1992 को कलक्टर द्वारा ले लिया गया है । इसमें यह भी कथन है कि राजस्व अभिलेखों में नामांतरण पहले ही किया जा चुका है और न्यू ओखला औद्योगिक विकास प्राधिकरण का नाम, विवादित संपत्ति के स्वामी के रूप में प्रविष्ट किया जा चुका है । उक्त कथन करते हुए, यह भी कथन किया गया है कि प्रथम पक्षकार अर्थात् विक्रेताओं ने पूर्वोक्त भूमि का पूर्ण प्राक्कलित प्रतिकर प्राप्त कर लिया है और अब उनका पूर्वोक्त भूमि में कोई हक या संबंध नहीं है । उसके बाद, यह कथन किया गया है कि विक्रेता पूर्वोक्त भूमि में हित का "कब्जे सहित स्वामी" है और उस प्रयोजन के लिए विधि के अधीन उसका दावा करने के हकदार हैं और ऐसा हित द्वितीय पक्षकार अर्थात् प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों को विक्रय/अन्तरित होने योग्य है । एक बार यह कहा गया है कि विक्रेताओं ने विवादित भूमि का सम्पूर्ण प्रतिकर एकत्रित किया है, यह तथ्य कि ऐसे प्रतिकर में मुकदमेबाजी के दौरान बढ़ोतरी हो गई थी, उसके पश्चात्, इसे अन्तरित किया गया था, हमारे मत में, प्रश्नगत विलेख में "वाद लाने का अधिकार मात्र" को अन्तरित किया गया है और इसमें अधिनियम, 1882 की धारा 6(ङ) लागू होगी । तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख में निम्नलिखित भी अनुध्यात है :-

> "प्रथम पक्षगण द्वितीय पक्षगण को अधिकार देते हैं कि उपरोक्त भूमि के मुआवजे के संबंध में व उपरोक्त भूमि के अपने हित के

विषयों में द्वितीय पक्षगण अपने नाम से 28(ए) एल. आर. ए. ऐक्ट के अन्तर्गत सक्षम अधिकारी (एस. एल. ए. ओ.) कलक्टर, गाजियाबाद के दफ्तर से प्राप्त करे तथा उपरोक्त भूमि का मुआवजा बढ़वाने के लिए सक्षम अधिकारी एस. एल. ए. ओ. (कलक्टर) के यहां धारा 18 एल. आर. ऐक्ट में अपने नाम से आपत्ति प्रस्तुत करे तथा जिला जज गाजियाबाद के न्यायालय में तथा माननीय उच्च न्यायालय, इलाहाबाद व उच्चतम न्यायालय, नई दिल्ली, भारत में कोई भी कार्यवाही करें और रेफरेंस तैयार कराएं और पैरवी करें तथा किसी भी आदेश की कोई अपील, निगरानी, रिट, नजरसानी किसी भी न्यायालय से सरकारी व गैर-सरकारी में अपने नाम से करें । उस पर प्रथम पक्षगण व उसके वारसान को कोई आपत्ति किसी भी प्रकार की नहीं होगी ।"

19. उपर्युक्त अनुध्यात, मुकदमेबाजी में उच्चतर प्रतिकर प्राप्त करने के अवसर पर विचार करता है और उसे अन्तरित करने का आशय रखता है । यह सुस्पष्टतः "वाद लाने का अधिकार मात्र" है और विवादित भूमि में कोई हित नहीं है । इसलिए, हम प्रश्न संख्या 1 का उत्तर प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों के विरुद्ध और अपीलार्थियों के पक्ष में देते हैं ।

20. अब हम द्वितीय प्रश्न पर विचार करते हैं, हमारा यह निष्कर्ष है कि सभी विक्रेताओं अर्थात् वादी-अपीलार्थियों (सिवाय 4, 5 और 8 के) ने तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख पर अपने-अपने अंगूठे का निशान लगाया है, ऐसा कथन किया गया है । साक्षी प्रीतम सिंह पुत्र किशन लाल और चन्द्र भान भारद्वाज पुत्र मेला राम हैं जो शाहदरा, दिल्ली के निवासी हैं । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों के बयान के अनुसार, सभी अपीलार्थियों, अपीलार्थी 4, 5 और 8 के सिवाय, ने विक्रय-विलेख पर अपने-अपने अंगूठे का निशान लगाया है । दस्तावेज को श्री हरिश चन्द भाटी, अधिवक्ता द्वारा लिखा गया था । उक्त दस्तावेज को हरिश चन्द भाटी, अधिवक्ता, प्रतिवादी साक्षी 4 और चन्द्र भान भारद्वाज, प्रतिवादी साक्षी 2 द्वारा निचले न्यायालय के समक्ष साबित किया गया था । रुचिकर रूप से निचले न्यायालय के निर्णय से यह दर्शित होता है कि यद्यपि प्रीतम सिंह भी दस्तावेज के निष्पादन का एक साक्षी था किन्तु, प्रदर्श ए-3 पर उसके हस्ताक्षर नहीं हैं । यह प्रतिवादी साक्षी 4 द्वारा स्वीकृत किया गया है और विचारण न्यायालय के निष्कर्षों के उद्धरण से निम्नलिखित प्रकट होता है :–

"प्रीतम सिंह को एक साल पहले से जानता था । **प्रदर्श ए-3 पर उसके दस्तख़त नहीं हैं** । भूलवश उसके द्वारा दस्तख़त करना रह

गया है ।"

21. विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि वादी-अपीलार्थियों ने ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है जिससे यह दर्शित होता हो कि दस्तावेज को कपट और मिथ्या व्यपदेशन द्वारा निष्पादित किया गया था क्योंकि उन्होंने विक्रय-विलेख के किसी साक्षी की परीक्षा नहीं की है । इस संबंध में, निचले न्यायालय के निम्नलिखित निष्कर्ष इसमें यहां प्रस्तुत करना लाभदायक हैं :–

> "इस वाद में यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि वादी ने अपने बयान में धोखा व साजिश के तथ्यों को प्रस्तुत नहीं किया है । इस प्रकार वादी के उपलब्ध साक्ष्य से यह स्पष्ट होता है कि वादीगण को विशिष्ट रूप से किसी भी धोखा व साज के तथ्यों की जानकारी नहीं है और अपने सही तथ्यों को छिपाने का जानबूझकर प्रयत्न किया है । **इस वाद में वादीगण ने बैनामे के किसी भी गवाह को साक्ष्य में प्रस्तुत नहीं किया है ।**"

22. वादी-अपीलार्थियों ने तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख को इस आधार पर चुनौती दी है कि उन्होंने उक्त विक्रय-विलेख को निष्पादित नहीं किया है और दस्तावेज बनावटी है । अपीलार्थियों में से दो अमर सिंह और रतन सिंह साक्षी कठघरे में उपस्थित हुए और अपने आधार के समर्थन में अभिसाक्ष्य दिया । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 3, हस्तलेख विशेषज्ञ, जिसे वादी-अपीलार्थियों द्वारा प्रस्तुत किया गया था, द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में यह कथन किया गया है कि दस्तावेज पर हस्ताक्षर और अंगूठे का निशान, वादी-अपीलार्थियों के हस्ताक्षर और अंगूठे से भिन्न थे । इस प्रकार, इस तथ्य को साबित करने का भार आरम्भतः वादी-अपीलार्थियों पर था । इसके पश्चात्, प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों पर यह साबित करने का भार अन्तरित हो गया कि दस्तावेज असली है और वस्तुतः वादी-अपीलार्थियों द्वारा निष्पादित किया गया है । स्वीकृत साक्षियों में से एक प्रीतम सिंह ने प्रदर्श ए-3, तारीख 9 फरवरी, 1994 के विक्रय-विलेख पर हस्ताक्षर नहीं किए थे । उसे प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों द्वारा दस्तावेज के समर्थन में यह साबित करने के लिए भी प्रस्तुत नहीं किया गया कि दस्तावेज उसकी उपस्थिति में निष्पादित हुआ था और वह उसका साक्षी था । चूंकि प्रत्यर्थी प्रदर्श ए-3 का अवलंब लेने और उसका फायदा लेने के लिए आशयित हैं, अतएव अनुप्रमाणित करने वाले साक्षियों को प्रस्तुत करने का भार उन पर था और ऐसे साक्षियों में से एक के हस्ताक्षर नहीं होने का कारण भी स्पष्ट करना

था । दस्तावेज पर उसका हस्ताक्षर अनुपस्थित होने के तथ्य को प्रतिवादी के साक्षी, प्रतिवादी साक्षी 4 अर्थात् हरिश चन्द भाटी, अधिवक्ता द्वारा स्वीकार किया गया है, जिसको उक्त दस्तावेज का लेखक होने का दावा किया गया है । निचले न्यायालय के निष्कर्षों में यह भी आया है कि अभि. सा. 1 अमर सिंह, अपीलार्थी सं. 6 ने अपने अभिसाक्ष्य में यह स्वीकार किया है कि हरिश चन्द भाटी एक अधिवक्ता था, जो अपीलार्थियों के साथ था जब उन्होंने भूमि अर्जन अधिकारी के कार्यालय से 80% प्रतिकर की रकम प्राप्त की थी और एस. एल. ए. ओ. के कार्यालय, सेक्टर-6, नोएडा से अतिशेष रकम 20% प्राप्त की थी । निचले न्यायालय द्वारा इस प्रभाव के निष्कर्ष निम्नलिखित प्रस्तुत हैं :–

> "इस स्टेज पर यह तथ्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि अमर सिंह गवाह ने अपने बयान में यह तथ्य स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि **80 प्रतिशत प्रतिकर भूमि अर्जन अधिकारी के यहां से जब उठाया था** तब उसको व अन्य वादीगण को शिनाख्त हरिश चन्द भाटी, अधिवक्ता ने की थी । **20 प्रतिशत प्रतिकर उठाने की बाबत भी हमें सेक्टर-6, नोएडा में ले गए थे** ।"

23. उपर्युक्त के होते हुए, यह मत व्यक्त किया गया कि उप-रजिस्ट्रार का कार्यालय भी सेक्टर-6, नोएडा में है और इसलिए, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वादी-अपीलार्थी 20% शेष प्रतिकर की रकम लेने के लिए उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय में गए थे । निचले न्यायालय द्वारा ऐसा कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया गया है कि कितनी प्रतिकर की रकम शेष थी जिसे वादी-अपीलार्थी द्वारा प्राप्त की जानी थी और प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों को अन्तरित की गई थी । प्रश्नगत विक्रय-विलेख के माध्यम से प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों को 20% प्रतिकर की रकम को अन्तरित करने के बारे में निष्कर्ष कुछ नहीं है अपितु, यह अनुचित, गलत और अभिलेख पर के किसी सामग्री पर आधारित नहीं है । यह दर्शित करने के लिए ऐसी कोई चीज नहीं है कि वादी 20% प्रतिकर की रकम लेने गए थे किन्तु उन्हें संदत्त नहीं किया गया था अथवा वे प्राप्त नहीं कर सके थे ।

24. विशेषज्ञ की राय के बारे में, निचले न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि दो पक्षकारों ने दोनों ओर से क्रमशः अपने-अपने मामले के समर्थन में विशेषज्ञों की राय प्रस्तुत की है । विशेषज्ञों की परीक्षा, अभि. सा. 3 और प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में की गई थी । निचले न्यायालय ने इस बारे में स्वयं अपना कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया है कि

किसकी रिपोर्ट विश्वसनीय या विश्वास किए जाने योग्य थी और यह अभिनिर्धारित किया कि इसके अन्यथा निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, यह निष्कर्ष निकालना न्यायोचित है कि प्रश्नगत दस्तावेज, वादी-अपीलार्थियों द्वारा निष्पादित की गई थी ।

25. इस प्रक्रम पर, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि यद्यपि दस्तावेज का लेखक, हरिश चन्द भाटी, जिसने उस पर हस्ताक्षर नहीं किए थे और अपने अभिसाक्ष्य में उसके द्वारा इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया गया था किन्तु उसने यह कथन किया था कि वह दस्तावेज पर हस्ताक्षर करना भूल गया होगा । इस संबंध में, सुसंगत निष्कर्ष निम्नलिखित हैं :–

> "हरिश चन्द भाटी के बैनामे प्रदर्श ए-3 पर नाम लिखा है, **लेकिन उसके हस्ताक्षर नहीं हैं, जिसकी बाबत डी. डब्ल्यू. 4 ने स्वयं बयान किया है** कि **बैनामे पर उसके हस्ताक्षर भूलवश करने से रह गए हैं** ।"

26. जब कोई दस्तावेज, उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय में रजिस्ट्रीकृत होता है तो उप-रजिस्ट्रार द्वारा भी स्वयं अपने रजिस्टर में अंगूठे के निशान और हस्ताक्षर लिए जाते हैं । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों ने उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय से समुचित अभिलेख लेने का कोई प्रयास नहीं किया, विशिष्टतया तब जब दस्तावेज को छद्म व्यक्ति द्वारा कूटरचित और काल्पनिक रूप से प्राप्त होने के आधार पर चुनौती दी गई थी । यह लेखक के साथ ही दो साक्षियों में से एक साक्षी द्वारा भी हस्ताक्षरित नहीं है ।

27. हमारे मत में, निचले न्यायालय ने विधिक त्रुटि कारित की है, प्रथमतः पूर्वोक्त दस्तावेज के कपट और मिथ्याव्यपदेशन के तथ्य को साबित करने का भार वादी-अपीलार्थियों पर डाला, इस आधार पर कि दस्तावेज के किसी साक्षी की परीक्षा वादी के साक्षियों के रूप में नहीं की गई थी । वादी-अपीलार्थियों ने जब दस्तावेज को कूटरचित और काल्पनिक के रूप में चुनौती दी थी तो उन्होंने यह कभी स्वीकार नहीं किया था कि ऐसे दस्तावेज के साक्षी के रूप में उनके द्वारा किसी व्यक्ति को स्वीकार किया गया था । अतएव, वादियों द्वारा ऐसे साक्षियों को प्रस्तुत करने का प्रश्न ही उद्भूत नहीं हो सकता था । प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों द्वारा दस्तावेज का फायदा लेने का दावा किया गया था । अतएव, दस्तावेज को साबित करने के लिए साक्षियों को प्रस्तुत करने का भार उन पर था । "सबूत का भार" और "भार" के बीच विभेद होता है ।

28. "सबूत का भार" और "साबित करने का भार" के बीच विभेद सुज्ञात है, इसलिए, इसे यहां दोहराने की आवश्यकता नहीं है । यह अत्यधिक सिद्ध है कि एक वाद फाइल किया जाता है तो साबित करने का भार उस वादी पर होता है जिसने न्यायालय से अनुतोष की ईप्सा की है और यदि वह अपने मामले को साबित करने में असफल रहता है तो वह कोई अनुतोष पाने का हकदार नहीं रह जाता है । प्रक्रम-दर-प्रक्रम साबित करने का भार स्थानांतरित होता रहता है । **अनिल ऋषि** बनाम **गुरबक्श सिंह**[1] वाले निर्णय के पैरा 19 में, "सबूत का भार" और "भार" के बीच विभेद पर चर्चा न्यायालय द्वारा की गई है । उक्त पैरा निम्नलिखित है :–

> "मामले का एक अन्य पहलू भी है, जिसे ध्यान में रखना चाहिए । सबूत का भार और साबित करने के भार के बीच विभेद मौजूद रहता है । इसके महत्व को मामले के प्रारम्भिक प्रक्रम पर ही उपधारणा कर ली जाती है । साबित करने के भार का प्रश्न में बृहत्तर बल होता है, जहां यह प्रश्न होता है कि यह किस पक्षकार पर प्रारम्भ होता है । सबूत के भार का प्रयोग तीन तरीके से किया जाता है : (i) आरम्भ में या बाद में प्रतिपादना के समर्थन में साक्ष्य प्रस्तुत करने का कर्तव्य उपदर्शित होना, (ii) सभी प्रति-साक्ष्यों के विरुद्ध प्रतिपादना को सिद्ध करना और (iii) अविभेदकारी प्रयोग, जिसमें इसका अभिप्राय या तो स्वयं के लिए या दूसरे अन्यों के लिए हो सकता है । धारा 101 का मूल नियम अनम्य है । धारा 102 के निबंधनों में आरम्भिक भार, हमेशा ही वादी पर होता है और यदि वह उस भार से उन्मोचित हो जाता है और मामले को बनाता है जिसमें वह अनुतोष का हकदार होता है तो उन परिस्थितियों को साबित करने का भार प्रतिवादी पर स्थानांतरित हो जाता है, यदि कोई हो, जिसका वादी अहकदार हो जाएगा ।"

29. **आर. वी. ई. वेंकटचला गाउडर** बनाम **अरुलमिंगू विस्वेसरस्वामी और वी. पी. टेम्पल और एक अन्य**[2] वाले मामले के पैरा 29 में न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "हक पर आधारित कब्जे की बरामदगी के लिए वाद में, वादी को अपना हक साबित करना होता है और न्यायालय का यह समाधान करना होता है कि वह विधि में, वाद संपत्ति पर प्रतिवादी को उसके

---

[1] ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 1971.

[2] जे. टी. 2004 (6) एस. सी. 442.

कब्जे से बेकब्जा करने का हकदार है और उससे कब्जा वापस लेने का भी हकदार है । तथापि, जैसा कि ए. रघुअम्मा **बनाम** ए. चेन्चम्मा वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है कि सबूत के भार और साबित करने के भार के बीच आवश्यक विभेद होता है, सबूत का भार उस व्यक्ति पर होता है जिसे तथ्य साबित करना होता है और जो कभी भी स्थानांतरित नहीं होता है । साबित करने का भार स्थानांतरित होता रहता है । ऐसे साबित करने के भार का स्थानांतरित होना साक्ष्य के मूल्यांकन में एक निरन्तर प्रक्रिया है । मेरी राय में, हक पर आधारित कब्जे के लिए वाद में जब एक बार वादी अपनी उच्चतर संभाव्यता को सृजित करने में समर्थ हो जाता है तो यह प्रतिवादी पर साबित करने का भार स्थानांतरित हो जाता है कि वह अपने साबित करने के भार को उन्मोचित करे और इसके अभाव में, जिसके अभाव में, वादी पर यह सबूत का भार होना उन्मोचित अभिनिर्धारित कर दिया जाएगा जो कि वादी के हक के सबूत की कोटि में आएगा ।"

30. कपट को साबित करने का भार उस व्यक्ति पर होता है जो कपट के बारे में अभिकथन करता है । **कृष्णा मोहन कुल** उर्फ **नानी चरन कुल और एक अन्य** बनाम **प्रतिमा मैटी और अन्य**[1] वाले मामले में, न्यायालय ने निम्नलिखित कथन किया है :–

"12. समझौता विलेख की विधिमान्यता को साबित करने का भार प्रतिवादी सं. 1 पर था । जब एक वाद में एक पक्षकार द्वारा कपट, मिथ्याव्यपदेशन या असम्यक् प्रभाव का अभिकथन किया जाता है तो सामान्यतया इसे साबित करने का भार उस पक्षकार पर होता है जो ऐसे कपट, असम्यक् प्रभाव या मिथ्याव्यपदेशन का कथन करता है । किन्तु, जब एक व्यक्ति का अन्यों के साथ वैश्वासिक संबंध होता है और बाद में, सक्रिय विश्वास की स्थिति में, कपट, मिथ्याव्यपदेशन या असम्यक् प्रभाव के अभाव को साबित करने का भार उस व्यक्ति पर होता है जो अधिष्ठायी स्थिति में होता है, उसे यह साबित करना होता है कि संव्यवहार में ऋजुता बरती गई है और यह प्रकटतः वास्तविक है, दूसरे शब्दों में, वह संव्यवहार असली और सद्भाविक है । ऐसे मामले में, संव्यवहार की सद्भावना साबित करने का भार अधिष्ठायी पक्षकार पर हो जाता है, अर्थात् यह कहा जा सकता है कि

---

[1] ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 4351.

उस पक्षकार पर जो सक्रिय विश्वास की स्थिति में होता है । एक व्यक्ति जो अन्यों के साथ वैश्वासिक संबंध रखता है उसे अपनी सावधानी बरतते हुए, उनके हित को संरक्षित करने का कर्तव्य होता है और न्यायालय ऐसे व्यक्तियों के बीच सभी संव्यवहारों को सतर्कतापूर्वक देखता है ताकि संरक्षक अपनी स्थिति का लाभ उठाते हुए, अपने प्रभाव या विश्वास का प्रयोग नहीं कर सके । जब एक पक्षकार शिकायत करते हुए, ऐसा संबंध दर्शित करता है तो विधि संव्यवहार के विरुद्ध प्रत्येक उपधारणा करती है और साबित करने का भार उस व्यक्ति पर अधिरोपित करना अभिनिर्धारित किया जाता है जो विश्वास या न्यास की स्थिति में होता है यह दर्शित करने के लिए कि संव्यवहार पूर्णतः ऋजु और युक्तियुक्त है और उसने अपनी स्थिति का कोई लाभ नहीं उठाया है ।"

31. इस प्रकार, कपट को साबित करने का भार वादियों पर था । वे साक्षी कठघरे में उन दो सह-स्वामियों को प्रस्तुत करके आरम्भिक भार से उन्मोचित हो गए थे जिन्होंने उनके आधार के समर्थन में अभिसाक्ष्य दिया था । उसके बाद, साबित करने का भार प्रतिवादियों पर स्थानांतरित हो गया था जो फायदाग्राही थे और उन्हें यह साबित करना चाहिए था कि दस्तावेज असली है । इस विभेद का निचले न्यायालय द्वारा सही मूल्यांकन नहीं किया गया । दूसरे शब्दों में, हमारे मत में, निचले न्यायालय ने उस प्रक्रम पर, जिसमें अन्य पक्षकार को साबित करने का भार स्थानांतरित हो गया था, सबूत का भार और साबित करने के भार के बीच मूल्यांकन करने में असफल होते हुए प्रकटतः विधि की त्रुटि कारित की है ।

32. सम्पूर्ण तथ्यों पर विचार करते हुए, विशिष्टतया इस तथ्य पर कि 80% प्रतिकर को वादी-अपीलार्थियों द्वारा पहले ही प्राप्त किया जा चुका है और विचारण न्यायालय ने भी यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि वे शेष 20% प्रतिकर को भी लेने गए थे । उन्होंने अधिनियम, 1894 की धारा 9 के अधीन कलक्टर की नोटिस प्राप्त करने के पश्चात् कलक्टर के समक्ष आक्षेप फाइल किया था और प्रतिकर **उर्फ** 400/- रुपए प्रति वर्ग गज के लिए दावा किया था । हमारे मत में, इन सभी तथ्यों से यह न्यायानुमत होता है कि वादी-अपीलार्थियों ने स्वयमेव ही आकलित प्रतिकर की रकम प्राप्त करने के पश्चात् उच्चतर प्रतिकर के लिए विरोध किया था । ये सभी परिस्थितियां वादियों द्वारा स्थापित मामले के प्रकाश में ही अत्यधिक सुसंगत हैं । इस बारे में, अभिलेख पर न तो कोई साक्ष्य है न ही अन्यथा

कुछ है जिससे कि यह सुरक्षित तौर पर निष्कर्ष निकाला जा सके कि तारीख 9 फरवरी, 1994 को प्रतिकर प्राप्त करने का कोई हित या अधिकार उपलब्ध था जो वादी-अपीलार्थियों द्वारा प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों को स्थानांतरित किया जा सकता था । इसके अतिरिक्त, जब उन्होंने स्वयमेव ही प्रतिकर **उर्फ** 400/- रुपए प्रति वर्ग गज के दावे पर सहमत हुए थे तो 60,000/- रुपए के बड़े प्रतिफल पर ऐसा विरोध अत्यधिक असंभाव्य है जब तक कि कुछ कारण न हों । सम्पूर्ण चर्चा में, द्वितीय प्रश्न पर हमारा यह निष्कर्ष है कि इसे अपीलार्थियों के पक्ष में निकाला जाना न्यायोचित है ।

33. इस न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, प्रश्नगत सं. 1 और 2 का उत्तर अपीलार्थियों के पक्ष में दिया जाता है और प्रश्न सं. 3 का उत्तर प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों के विरुद्ध दिया जाता है ।

34. उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस अपील में आक्षेपित निर्णय और डिक्री को कायम नहीं रखा जा सकता है ।

35. तद्नुसार, अपील मंजूर की जाती है । श्री देवेन्द्र कुमार जैन, XII अपर जिला न्यायाधीश, गाजियाबाद द्वारा क्रमशः 1996 की मूल वाद सं. 48 के साथ पठित अधिनियम, 1894 की धारा 30 के अधीन भूमि अर्जन निर्देश में तारीख 16 सितम्बर, 1998 और तारीख 29 सितम्बर, 1998 को पारित निर्णय और डिक्री, तद्द्वारा अपास्त की जाती है । वाद, डिक्री की जाती है, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि तारीख 9 फरवरी, 1994 का विक्रय-विलेख शून्य और अकृत है । एल. ए. आर. का उत्तर अपीलार्थियों के पक्ष में दिया जाता है ।

36. अपीलार्थी सभी प्रकार के खर्चों को भी पाने के हकदार होंगे ।

अपील मंजूर की गई ।

क.

अनेक सिंह और अन्य

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 25 जनवरी, 2017

न्यायमूर्ति तरुण अग्रवाल और न्यायमूर्ति प्रमोद कुमार श्रीवास्तव

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 4, 6 और 17] – रिट – राज्य सरकार द्वारा लोक प्रयोजनार्थ एवं अत्यावश्यकता में भूमि अर्जित करना – सम्बन्धित अधिसूचना जारी होना – युक्तियुक्त अवधि के भीतर अर्जन कार्यवाहियां पूर्ण नहीं किया जाना – अधिसूचना व्यपगत होना – यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि राज्य द्वारा भूमि अर्जित करने की सम्पूर्ण कार्यवाहियां युक्तियुक्त कानूनी अवधि के भीतर पूर्ण नहीं की गई हैं तो ऐसी दशा में जारी अधिसूचना व्यपगत हो जाएगी और अर्जित भूमि उसके स्वामी को वापस हो जाएगी ।

वर्तमान मामले में, याची, मौजा नरैच, तहसील इतमादपुर, जिला आगरा में स्थित भूखंड संख्या 1802, क्षेत्र 1 बीघा, 6 बिस्वा और 15 बिस्वांसी भूमि के स्वामी हैं । उक्त भूखंड को राज्य सरकार द्वारा ट्रांस यमुना आवासीय योजना (कालिंदी विहार) के प्रयोजन के लिए आगरा विकास प्राधिकरण के पक्ष में भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के अधीन अर्जित किया गया था । भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 4 के साथ पठित धारा 17 के अधीन एक अधिसूचना तारीख 3 फरवरी, 1989 को जारी की गई थी । अधिनियम, 1894 की धारा 6 के अधीन एक घोषणा तारीख 5 फरवरी, 1989 को जारी की गई थी । यह अभिकथित है कि कागजों पर भूमि का सांकेतिक कब्जा तारीख 28 अक्तूबर, 1989 को आगरा विकास प्राधिकरण के पक्ष में लिया और अधिनियम, 1894 की धारा 11 के अधीन एक अधिनिर्णय तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को पारित किया गया था । याचियों ने यह भी दलील दी कि अधिनिर्णय के अनुसरण में, याचियों को प्रतिकर, तारीख 29 दिसम्बर, 1990 और तारीख 2 अप्रैल, 1991 को अर्जित भूमि में से एक बीघा भूमि तक का ही संदत्त किया गया है । इस प्रकार, याचियों ने यह दलील दी कि शेष क्षेत्र अर्थात् 6 बिस्वा

और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया, इस आधार पर कि याची कब्जे में है और उन पर याचियों का निर्माण मौजूद है । संसद् द्वारा तारीख 1 जनवरी, 2014 से प्रभावी, भूमि अर्जन, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन में उचित प्रतिकर और पारदर्शिता अधिकार अधिनियम, 2013 अधिनियमित किया गया । अधिनियम, 2013 की धारा 24 में यह उपबंधित है कि भूमि अर्जन कार्यवाहियां कतिपय मामलों में व्यपगत समझी जाएंगी । अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) में यह अनुध्यात है कि जहां उक्त धारा 11 के अधीन अधिनिर्णय इस अधिनियम के प्रारम्भ के पांच वर्ष या उससे अधिक वर्ष पूर्व किया गया है, किन्तु भूमि का भौतिक कब्जा नहीं लिया गया है या प्रतिकर का संदाय नहीं किया गया है, वहां उक्त कार्यवाहियों के बारे में यह समझा जाएगा कि वे व्यपगत हो गई हैं और समुचित सरकार, यदि वह ऐसा विकल्प अपनाती है, अधिनियम, 2013 के उपबंधों के अनुसार, ऐसे भूमि अर्जन की कार्यवाहियां नए सिरे से आरम्भ करेंगी । पूर्वोक्त उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, याचियों ने 2015 की रिट याचिका सं. 1153, अनेक सिंह और तीन अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और तीन अन्य फाइल की, यह प्रार्थना करते हुए कि अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत हो गई हैं, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया है । रिट न्यायालय ने तारीख 11 फरवरी, 2015 के आदेश द्वारा रिट याचिका को निपटाते हुए, याचियों को यह निर्देश दिया कि वे प्रमुख सचिव, शहरी योजना और विकास, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ के समक्ष एक समुचित आवेदन फाइल करें जो उस पर विचार करेगा और उस पर तीन माह के भीतर युक्तियुक्त और सकारण आदेश पारित करेगा । उक्त आदेश के अनुसरण में, याचियों ने प्रमुख सचिव, आवास और शहरी विकास, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ के समक्ष एक समुचित अभ्यावेदन फाइल किया । प्रमुख सचिव ने याचियों के अभ्यावेदन और आगरा विकास प्राधिकरण द्वारा फाइल आक्षेपों पर विचार करने के पश्चात् तारीख 1 जनवरी, 2016 का आक्षेपित आदेश पारित किया और याचियों के अभ्यावेदन को नामंजूर करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत नहीं हुई हैं । प्रमुख सचिव ने यह पाया कि सांकेतिक कब्जा आगरा विकास प्राधिकरण के पास था और उनके नाम राजस्व अभिलेखों में नामांतरित हो गए हैं । इतना ही नहीं, सड़क, ड्रेन, सीवर लाइन और विद्युत के विकास कार्य पहले ही किए जा चुके हैं । प्रमुख सचिव ने यह पाया कि आगरा विकास प्राधिकरण द्वारा प्रतिकर की राशि

विशेष भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष जमा कर दी गई थी और यह कि याचियों ने जानबूझकर विशेष भूमि अर्जन अधिकारी से प्रतिकर राशि प्राप्त नहीं की थी और इसलिए अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत नहीं हुई हैं । पूर्वोक्त आदेश से व्यथित होकर याचियों ने वर्तमान रिट याचिका फाइल की, यह प्रार्थना करते हुए कि न केवल इसे अभिखंडित किया जाए अपितु परमादेश का रिट इस निमित्त जारी करने के लिए भी प्रार्थना की कि अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) को ध्यान में रखते हुए, भूखंड सं. 1802 के संबंध में 6 बिस्वा, 15 बिस्वांसी भूमि की सीमा तक अर्जन कार्यवाहियों को व्यपगत कर दिया जाए । न्यायालय द्वारा रिट याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह प्रकटतः स्पष्ट होता है कि वर्तमान मामले में, अधिनिर्णय, अधिनियम, 1894 की धारा 11 के अधीन अधिनियम, 2013 आरम्भ होने के 5 वर्षों से अधिक पूर्व पारित किया गया था । विवाद्यक यह है कि क्या प्रत्यर्थियों द्वारा भूमि का भौतिक कब्जा लिया गया था । तथापि, न्यायालय के लिए इस विषय पर विचार करना आवश्यक नहीं है क्योंकि यह अतात्विक हो जाता है क्योंकि अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) का द्वितीय अवयव इस स्थिति को आच्छादित करता है, अर्थात् यह कि प्रत्यर्थियों द्वारा याचियों को 6 बीघा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया है । यह तथ्य कि आगरा विकास प्राधिकरण ने विशेष भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष प्रतिकर जमा किया था, अतात्विक है । तात्विक यह है कि यदि याचियों ने प्रतिकर स्वीकार करने से इनकार कर दिया था तो कलक्टर की यह बाध्यता थी कि वह निर्देश न्यायालय में प्रतिकर की रकम जमा कर दे । मात्र जब कलक्टर न्यायालय में प्रतिकर की रकम जमा कर देता है तो वह कलक्टर पर अधिरोपित बाध्यता का निर्वहन करता है अन्यथा वह ऐसी बाध्यता का निर्वहन नहीं करता है और अर्जन कार्यवाहियां, अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) के अधीन व्यपगत होनी समझी जाएंगी । न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि प्रमुख सचिव ने याचियों की दलील को इस आधार पर इनकार कर दिया था कि आगरा विकास प्राधिकरण द्वारा सम्पूर्ण प्रतिकर, विशेष भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष जमा कर दिया गया था और याचियों ने जानबूझकर प्रश्नगत भूमि में से शेष 6 बीघा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए प्रतिकर नहीं उठाया था । दोनों आधार, माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों के प्रकाश में अतात्विक हैं । मात्र यह तथ्य कि आगरा विकास प्राधिकरण ने विशेष भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष रकम जमा कर दी है, अतात्विक है । कलक्टर

द्वारा रकम जमा करना अपेक्षित होता है यदि निर्देश न्यायालय के समक्ष याचियों को रकम संदत्त नहीं की गई है, जैसा कि वर्तमान मामले में नहीं किया गया है । मात्र यह तथ्य कि याचियों ने प्रतिकर प्राप्त करने से इनकार कर दिया था, भी अतात्विक हो जाता है । तात्विक यह है कि कलक्टर की यह बाध्यता है कि वह याचियों को प्रतिकर संदाय करने की प्रस्थापना करता, जिसका वर्तमान मामले में अभाव है और अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं लाया गया है जिससे यह उपदर्शित होता हो कि याचियों से प्रतिकर लेने की प्रार्थना की गई थी । कलक्टर की बाध्यता मात्र इस कारण से ही समाप्त नहीं हो जाती है कि याचियों ने प्रतिकर लेने से इनकार कर दिया है । कलक्टर की बाध्यता तब तक निरन्तर बनी रहती है जब तक कि ऐसे प्रतिकर को निर्देश न्यायालय के समक्ष जमा नहीं कर दिया जाता है । चूंकि, 6 बिस्वा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए प्रतिकर, याचियों को संदत्त नहीं किया गया है, इसलिए, अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) के उपबंध लागू होंगे । न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि भूखंड सं. 1802 में से 6 बिस्वा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत हो गई हैं क्योंकि याचियों को कोई प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया है । (पैरा 14, 15 और 16)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2016]	ए. आई. आर. 2016 एस. सी. 4275 : **दिल्ली विकास प्राधिकरण** बनाम **सुखवीर सिंह और अन्य** ;	13
[2015]	(2015) 3 एस. सी. सी. 353 : **श्रीबालाजी नगर आवासीय एसोसिएशन** बनाम **तमिलनाडु राज्य** ;	12
[2015]	(2015) 3 एस. सी. सी. 597 = 2014 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6625 : **सीता राम** बनाम **हरियाणा राज्य और एक अन्य** ;	12
[2015]	(2015) 4 एस. सी. सी. 347 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 440 : **राम किशन और अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य और अन्य** ;	12

[2015]	(2015) 4 एस. सी. सी. 325 : **वेलक्सन कुमार** बनाम **भारत संघ और अन्य ;**	12
[2014]	(2014) 3 एस. सी. सी. 183 : **पुणे नगर निगम और एक अन्य** बनाम **हरकचन्द मिश्रिमल सोलंकी और अन्य ;**	10,11,12
[2014]	(2014) 6 एस. सी. सी. 583 : **विमला देवी और अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य और अन्य ;**	12
[2014]	(2014) 6 एस. सी. सी. 564 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 2242 : **भारत संघ और अन्य** बनाम **शिव राज और अन्य ;**	12
[2013]	(2013) 15 एस. सी. सी. 410 : **हरियाणा राज्य और एक अन्य** बनाम **विनोद आयल एण्ड जनरल मिल्स ।**	12

आरम्भिक (सिविल रिट) अधिकारिता : 2016 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 13927.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याचियों की ओर से — सर्वश्री शिव राज सिंह और एच. एन. सिंह, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री एम. सी. चतुर्वेदी और सुरेश चन्द्र द्विवेदी, विद्वान् स्थायी काउंसेल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति तरुण अग्रवाल ने दिया ।

न्या. अग्रवाल – रिट याचिका फाइल करने के मुख्य तथ्य ये हैं कि याची, मौजा नरैच, तहसील इतमादपुर, जिला आगरा में स्थित भूखंड संख्या 1802, क्षेत्र 1 बीघा, 6 बिस्वा और 15 बिस्वांसी भूमि के स्वामी हैं । उक्त भूखंड को राज्य सरकार द्वारा ट्रांस यमुना आवासीय योजना (कांलिदी विहार) के प्रयोजन के लिए आगरा विकास प्राधिकरण के पक्ष में भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के अधीन अर्जित किया गया था । भूमि अर्जन

अधिनियम, 1894 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "पुराना अधिनियम" के रूप में निर्दिष्ट किया गया है) की धारा 4 के साथ पठित धारा 17 के अधीन एक अधिसूचना तारीख 3 फरवरी, 1989 को जारी की गई थी । अधिनियम, 1894 की धारा 6 के अधीन एक घोषणा तारीख 5 फरवरी, 1989 को जारी की गई थी ।

2. यह अभिकथित है कि कागजों पर भूमि का सांकेतिक कब्जा तारीख 28 अक्तूबर, 1989 को आगरा विकास प्राधिकरण के पक्ष में लिया और अधिनियम, 1894 की धारा 11 के अधीन एक अधिनिर्णय तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को पारित किया गया था । याचियों ने यह भी दलील दी कि अधिनिर्णय के अनुसरण में, याचियों को प्रतिकर, तारीख 29 दिसम्बर, 1990 और तारीख 2 अप्रैल, 1991 को अर्जित भूमि में से एक बीघा भूमि तक का ही संदत्त किया गया है । इस प्रकार, याचियों ने यह दलील दी कि शेष क्षेत्र अर्थात् 6 बिस्वा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया, इस आधार पर कि याची कब्जे में है और उन पर याचियों का निर्माण मौजूद है ।

3. संसद् द्वारा तारीख 1 जनवरी, 2014 से प्रभावी, भूमि अर्जन, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन में उचित प्रतिकर और पारदर्शिता अधिकार अधिनियम, 2013 (जिसे इसमें इसके पश्चात्, "अधिनियम, 2013" कहा गया है) अधिनियमित किया गया । अधिनियम, 2013 की धारा 24 में यह उपबंधित है कि भूमि अर्जन कार्यवाहियां कतिपय मामलों में व्यपगत समझी जाएंगी । अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) में यह अनुध्यात है कि जहां उक्त धारा 11 के अधीन अधिनिर्णय इस अधिनियम के प्रारम्भ के पांच वर्ष या उससे अधिक वर्ष पूर्व किया गया है, किन्तु भूमि का भौतिक कब्जा नहीं लिया गया है या प्रतिकर का संदाय नहीं किया गया है, वहां उक्त कार्यवाहियों के बारे में यह समझा जाएगा कि वे व्यपगत हो गई हैं और समुचित सरकार, यदि वह ऐसा विकल्प अपनाती है, इस अधिनियम, 2013 के उपबंधों के अनुसार ऐसे भूमि अर्जन की कार्यवाहियां नए सिरे से आरम्भ करेंगी ।

4. पूर्वोक्त उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, याचियों ने 2015 की रिट याचिका सं. 1153, अनेक सिंह और तीन अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और तीन अन्य फाइल की, यह प्रार्थना करते हुए कि अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत हो गई हैं, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया है । रिट न्यायालय ने तारीख 11 फरवरी, 2015 के आदेश द्वारा

रिट याचिका को निपटाते हुए, याचियों को यह निर्देश दिया कि वे प्रमुख सचिव, शहरी योजना और विकास, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ के समक्ष एक समुचित आवेदन फाइल करें जो उस पर विचार करेगा और उस पर तीन माह के भीतर युक्तियुक्त और सकारण आदेश पारित करेगा ।

5. उक्त आदेश के अनुसरण में, याचियों ने प्रमुख सचिव, आवास और शहरी विकास, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ के समक्ष एक समुचित अभ्यावेदन फाइल किया । प्रमुख सचिव ने याचियों के अभ्यावेदन और आगरा विकास प्राधिकरण द्वारा फाइल आक्षेपों पर विचार करने के पश्चात् तारीख 1 जनवरी, 2016 का आक्षेपित आदेश पारित किया और याचियों के अभ्यावेदन को नामंजूर करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत नहीं हुई हैं । प्रमुख सचिव ने यह पाया कि सांकेतिक कब्जा आगरा विकास प्राधिकरण के पास था और उनके नाम राजस्व अभिलेखों में नामांतरित हो गए हैं । इतना ही नहीं, सड़क, ड्रेन, सीवर लाइन और विद्युत के विकास कार्य पहले ही किए जा चुके हैं । प्रमुख सचिव ने यह पाया कि आगरा विकास प्राधिकरण द्वारा प्रतिकर की राशि विशेष भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष जमा कर दी गई थी और यह कि याचियों ने जानबूझकर विशेष भूमि अर्जन अधिकारी से प्रतिकर राशि प्राप्त नहीं की थी और इसलिए अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत नहीं हुई हैं । पूर्वोक्त आदेश से व्यथित होकर याचियों ने वर्तमान रिट याचिका फाइल की, यह प्रार्थना करते हुए कि न केवल इसे अभिखंडित किया जाए अपितु परमादेश का रिट इस निमित्त जारी करने के लिए भी प्रार्थना की कि अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) को ध्यान में रखते हुए, भूखंड सं. 1802 के संबंध में 6 बिस्वा, 15 बिस्वांसी भूमि की सीमा तक अर्जन कार्यवाहियों को व्यपगत कर दिया जाए ।

6. हमने, याचियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री एच. एन. सिंह, जिनकी सहायता श्री शिव राज सिंह ने की और आगरा विकास प्राधिकरण के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल, श्री एम. सी. चतुर्वेदी, जिनकी सहायता श्री सुरेश चन्द्र द्विवेदी ने की और उत्तर प्रदेश राज्य के विद्वान् काउंसेल को सुना ।

7. विचार के लिए संक्षिप्त प्रश्न यह उद्भूत होता है कि क्या अर्जन कार्यवाहियां, जो पुराने अधिनियम के अधीन आरम्भ की गई थीं, अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, व्यपगत हो गई

हैं या नहीं ? आगरा विकास प्राधिकरण का आधार, जैसा कि आक्षेपित आदेश के साथ ही प्रति-शपथपत्र से प्रदर्शित होता है, यह है कि उनके नाम राजस्व अभिलेखों में पहले ही नामांतरित हो गए हैं । भूमि का कब्जा प्रत्यर्थियों के पास है किन्तु, याचियों ने अवैध तौर पर पुनः उस पर आधिपत्य कर लिया है । इतना ही नहीं, प्रश्नगत भूमि पर विकास कार्य पहले ही किए जा चुके हैं और यह कि सम्पूर्ण प्रतिकर, विशेष भूमि अर्जन अधिकारी के पास पहले ही जमा किए जा चुके हैं । इतना ही नहीं, याचियों ने जानबूझकर शेष भूखंड माप 6 बिस्वा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए प्रतिकर नहीं लिया है और इसलिए, याचियों की गलती के कारण प्रश्नगत कार्यवाहियां व्यपगत नहीं की जा सकती हैं ।

8. स्वीकृत, प्रास्थिति यह है कि जो याचियों और प्रत्यर्थियों द्वारा किए गए प्रत्याख्यान से निकलते हैं, यह है कि भूमि को पुराने अधिनियम की धारा 4 और 6 के अधीन अर्जित किया गया था । एक अधिनिर्णय, तारीख 26 अक्तूबर, 1990 को किया गया था । एक बीघा भूमि के लिए प्रतिकर याचियों को तारीख 29 दिसम्बर, 1990 और तारीख 2 अप्रैल, 1991 को संदत्त कर दिया गया था, स्वीकृततः, उस शेष भूमि के लिए याचियों को प्रतिकर संदत्त कर दिया गया था, जो अर्जित किया गया था, अर्थात् भूखंड सं. 1802 में 6 बीघा और 15 बिस्वांसी भूमि ।

9. पूर्वोक्त स्वीकृत प्रास्थिति के प्रकाश में, अधिनियम, 2013 की धारा 24 के उपबंधों को निर्दिष्ट किया जाना आवश्यक होगा । सुविधा के लिए इसे निम्नलिखित उद्धृत किया जाता है :–

"24. **कतिपय मामलों में 1894 के अधिनियम 1 में अधीन भूमि अर्जन की प्रक्रिया का व्यपगत हुआ समझा जाना** – (1) इस अधिनियम में अंतर्विष्ट किसी मामले के होते हुए भी, भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 (1894 का 1) के अधीन आरम्भ की गई भूमि अर्जन की कार्यवाहियों के ऐसे किसी मामले में, –

(क) जहां उक्त भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 11 के अधीन कोई अधिनिर्णय नहीं किया गया है, वहां प्रतिकर का अवधारण किए जाने से संबंधित इस अधिनियम के सभी उपबंध लागू होंगे ; या

(ख) जहां उक्त धारा 11 के अधीन कोई अधिनिर्णय किया

गया है, वहां ऐसी कार्यवाहियां उक्त भूमि अर्जन अधिनियम के उपबंधों के अधीन उसी प्रकार जारी रहेंगी मानो उक्त अधिनियम निरसित नहीं किया गया है ।

(2) उपधारा (1) में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 (1894 का 1) के अधीन आरम्भ की गई भूमि अर्जन की कार्यवाहियों की दशा में, जहां उक्त धारा 11 के अधीन अधिनिर्णय इस अधिनियम के प्रारम्भ के पांच वर्ष या उससे अधिक वर्ष पूर्व किया गया है, किन्तु भूमि का भौतिक कब्जा नहीं लिया गया है या प्रतिकर का संदाय नहीं किया गया है, वहां उक्त कार्यवाहियों के बारे में यह समझा जाएगा कि वे व्यपगत हो गई हैं और समुचित सरकार, यदि वह ऐसा विकल्प अपनाती है, इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार ऐसे भूमि अर्जन की कार्यवाहियां नए सिरे से आरम्भ करेंगी :

परन्तु, जहां अधिनिर्णय किया गया है और अधिकांश भू-धृतियों की बाबत प्रतिकर फायदाग्राहियों के खाते में जमा नहीं किया गया है, वहां अधिसूचना में विनिर्दिष्ट सभी फायदाग्राही उक्त भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 4 के अधीन अर्जन के लिए इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार प्रतिकर के हकदार होंगे ।"

10. पूर्वोक्त उपबंधों का निर्वचन माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **पुणे नगर निगम और एक अन्य** बनाम **हरकचन्द मिश्रिमल सोलंकी और अन्य**[1] वाले मामले में किया गया था जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है :–

"10. जहां तक धारा 24 की उपधारा (1) का संबंध है, यह सर्वोपरि खंड के साथ आरम्भ होता है । इसके द्वारा संसद् ने इस उपबंध को अधिनियम, 2013 के अन्य सभी उपबंधों के ऊपर अभिभावी प्रभाव दिया है । खंड (क) में यह उपबंधित है कि जहां उक्त भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 11 के अधीन कोई अधिनिर्णय नहीं किया गया है, वहां प्रतिकर का अवधारण किए जाने से संबंधित इस अधिनियम के सभी उपबंध लागू होंगे । धारा 24 (1) का खंड (ख) यह उपबंध करता है कि जहां अधिनियम, 1894 के अधीन

[1] (2014) 3 एस. सी. सी. 183.

अर्जन कार्यवाहियां आरम्भ की गई हैं और धारा 11 के अधीन कोई अधिनिर्णय किया गया है, वहां ऐसी कार्यवाहियां अधिनियम, 1894 के अधीन उसी प्रकार जारी रहेंगी मानो उक्त अधिनियम निरसित नहीं किया गया है ।

11. धारा 24(2) सर्वोपरि खंड के साथ आरम्भ होता है यह उपबंध धारा 24(1) के ऊपर अभिभावी प्रभाव रखता है । धारा 24(2) यह अधिनियमित करता है कि अधिनियम, 1894 के अधीन आरम्भ की गई भूमि अर्जन कार्यवाहियों के संबंध में, जहां अधिनिर्णय, अधिनियम, 2013 के प्रारम्भ के 5 वर्ष या उससे अधिक वर्ष पूर्व किया गया है और दो आकस्मिकताओं का समाधान होता है अर्थात् (i) भूमि का भौतिक कब्जा नहीं लिया गया है या (ii) प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया है, वहां उक्त कार्यवाहियों के बारे में यह समझा जाएगा कि वे व्यपगत हो गई हैं । ऐसी अर्जन कार्यवाहियों के व्यपगत होने पर, यदि समुचित सरकार भूमि अर्जन का विकल्प चुनती है, जो अधिनियम, 1894 के अधीन अर्जन की विषयवस्तु थी तो अधिनियम, 2013 के अधीन नए सिरे से कार्यवाहियां आरम्भ की जा सकती हैं । धारा 24(2) से संलग्न परन्तुक उस परिस्थिति पर विचार करता है जहां अधिनियम, 1894 के अधीन आरम्भ अर्जन कार्यवाहियों के संबंध में, अधिनिर्णय किया गया है और अधिकांश भू-धृतियों की बाबत प्रतिकर फायदाग्राहियों के खाते में जमा नहीं किया गया है, वहां धारा 4 के अधीन अधिसूचना में विनिर्दिष्ट सभी फायदाग्राही अधिनियम, 2013 के अधीन प्रतिकर के हकदार होंगे ।

17. .... इसलिए, हमारा यह मत है कि धारा 24(2) के प्रयोजनों के लिए प्रतिकर, 'संदत्त' किए जाएंगे यदि प्रतिकर हितबद्ध व्यक्तियों को प्रस्थापित किया गया है और ऐसा प्रतिकर उस न्यायालय में जमा किया गया है जहां अधिनियम, 1894 की धारा 31(2) के अधीन अनुध्यात आकस्मिकताओं में से कोई भी घटित होने पर धारा 18 के अधीन निर्देश किया जा सकता है । दूसरे शब्दों में, प्रतिकर, धारा 24(2) के अर्थान्तर्गत 'संदत्त' किया गया कहा जा सकता है जब कलक्टर (या उस मामले के लिए भूमि अर्जन अधिकारी) अपनी बाध्यताओं का निर्वहन करता है और न्यायालय में प्रतिकर की रकम जमा करता है और उस रकम को विचार करने के लिए हितबद्ध व्यक्ति को उपलब्ध कराता है, जैसा कि धारा 32 और

33 में उपबंधित है ।"

11. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **पुणे नगर निगम** (उपर्युक्त) वाले मामले में, यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि धारा 24(2) के अधीन अनुध्यात दोनों आकस्मिकताओं में से किसी का समाधान हो जाता है अर्थात् भूमि का भौतिक कब्जा नहीं लिया गया है या प्रतिकर संदत्त कर दिया गया है तो उस दशा में, ऐसी अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत समझी जाएंगी । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि जहां हितबद्ध को प्रतिकर प्रस्थापित किया जाना है और यदि प्रतिकर, ऐसे हितबद्ध व्यक्ति को संदत्त नहीं किया गया है तो ऐसे प्रतिकर को निर्देश न्यायालय में जमा करना अपेक्षित होता है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि कलक्टर अपनी बाध्यताओं का निर्वहन करता है यदि प्रतिकर न्यायालय में, जमा करता है अन्यथा वह अपनी बाध्यताओं का निर्वहन नहीं करता है ।

12. **पुणे नगर निगम** (उपर्युक्त) वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के पूर्वोक्त विनिश्चय का अनुसरण, **विमला देवी और अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य और अन्य**[1], **भारत संघ और अन्य** बनाम **शिव राज और अन्य**[2], **श्रीबालाजी नगर आवासीय एसोशिएशन** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[3], **हरियाणा राज्य** बनाम **विनोद आयल एण्ड जनरल मिल्स**[4], **सीता राम** बनाम **हरियाणा राज्य और एक अन्य**[5], **राम किशन और अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य और अन्य**[6], **वेलक्सन कुमार** बनाम **भारत संघ और अन्य**[7] वाले मामलों में किया गया ।

13. माननीय उच्चतम न्यायालय ने पुनः **दिल्ली विकास प्राधिकरण** बनाम **सुखवीर सिंह और अन्य**[8] वाले मामले में, यह अभिनिर्धारित किया कि पुराने अधिनियम, 1894 की कानूनी स्कीम, यह प्रकटतः स्पष्ट करती है कि कलक्टर उन अधिनिर्णीत व्यक्तियों को प्रतिकर का संदाय करेगा जो

---

[1] (2014) 6 एस. सी. सी. 583.
[2] (2014) 6 एस. सी. सी. 564 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. 2242.
[3] (2015) 3 एस. सी. सी. 353.
[4] (2013) 15 एस. सी. सी. 410.
[5] (2015) 3 एस. सी. सी. 597 = 2014 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6625.
[6] (2015) 4 एस. सी. सी. 347 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 440.
[7] (2015) 4 एस. सी. सी. 325.
[8] ए. आई. आर. 2016 एस. सी. 4275.

हितबद्ध हैं और अधिनिर्णय के अनुसार उसके हकदार हैं । ऐसे व्यक्ति को अधिनिर्णय में उल्लिखित रकम संदत्त करना होता है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि कलक्टर का यह कर्तव्य है कि वह अधिनिर्णय होने के पश्चात् यथासंभव शीघ्र संदाय करे और मात्र ऐसी स्थिति में, जहां हितबद्ध व्यक्ति देय प्रतिकर प्राप्त करने से इनकार करता है या जहां प्रतिकर प्राप्त करने में कोई व्यक्ति सक्षम नहीं है या इस बात की संभाव्यता है कि इस बारे में विवाद है कि प्रतिकर या इसका प्रभाजन प्राप्त करने के लिए कौन हकदार है उस दशा में, कलक्टर से निर्देश न्यायालय में प्रतिकर की रकम जमा करना अपेक्षित होता है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि :–

> "12. धारा 24(1) सर्वोपरि खंड के साथ आरम्भ होती है और उस स्थिति को आच्छांदित करता है जहां या तो भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के अधीन अधिनिर्णय नहीं किया गया है, उस दशा में, प्रतिकर का अवधारण करने से संबंधित अधिनियम, 2013 के अत्यधिक फायदाग्राही उपबंध लागू होंगे या जहां धारा 11 के अधीन अधिनिर्णय किया गया है, भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के उपबंधों के अधीन भूमि अर्जन कार्यवाहियां जारी रहेंगी, यदि उक्त अधिनियम निरसित नहीं हुआ है ।
>
> 13. धारा 24(1)(ख), धारा 24(2) का एक महत्वपूर्ण अपवाद गठित करता है । धारा 24(2) के आवश्यक अवयव निम्नलिखित हैं –
>
> (क) धारा 24(2) हानि से परे उपधारा (1) को कायम रखते हुए, सर्वोपरि खंड के साथ आरम्भ होता है,
>
> (ख) इसे लागू करने के लिए भूमि अर्जन कार्यवाहियों, भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 के अधीन आरम्भ की जानी चाहिएं,
>
> (ग) यह भी कि धारा 11 के अधीन अधिनिर्णय, अधिनियम, 2013 के आरम्भ होने के 5 वर्ष या इससे पूर्व किया गया होना चाहिए,
>
> (घ) भूमि का भौतिक कब्जा, यदि नहीं लिया गया है या प्रतिकर, यदि संदत्त नहीं किया गया है तो भूमि अर्जन कार्यवाहियों के लिए यह अनिवार्य है कि वे भूमि अर्जन

अधिनियम, 1894 के अधीन आरम्भ की गई थी,

(ङ) यह कथन करते हुए, उद्घोषणा होना अनिवार्य है कि उक्त कार्यवाहियां व्यपगत होनी समझी जाएंगी और समुचित सरकार, यदि ऐसा विकल्प अपनाती है तो सांप-सीढ़ी के इस खेल को सभी प्रकार से पुनः आरम्भ कर सकती है ।

14. इसलिए, धारा 24(2) के परिशीलन से यह परिदृश्य स्पष्ट होती है कि राज्य का नागरिकों की संपत्ति से स्वत्वहरण करने का कारबार नहीं है, यदि अधिनिर्णय किया गया है और 5 वर्ष या इससे अधिक अवधि से पूर्ण अर्जन करने के लिए आवश्यक कदम नहीं उठाए गए हैं । इन कदमों में भूमि का भौतिक कब्जा लेना और प्रतिकर संदाय करना सम्मिलित होता है । विधान-मंडल का प्रभावी आशय कार्यपालिका से यह अपेक्षा करता है कि उन्हें विधान-मंडल के आशय के अनुसरण में कार्य करना चाहिए और अधिनिर्णय उद्घोषित होने के पश्चात् युक्तियुक्त समय के भीतर अर्जन कार्यवाहियों को पूर्ण करना चाहिए । यदि 5 वर्ष की विधायी सीमा के पश्चात् भी ऐसा नहीं किया जाता है तो यह विधायी सहनशीलता की सीमा को पार करेगा जिसके पश्चात् सम्पूर्ण कार्यवाहियां व्यपगत होनी समझी जाएंगी । यह नोटिस करना महत्वपूर्ण है कि धारा तभी लागू होती है जब यदि अर्जन कार्यवाहियां अधिनिर्णय उद्घोषित करने के पश्चात् 5 वर्षों के भीतर पूरी नहीं की जाती हैं । यह या तो भूमि का भौतिक कब्जा नहीं लेने के कारण घटित हो सकती हैं या 5 वर्षों की उक्त अवधि के भीतर प्रतिकर संदत्त नहीं करने के कारण घटित हो सकती हैं । एक कमजोर निवेदन इस प्रभाव का किया गया है कि 'या' को 'और' के साथ परिशीलन करना चाहिए जो दो कारणों से घटित होती हैं । उपधारा का साधारण स्वभाविक अर्थ विधान-मण्डल द्वारा जानबूझकर प्रयुक्त भाषा को प्रतिस्थापित करने के लिए हमें आकर्षित नहीं करती हैं, द्वितीयतः, अधिनियम, 1894 और धारा 24 का उद्देश्य विशिष्टतः यह है कि यदि 5 वर्ष या उससे अधिक समय से अधिनिर्णय किया गया है तो इस अवधि के भीतर कब्जा ले लिया जाना चाहिए या अन्यथा यह कानूनी उपधारणा है कि स्वयं की सम्पत्ति को प्रतिधारित रखने के नागरिकों के अधिकारों और लोक प्रयोजन के लिए राज्य द्वारा इसके स्वत्वहरण करने के अधिकारों के बीच संतुलन इस प्रकार बाधित होता है कि इससे अर्जन कार्यवाहियां

व्यपगत हो जाती हैं । वैकल्पिक रूप में, यदि, प्रतिकर इस अवधि के भीतर संदत्त नहीं किया गया है तो यह भी कानूनी उपधारणा है कि पूर्वोक्त संतुलन इस प्रकार बाधित हो जाता है कि ऐसी सम्पत्ति अर्जन से स्वतंत्र हो जाती है ।"

14. पूर्वोक्त के प्रकाश में, यह प्रकटतः स्पष्ट होता है कि वर्तमान मामले में, अधिनिर्णय, अधिनियम, 1894 की धारा 11 के अधीन अधिनियम, 2013 आरम्भ होने के 5 वर्षों से अधिक पूर्व पारित किया गया था । विवाद्यक यह है कि क्या प्रत्यर्थियों द्वारा भूमि का भौतिक कब्जा लिया गया था । तथापि, न्यायालय के लिए इस विषय पर विचार करना आवश्यक नहीं है क्योंकि यह अतात्विक हो जाता है क्योंकि अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) का द्वितीय अवयव इस स्थिति को आच्छादित करता है, अर्थात् यह कि प्रत्यर्थियों द्वारा याचियों को 6 बीघा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया है । यह तथ्य कि आगरा विकास प्राधिकरण ने विशेष भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष प्रतिकर जमा किया था, अतात्विक है । तात्विक यह है कि यदि याचियों ने प्रतिकर स्वीकार करने से इनकार कर दिया था तो कलक्टर की यह बाध्यता थी कि वह निर्देश न्यायालय में प्रतिकर की रकम जमा कर दे । मात्र जब कलक्टर ने न्यायालय में प्रतिकर की रकम जमा कर देता है तो वह कलक्टर पर अधिरोपित बाध्यता का निर्वहन करता है अन्यथा वह ऐसी बाध्यता का निर्वहन नहीं करता है और अर्जन कार्यवाहियां, अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) के अधीन व्यपगत होनी समझी जाएंगी ।

15. हमारा यह निष्कर्ष है कि प्रमुख सचिव ने याचियों की दलील को इस आधार पर इनकार कर दिया था कि आगरा विकास प्राधिकरण द्वारा सम्पूर्ण प्रतिकर, विशेष भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष जमा कर दिया गया था और याचियों ने जानबूझकर प्रश्नगत भूमि में से शेष 6 बीघा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए प्रतिकर नहीं उठाया था । दोनों आधार, माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों के प्रकाश में अतात्विक हैं । मात्र यह तथ्य कि आगरा विकास प्राधिकरण ने विशेष भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष रकम जमा कर दी है, अतात्विक है । कलक्टर द्वारा रकम जमा करना अपेक्षित होता है यदि निर्देश न्यायालय के समक्ष याचियों को रकम संदत्त नहीं की गई है, जैसा कि वर्तमान मामले में नहीं किया गया है । मात्र यह तथ्य कि याचियों ने प्रतिकर प्राप्त करने से इनकार कर दिया था,

भी अतात्विक हो जाता है । तात्विक यह है कि कलक्टर की यह बाध्यता है कि वह याचियों को प्रतिकर संदाय करने की प्रस्थापना करता, जिसका वर्तमान मामले में अभाव है और अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं लाया गया है जिससे यह उपदर्शित होता हो कि याचियों से प्रतिकर लेने की प्रार्थना की गई थी । कलक्टर की बाध्यता मात्र इस कारण से ही समाप्त नहीं हो जाती है कि याचियों ने प्रतिकर लेने से इनकार कर दिया है । कलक्टर की बाध्यता तब तक निरन्तर बनी रहती है जब तक कि ऐसे प्रतिकर को निर्देश न्यायालय के समक्ष जमा नहीं कर दिया जाता है ।

16. चूंकि, 6 बिस्वा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए प्रतिकर, याचियों को संदत्त नहीं किया गया है, इसलिए, अधिनियम, 2013 की धारा 24(2) के उपबंध लागू होंगे । हमें, यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि भूखंड सं. 1802 में से 6 बिस्वा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत हो गई हैं क्योंकि याचियों को कोई प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया है ।

17. पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, प्रमुख सचिव, आवास और शहरी विकास, उत्तर प्रदेश, लखनऊ द्वारा पारित तारीख 1 जनवरी, 2016 का आक्षेपित आदेश कायम नहीं रखा जा सकता है और तद्द्वारा इसे अभिखंडित किया जाता है ।

18. रिट याचिका मंजूर की जाती है । तद्नुसार, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि याचियों से संबंधित भूखंड सं. 1802 में से 6 बिस्वा और 15 बिस्वांसी भूमि के लिए अर्जन कार्यवाहियां व्यपगत होनी समझी जाएंगी ।

रिट याचिका मंजूर की गई ।

क.

नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड*

बनाम

श्रीमती वृन्दा देवी और अन्य

तारीख 11 अप्रैल, 2017

न्यायमूर्ति अशोक कुमार

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 173, 147 और 149 – प्रश्नगत यान द्वारा दुर्घटना कारित होना – प्रश्नगत यान का उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाया जाना साबित होना – यान चालन के दौरान चालक के पास वैध चालन अनुज्ञप्ति होना – दुर्घटना दावा – बीमा कम्पनी का दायित्व – प्रतिकर की मात्रा – यदि यह साबित हो जाता है कि प्रश्नगत यान के चालक द्वारा यान को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाए जाने के कारण दुर्घटना घटित हुई है और चालक के पास वैध अनुज्ञप्ति थी तथा दुर्घटना के परिणामस्वरूप आहत व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो प्रतिकर के लिए बीमा कम्पनी दायी अभिनिर्धारित होगी और प्रतिकर की मात्रा, मृतक की आयु, आर्थिक स्थिति, आय के साधन और आश्रितों की संख्या आदि को ध्यान में रखते हुए, मान्य गुणक के अनुसार अवधारित की जाएगी और इस प्रकार अवधारित प्रतिकर युक्तियुक्त और विधिमान्य होगी ।

वर्तमान मामले में, मृतक मंगल प्रसाद पुत्र सुघन प्रसाद साकिन मौजा बर्जुग थाना तुर्कपट्टी जिला कुशीनगर हाल मुकाम देवरिया जनपद देवरिया उम्र 27 साल जो सब्जी का व्यापार करता था और उससे 200/- रुपए प्रतिदिन की आय करता था तथा याचीगण श्रीमती वृन्दा देवी (मृतक की पत्नी) सुघन प्रसाद, श्रीमती बुधिया (मृतक के माता-पिता) अभिमन्यु, कुमारी रेनू, रिकेश, कुमारी रिक्की (मृतक के बच्चे) मृतक की आय पर ही आश्रित थे । दिनांक 15 जून, 2000 को समय करीब दिन के 4.00 बजे जब मंगल प्रसाद जीप नं. यू पी 53 के 4115 से यात्रा कर रहा था और जैसे ही यह जगदीशपुर गांव के समीप पहुंची कि जीप चालक के तेजी व लापरवाही से चलाए जाने के कारण ट्रक नं. यू पी 78 बी 2383 में टक्कर मार दी जिससे मंगल प्रसाद गंभीर रूप से घायल हो गया और उन्हीं चोटों

---

* मूल निर्णय हिन्दी में है ।

के कारण उसकी मृत्यु हो गई । घटना की प्रथम सूचना रिपोर्ट थाना गोराबार, जिला गोरखपुर में अपराध संख्या 381/2000 के अंतर्गत धारा 279, 337, 338, 427, 304ख भा. दं. सं. पंजीकृत हुआ । मृतक के शव का पोस्टमार्टम सरकारी अस्पताल, गोरखपुर में हुआ । दुर्घटना में लिप्त वाहन जीप सं. यू पी 53 के 4115 था जो विपक्षी संख्या-1 के स्वामित्व में थी तथा विपक्षी संख्या-2 के जरिए कवर नोट संख्या 833236 दिनांक 5 नवम्बर, 1999 से 4 नवम्बर, 2000 तक बीमित रहा । याचीगण ने बारह लाख रुपए आकस्मिक मृत्यु से हुए आय में कमी के बाबत, छह लाख रुपया पति एवं पिता तथा पुत्र से वंचित रहने के कारण 5,000/- रुपए दवा के हुए व्यय 25,000/- रुपए क्रिया कर्म के मद में कुल 18,30,000/- रुपए बतौर क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि व उस पर 18 प्रतिशत वार्षिक ब्याज याचिका प्रस्तुत करने से अदायगी की तिथि तक दिलाए जाने की याचना की गई है । उपरोक्त परिस्थितियों एवं प्रपत्रों को संज्ञान में रखते हुए न्यायाधिकरण द्वारा यह अवधारित किया गया कि प्रस्तुत वाद में धारा 163ए में दिए गए अनुच्छेद के अनुसार 18 का गुणांक लागू होगा । मृतक की आय 200/- रुपए प्रतिदिन को न्यायाधिकरण के द्वारा 100/- रुपए प्रतिदिन निर्धारित किया गया है । तद्नुसार न्यायाधिकरण द्वारा प्रस्तुत याचिका के सम्यक् साक्ष्यों को दृष्टिगत रखते हुए 4,39,000/- रुपए बतौर क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि एवं उस पर 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की देनदारी के अनुसार याचिका प्रस्तुत करने की तिथि से वाद भुगतान की तिथि तक इंश्योरेंस कंपनी द्वारा देनदारी निर्णीत की गई/अवधारित की गई एवं याचिका को स्वीकार किया गया । इससे व्यथित होकर वर्तमान याचिका फाइल की गई । न्यायालय द्वारा याचिका आंशिक रूप से मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने याची के विद्वान् अधिवक्ता श्री नगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव एवं विपक्षी के अधिवक्ता को सुना मैंने न्यायाधिकरण के आदेश का परिशीलन किया । उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में यहां यह कहना समीचीन होगा कि सम्माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 3483 आफ 2008 श्रीमती सरला वर्मा और अन्य बनाम दिल्ली ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन और एक अन्य, निर्णय दिनांक 15 अप्रैल, 2009 [रिपोर्टेड (2009) 6 एस. सी. सी. 121] द्वारा यह अवधारित किया गया है कि धारा 163-ए मोटर वेहिकल ऐक्ट में प्रतिपादित सिद्धांत को निम्न प्रारूप में निर्धारित किया जाएगा । प्रस्तुत अपील में मृतक मंगल प्रसाद की आयु दुर्घटना के समय 27 वर्ष की थी अतएव उक्त परिस्थितियों में उपरोक्त निर्धारित अनुसूची के अनुसार 17 का गुणांक लागू होगा न कि 18 का गुणांक जो कि न्यायाधिकरण द्वारा

अपने निर्णय में निर्धारित किया गया है, अतः उपरोक्त बिन्दु संख्या-1 का निर्णय 17 के गुणांक को लागू करने के अनुसार निर्धारित किया जाता है । अनेकों वादों में माननीय उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालय द्वारा रिजर्व बैंक आफ इंडिया द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत को दृष्टिगत रखते हुए 6-7 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की देनदारी निर्धारित की गई है । न्यायालय ने प्रस्तुत वाद के तथ्यों एवं परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए 7 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की देनदारी क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि के साथ अनुमन्य करता हूं । उक्त वर्णित तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए न्यायाधिकरण द्वारा निर्धारित क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि 4,39,000/- रुपए को 4,08,000/- रुपए निर्धारित करता हूं एवं वार्षिक ब्याज 7 प्रतिशत की दर से देय होगा । तद्नुसार न्यायाधिकरण के निर्णय दिनांक 5 मार्च, 2002 को उपरोक्तानुसार संशोधित किया जाता है एवं यह निर्णीत किया जाता है कि न्यायाधिकरण द्वारा पारित अन्य निर्देशों का पालन न्यायाधिकरण के निर्णय के अनुसार किया जाए । (पैरा 16, 17, 18, 19, 20 और 21)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2002 के आदेश सं. 971 से प्रथम अपील.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन प्रथम अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री नगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री ए. के. गुप्ता और वी. तिवारी

न्यायमूर्ति अशोक कुमार – यह याचिका नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, ब्रांच आफिस देवरिया के माध्यम से प्रस्तुत की गई है ।

2. याची द्वारा प्रस्तुत याचिका में न्यायालय मोटर वाहन दुर्घटना क्षतिपूर्ति न्यायाधिकरण/स्पेशल जज, (ई. सी. ऐक्ट) कक्ष संख्या-5, देवरिया द्वारा एम. सी. वाद संख्या 230/2000 के निर्णय दिनांक 5 मार्च, 2002 को चैलेंज किया गया है । उक्त निर्णय 5 मार्च, 2002 द्वारा न्यायाधिकरण में 4,39,000/- रुपए का क्लेम विपक्षी संख्या-2 के पक्ष में आदेशित किया एवं उक्त धनराशि को एक माह समय के अंदर जमा करने का निर्णय लिया । इसके अतिरिक्त 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज को विपक्षीगण के हक में याचिका प्रस्तुत करने की तिथि से वास्तविक भुगतान की तिथि तक प्रदान करने का आदेश पारित किया गया ।

3. वाद के तथ्य निम्न प्रकार हैं :–

"मृतक मंगल प्रसाद पुत्र सुघन प्रसाद मौजा साकिन बर्जुग थाना

तुर्कपट्टी जिला कुशीनगर हाल मुकाम देवरिया जनपद देवरिया उम्र 27 साल जो सब्जी का व्यापार करता था और उससे 200/- रुपए प्रतिदिन की आय करता था तथा याचीगण श्रीमती वृन्दा देवी (मृतक की पत्नी) सुघन प्रसाद, श्रीमती बुधिया (मृतक के माता पिता) अभिमन्यु, कुमारी रेनू, रिकेश, कुमारी रिक्की (मृतक के बच्चे) मृतक की आय पर ही आश्रित थे । दिनांक 15 जून, 2000 को समय करीब दिन के 4.00 बजे जब मंगल प्रसाद जीप नं. यू पी 53 के 4115 से यात्रा कर रहा था और जैसे ही यह जगदीशपुर गांव के समीप पहुंची कि जीप चालक के तेजी व लापरवाही से चलाए जाने के कारण ट्रक नं. यू पी 78 बी 2383 में टक्कर मार दी जिससे मंगल प्रसाद गंभीर रूप से घायल हो गया और उन्हीं चोटों के कारण उसकी मृत्यु हो गई । घटना की प्रथम सूचना रिपोर्ट थाना गोराबार, जिला गोरखपुर में अपराध संख्या 381/2000 के अंतर्गत धारा 279, 337, 338, 427, 304ख भा. दं. सं. पंजीकृत हुआ । मृतक के शव का पोस्टमार्टम सरकारी अस्पताल, गोरखपुर में हुआ । दुर्घटना में लिप्त वाहन जीप नं. यू पी 53 के 4115 था जो विपक्षी संख्या-1 के स्वामित्व में थी तथा विपक्षी संख्या-2 के जरिए कवर नोट संख्या 833236 दिनांक 5 नवम्बर, 1999 से 4 नवम्बर, 2000 तक बीमित रहा । याचीगण ने बारह लाख रुपए आकस्मिक मृत्यु हुए आय में कमी के बाबत, छह लाख रुपया पति एवं पिता तथा पुत्र से वंचित रहने के कारण 5,000/- रुपए दवा के हुए व्यय 25,000/- रुपए क्रिया कर्म के मद में कुल 18,30,000/- रुपए बतौर क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि व उस पर 18 प्रतिशत वार्षिक ब्याज याचिका प्रस्तुत करने से अदायगी की तिथि तक दिलाए जाने की याचना की गई है ।

विपक्षी संख्या-1 पर पर्याप्त तामीली के बावजूद भी उसकी ओर से न तो कोई उपस्थित हुआ और न ही कोई वादोत्तर प्रस्तुत हुआ फलतः दिनांक 15 फरवरी, 2001 के आदेशानुसार वाद कार्यवाही विपक्षी संख्या-1 के विरुद्ध एकपक्षीय प्रोसीड किया गया । विपक्षी संख्या-2 की तरफ से प्रतिवाद पत्र दाखिल हुआ है जिसमें कहा गया है कि याचीगण का यह कथन मिथ्या व निराधार है कि कथित दुर्घटना के समय मृतक की उम्र 27 साल थी जब कि मृतक की उम्र 25 साल से बहुत कम थी । कथित दुर्घटना के समय मृतक सब्जी का व्यापार नहीं करता था और न ही उसकी 200/- रुपए आमदनी थी । दुर्घटना के दिन मृतक कोई आय नहीं करता था और वह अपने भरण-पोषण के लिए वह अपनी माता पर ही आश्रित था । याचीगण न

तो मृतक का कानूनी वारिस है और न मृतक का आश्रित है बल्कि मृतक स्वयं याचिकी पर आश्रित है । याचीगण का यह कथन मिथ्या व निराधार है कि कथित दुर्घटना वाहन जीप संख्या यू पी 53 के 4115 के चालक के तेजी व लापरवाही के कारण हुई । कथित दुर्घटना कदापि जीप चालक के तेजी व लापरवाही के कारण नहीं हुई बल्कि कथित दुर्घटना ट्रक नं. यू पी 78 बी 2383 के चालक के एकमात्र तेजी व लापरवाही एवं गलती से घटित हुई । याचीगण ने उक्त ट्रक के स्वामी तथा बीमा कंपनी को पक्ष मुकदमा नहीं बनाया जो आवश्यक पक्ष मुकदमा है । इस कारण याचिका में आवश्यक पक्षों के असंयोजन का दोष है । जीप चालक व ट्रक चालक दोनों के पास कथित दुर्घटना के समय वैध व प्रभावी लाइसेंस ड्राइविंग का नहीं था कथित दुर्घटना के समय जीप नं. यू पी 53 के 4115 विपक्षी संख्या-2 संबंधित बीमा कंपनी के यहां बीमित नहीं था । याचीगण ने एफ. आई. आर. चार्जशीट, नक्शा नजरी व पोस्टमार्टम रिपोर्ट आदि प्रपत्र नहीं प्रस्तुत किया है कुछ अन्य तथ्यों का उल्लेख करते हुए विपक्षी ने याचना की है कि प्रस्तुत याचिका हर दशा में निरस्त किए जाने योग्य है ।"

4. उक्त अभिवचनों के आधार पर प्रस्तुत वाद निम्न वाद बिन्दु निर्मित किए गए (अधिकरण के समक्ष अपील के ज्ञापन में विरचित किए गए विवाद्यक) :–

"(1) क्या दिनांक 18 जून, 2000 को समय करीब दिन के 4.00 बजे, जब मंगल प्रसाद जीप संख्या यू पी 53 के 4115 से यात्रा कर रहा था और जैसे ही वह जगदीशपुर गांव के पास पहुंचा कि जीप चालक के तेजी व लापरवाही से चलाए जाने के कारण ट्रक संख्या यू पी 78 बी 2383 में टक्कर मार दी और वह गंभीर रूप से घायल हो गया, जिसके कारण उसकी मृत्यु हो गई?

(2) क्या कथित दुर्घटना के समय प्रश्नगत वाहन जीप संख्या यू पी 53 के 4115 विपक्षी संख्या-2 के यहां बीमित था?

(3) क्या कथित दुर्घटना के समय प्रश्नगत वाहन उक्त जीप के चालक के पास वैध एवं प्रभावी लाइसेंस नहीं था?

(4) क्या याचीगण बतौर क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि पाने के अधिकारी हैं? यदि हां तो कितना और किस विपक्ष से?

उपरोक्त वाद बिन्दुओं के अतिरिक्त एक अन्य वाद बिन्दु दिनांक 6 दिसम्बर, 2001 के अदेशानुसार निर्मित किया गया ।

(5) क्या इस याचिका में आवश्यक पक्षकारों के असंयोजन का दोष है (वाद बिन्दु संख्या-5) ।"

5. न्यायाधिकरण द्वारा उपरोक्त पांचों वाद बिन्दुओं के अलग-अलग साक्ष्यों को पूर्णतः जांच करते हुए निर्णीत किया ।

6. न्यायाधिकरण द्वारा वाद बिन्दु संख्या-1 के सभी साक्ष्यों का समुचित आंकलन एवं सत्यापन कर अपना निर्णय निम्नानुसार निर्णीत किया गया है :–

"उपलब्ध साक्ष्यों एवं सन्दर्भित निर्णय विधियों के आधार पर यह अवधारित किया जाता है कि कथित दुर्घटना प्रश्नगत वाहन जीप सं. यू पी 53 के 4115 के जीप चालक की गलती से ही घटित हुई थी जिसके कारण मंगल प्रसाद को चोटें आईं और उन्हीं चोटों के कारण उसकी मृत्यु हो गई इस भांति यह वाद बिन्दु वादानुसार सकारात्मक रूप से निर्मित किया जाता है ।"

7. वाद बिन्दु संख्या-2 का सम्यक् परीक्षण करने के उपरांत न्यायाधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि वाहन संख्या यू पी 53 के 4115 याची नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड के जरिए दिनांक 5 नवंबर, 1999 से 4 नवम्बर, 2000 तक बीमित रहा है, एवं याचीगण (प्रस्तुत अपील में विपक्षीगण) की तरफ से बीमा प्रपत्र व आर. सी. की छायाप्रति दाखिल की गई है जिसके अवलोकन से यह दृष्टिगत होता है कि उक्त वाहन अपीलार्थी इंश्योरेंस बीमा कंपनी के द्वारा उपरोक्त अवधि में बीमित रहा है एवं पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर यह सिद्ध किया गया कि कथित दुर्घटना के समय प्रश्नगत वाहन उक्त बीमा कंपनी के द्वारा बीमित था ।

8. दुर्घटना दिनांक 16 जून, 2000 की शाम करीब 4.00 बजे घटित हुई थी जिस समय मंगल प्रसाद (मृतक) यात्रा कर रहा था एवं उक्त दुर्घटना चालक की लापरवाही एवं अविवेकपूर्ण रवैये के कारण घटित हुई थी जिसमें मंगल प्रसाद को गंभीर चोटें आईं थीं एवं उन चोटों की वजह से उसकी मृत्यु हो गई थी ।

9. वाद बिन्दु संख्या-3 को न्यायाधिकरण द्वारा सम्यक् प्रकार से जांच कर एवं साक्ष्यों का परिशीलन करने के उपरांत अपने विवेक से निर्णीत किया गया है एवं न्यायाधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि कथित दुर्घटना के समय प्रश्नगत वाहन चालक के पास वैध एवं प्रभावी अनुज्ञप्ति था । वाद बिन्दु संख्या-3 में यह निर्मित किया गया है कि दुर्घटना के समय प्रश्नगत वाहन के चालक के पास वैध एवं प्रभावी लाइसेंस नहीं था । न्यायाधिकरण द्वारा इंश्योरेंस कंपनी से यह अपेक्षा की गई कि वह उक्त

संबंध में इंश्योरेंस कंपनी समुचित साक्ष्य प्रस्तुत करे जिससे कि इंश्योरेंस कंपनी प्रस्तुत करने में असफल रही अतः न्यायाधिकरण द्वारा यह अवधारित किया गया कि दुर्घटना के समय वाहन चालक के पास वैध एवं प्रभावी लाइसेंस था । इस वाद बिंदु संख्या-3 को न्यायाधिकरण द्वारा नकारात्मक रूप से निर्णीत किया गया ।

10. वाद बिन्दु संख्या-4 को निर्णीत करने से पूर्व न्यायाधिकरण द्वारा अपने आदेश दिनांक 5 मार्च, 2002 द्वारा वाद बिन्दु संख्या-5 को निर्णीत किया गया । वाद बिन्दु संख्या-5 जो दिनांक 6 दिसम्बर, 2001 के आदेशानुसार निर्णीत किया गया था के द्वारा न्यायाधिकरण के सम्मुख निम्न वाद बिन्दु प्रस्तुत किया गया :–

> "क्या इस याचिका में आधारित पक्षकारों के असंयोजन का दोष है ?"

11. न्यायाधिकरण ने अपने निर्णय में उपरोक्त वाद बिन्दु की निम्नलिखित साक्ष्यों एवं कथनों के अनुसार दृष्टिगत रखते हुए निर्णीत किया :–

> "कथित दुर्घटना प्रश्नगत वाहन जीप नं. यू पी 53 के 4115 के चालक के तेजी एवं लापरवाही से चलाए जाने के कारण उसकी गलती से ही घटित हुई है विपक्षी संख्या-2 बीमा कंपनी के तरफ से उनके विद्वान् अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि जीप और ट्रक के आमने-सामने टक्कर तथा चालक के खिलाफ आरोप पत्र प्रस्तुत है इसलिए ट्रक चालक आवश्यक पक्षकार है तथा उसका पक्ष बनाया जाना आवश्यक है इसके विरूद्ध याचीगण के विद्वान् अधिवक्ता ने यह तर्क रखा है कि याची को यह अधिकार है कि यह उसी के विरुद्ध साक्ष्य प्रस्तुत करता है । दूसरे वाहन को पक्षकार बनाए जाने की आवश्यकता नहीं है । इसके समर्थन में याचीगण की तरफ से 1998 ए.सी.जे. मैनेजिंग डायरेक्टर बनाम कलावती मद्रास हाई कोर्ट पेज 151 का संदर्भ प्रस्तुत करते हुए कहा गया है कि इस प्रकरण में बस व वैन में टक्कर थी लेकिन याची ने केवल बस को पक्ष बनाया था । वैन को पक्ष नहीं बनाया गया था । माननीय उच्च न्यायालय ने यह अवधारित किया है कि जब याची का स्पष्ट केस है कि बस चालक की गलती से ही कथित दुर्घटना हुई है । वाद बिन्दु संख्या-1 में दिए गए निष्कर्ष से भी यह साबित हो चुका है कि कथित दुर्घटना

प्रश्नगत वाहन जीप चालक की गलती से ही घटित हुई है।"

12. उपरोक्त तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए न्यायाधिकरण द्वारा उपरोक्त वाद बिन्दु संख्या-5 में यह निर्णीत किया गया है कि प्रस्तुत मामले में आधारित पक्षकारों के असंयोजन का दोष नहीं है अतः उक्त बिन्दु संख्या-5 तद्नुसार नकारात्मक रूप से निर्णीत किया जाता है ।

13. न्यायाधिकरण द्वारा अंत में वाद बिन्दु संख्या-4 को निर्णीत किया गया व बिन्दु संख्या-4 द्वारा न्यायाधिकरण के सम्मुख प्रस्तुत याचिका में याचीगण द्वारा कहा गया कि विपक्षी बतौर क्षतिपूर्ति धनराशि के अंश को पाने के अधिकारी हैं अथवा नहीं एवं यदि हैं तो कितनी क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि पाने के अधिकारी हैं ।

14. न्यायाधिकरण द्वारा वाद बिन्दु संख्या-4 को अन्य वाद बिंदुओं में दिए गए निष्कर्ष एवं विवेचना को ध्यान में रखते हुए निर्णीत किया गया । न्यायाधिकरण द्वारा सम्यक् विचारोपरांत यह निर्णीत किया गया कि क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि के अदायगी की जिम्मेदारी संबंधित बीमा कंपनी अर्थात् अपीलार्थी की है । न्यायाधिकरण ने यह अवधारित किया है कि उक्त क्षतिपूर्ति की प्रतिकर धनराशि की अदायगी अपीलार्थी इंश्योरेंस कंपनी द्वारा देय है एवं उक्त परिप्रेक्ष्य में पी. डब्ल्यू. 1 श्रीमती वृंदा देवी पत्नी स्व. मंगल प्रसाद (मृतक) को देय है । श्रीमती वृंदा देवी द्वारा न्यायाधिकरण के सम्मुख प्रस्तुत शपथपत्र में यह कहा गया है कि मृत्यु/दुर्घटना के समय उसके पति की उम्र लगभग 27 वर्ष थी । पोस्टमार्टम रिपोर्ट के अनुसार भी मंगल प्रसाद की उम्र 27 वर्ष दृष्टिगत होती है/अंकित है ।

15. उपरोक्त परिस्थितियों एवं प्रपत्रों को संज्ञान में रखते हुए न्यायाधिकरण द्वारा यह अवधारित किया गया कि प्रस्तुत वाद में धारा 163ए में दिए गए अनुच्छेद के अनुसार 18 का गुणांक लागू होगा । मृतक की आय 200/- रुपए प्रतिदिन को न्यायाधिकरण के द्वारा 100/- रुपए प्रतिदिन निर्धारित किया गया है । तद्नुसार न्यायाधिकरण द्वारा प्रस्तुत याचिका के सम्यक् साक्ष्यों को दृष्टिगत रखते हुए 4,39,000/- रुपए बतौर क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि एवं उस पर 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की देनदारी के अनुसार याचिका प्रस्तुत करने की तिथि से वाद भुगतान की तिथि तक इंश्योरेंस कंपनी द्वारा देनदारी निर्णीत की गई/अवधारित की गई एवं याचिका को स्वीकार किया गया ।

16. मैंने याची के विद्वान् अधिवक्ता श्री नगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव एवं

विपक्षी के अधिवक्ता को सुना मैंने न्यायाधिकरण के आदेश का परिशीलन किया । तथ्यों व साक्ष्यों का समुचित विश्लेषण करने के उपरांत मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि न्यायाधिकरण का आदेश निम्न बिन्दुओं पर विचारणीय है :–

1. यह कि क्या न्यायाधिकरण द्वारा धारा 163ए में दिए गए अनुसूची के अनुसार 18 का गुणांक सही है ।

2. यह कि क्या न्यायाधिकरण द्वारा क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि पर 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज का भुगतान उचित है ।

धारा 163ए द्वारा फार्मूला बेसिस पर क्षतिपूर्ति प्रदान करने की अनुसूची दी गई है ।

17. उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में यहां यह कहना समीचीन होगा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील संख्या 3483 आफ 2008 श्रीमती सरला वर्मा एंड अदर्स बनाम दिल्ली ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन एंड एनोदर, निर्णय दिनांक 15 अप्रैल, 2009 [रिपोर्टेड (2009) 6 एस. सी. सी. 121] द्वारा यह अवधारित किया गया है कि धारा 163ए मोटर वेहिकल ऐक्ट में प्रतिपादित सिद्धांत को निम्न प्रारूप में निर्धारित किया जाएगा ।

मृतक की आयु	सुसाम्मा थोमस वाले मामले में विचार करके गुणांक	त्रिलोक चन्द्र द्वारा अंगीकृत गुणांक	चार्ली में स्पष्ट रूप से त्रिलोक चन्द्र वाले मामले में गुणांक	मोटर यान अधिनियम के लिए 2 अनुसूची में द्वितीय कालम में विनिर्दिष्ट गुणांक	मोटर यान अधिनियम (प्रतिकर की मात्रा से देखते हुए) अनुसूची 2 में प्रयुक्त वास्तविक गुणांक
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
15 वर्ष तक	–	–	–	15	16
15 से 20 वर्ष	16	18	18	16	19

21 से 25 वर्ष	15	17	18	17	18
26 से 30 वर्ष	14	16	17	18	17
31 से 35 वर्ष	13	15	16	17	16
36 से 40 वर्ष	12	14	15	16	15
41 से 45 वर्ष	11	13	14	15	14
46 से 50 वर्ष	10	12	13	13	12
51 से 55 वर्ष	9	11	11	11	10
56 से 60 वर्ष	8	10	9	8	8
61 से 65 वर्ष	6	8	7	5	6

65 वर्ष से ऊपर	5	5	5	5	5

18. प्रस्तुत अपील में मृतक मंगल प्रसाद की आयु दुर्घटना के समय 27 वर्ष की थी अतएव उक्त परिस्थितियों में उपरोक्त निर्धारित अनुसूची के अनुसार 17 का गुणांक लागू होगा न कि 18 का गुणांक जो कि न्यायाधिकरण द्वारा अपने निर्णय में निर्धारित किया गया है, अतः उपरोक्त बिन्दु संख्या-1 का निर्णय 17 के गुणांक को लागू करने के अनुसार निर्धारित किया जाता है ।

19. अनेकों वादों में माननीय उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालय द्वारा रिजर्व बैंक आफ इंडिया द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत को दृष्टिगत रखते हुए 6-7 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की देनदारी निर्धारित की गई है ।

20. मैं प्रस्तुत वाद के तथ्यों एवं परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए 7 प्रतिशत वार्षिक ब्याज की देनदारी क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि के साथ अनुमन्य करता हूं ।

21. उक्त वर्णित तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए न्यायाधिकरण द्वारा निर्धारित क्षतिपूर्ति प्रतिकर धनराशि 4,39,000/- रुपए को 4,08,000/- रुपए निर्धारित करता हूं एवं वार्षिक ब्याज 7 प्रतिशत की दर से देय होगा । तद्नुसार न्यायाधिकरण के निर्णय दिनांक 5 मार्च, 2002 को उपरोक्तानुसार संशोधित किया जाता है एवं यह निर्णीत किया जाता है कि न्यायाधिकरण द्वारा पारित अन्य निर्देशों का पालन न्यायाधिकरण के निर्णय के अनुसार किया जाए ।

22. प्रस्तुत याचिका उपरोक्तानुसार अंतिम रूप से निर्णीत की जाती है ।

तद्नुसार, याचिका आंशिक रूप से मंजूर की गई ।

मही./क.

कन्हैयालाल और अन्य

बनाम

सोहन लाल और अन्य

तारीख 30 मार्च, 2015

न्यायमूर्ति (डा.) विनीत कोठारी

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 [सपठित भारतीय न्यास अधिनियम, 1882] – बंधककर्ता द्वारा बंधकदारों के पास प्रश्नगत संपत्ति का बंधक रखना – बंधकदारों द्वारा सम्पत्ति को किराए पर दिया जाना – बंधक विलेख के अनुसार बंधक सम्पत्ति का मोचन न होना – पक्षकारों द्वारा समझौते के अनुसरण में बंधक सम्पत्तियों का कब्जा नहीं सौंपना – विनिर्दिष्ट अनुपालन – यदि किसी बंधक सम्पत्ति के बारे में पक्षकारों के बीच आपसी समझौते द्वारा बंधक का मोचन कर लिया जाता है तो उक्त समझौते के अनुसार ही उक्त सम्पत्ति का बंधक मोचन विनिर्दिष्टतः अनुज्ञेय है, यदि कोई पक्षकार इसका पालन नहीं करता है तो पीड़ित पक्षकार, बंधक विलेख की शर्तों के अनुसार सम्पत्ति का कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी होता है ।

वर्तमान मामले में मुख्य तथ्य यह हैं कि वाद संपत्ति जो आजाद चौक, भीलवाड़ा में स्थित है को उक्त वाद संपत्ति के किराएदारों ढल्लूमल सिंधी और हीरानंद सिंधी के पक्ष में प्यारे लाल पुत्र श्री राम लाल (बंधककर्ता) द्वारा तारीख 7 दिसम्बर, 1974 को रजिस्ट्रीकृत बंधक पत्र (प्रदर्श 20) द्वारा बंधक किया गया था । किराएदार उक्त घर के सामने की तरफ स्थित चार वाद दुकानों में बेकरी का व्यवसाय चलाते थे और वाद दुकानों से भिन्न वाद संपत्ति का कुछ अधिक भाग भी उनके कब्जे में था और एक भाग ही जो अकेले राजकुमार पुत्र श्री विलायती राम खन्ना के कब्जे में था जिसके साथ ही वाद संपत्ति के उस भाग को स्वामी प्यारे लाल ने बंधकित किया था और वह भाग बाद में प्रत्यर्थियों संख्या 2 से 4 – राजकुमार पुत्र श्री मनोहर लाल सिंधी, श्रीमती कमला पत्नी स्वर्गीय मनोहर लाल सिंधी और गोविंद राम कलवानी पुत्र कन्हैयालाल कलवानी ने क्रय कर लिया था । वर्तमान मामले में विवाद केवल चार दुकानों की बाबत है जो तारीख 7 दिसम्बर, 1974 के करार प्रदर्श 20 के अधीन बंधकदारों के विधिक

प्रतिनिधियों अर्थात् ढल्लूमल सिंधी और हीरानंद सिंधी के कब्जे में है और इन प्रतिवादियों-अपीलार्थियों का दावा यह है कि 20,000/- रुपए के संदाय पर उक्त बंधक का मोचन ही जो तारीख 7 दिसम्बर, 1974 के रजिस्ट्रीकृत बंधक विलेख (प्रदर्श 20) के अधीन ढल्लूमल सिंधी और हीरानंद सिंधी के पक्ष में बंधककर्ता प्यारेलाल द्वारा सृजित हुआ था क्योंकि वे उक्त वाद दुकानों में किराएदार थे, उनकी किराएदारी न्यायालय की डिक्री के अधीन बंधक के मोचन के साथ पूर्वरूप में स्थिर थी और इसलिए, वाद संपत्ति अर्थात् प्रश्नगत चार दुकानों का कब्जा बंधक के मोचन के पश्चात् बंधककर्ता को वापस सौंपा जाना अपेक्षित नहीं था । इसमें यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि मूल बंधककर्ता प्यारेलाल ने मूल वादी सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय जिसमें बंधक के मोचन का अधिकार भी सम्मिलित है, के पक्ष में वाद संपत्ति जिसमें प्रश्नगत उक्त चार वाद दुकानें शामिल हैं को विक्रय किया था और बंधक के मोचन के लिए वर्तमान वाद केवल क्रेता सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय ने ही फाइल किया था । सिविल वाद जिसकी संख्या 322/1992 सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय और अन्य बनाम किशन चंद पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी (मृतक) ने अपने विधिक प्रतिनिधियों और अन्य माध्यम से फाइल किया था जिसकी तारीख 18 मार्च, 2004 को विद्वान् विचारण न्यायालय ने डिक्री की थी । प्रतिवादियों किशन चंद पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी और अन्य ने तारीख 18 मार्च, 2004 को उक्त निर्णय और डिक्री के विरुद्ध विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश सं. 1, भीलवाड़ा के समक्ष प्रथम अपील फाइल की है जिसमें अपील संख्या 14/2004 "किशन चंद पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी और अन्य" को तारीख 22 मार्च, 2005 को मंजूर कर लिया और मामले को पुनः विवाद्यक संख्या 3 का विनिश्चय करने के लिए विद्वान् विचारण न्यायालय को वापस भेज दिया गया । रिमांड के बाद, उसी वाद जिसकी संख्या 322/1992 "सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय और अन्य बनाम किशन चंद पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी (मृतक) के विधिक प्रतिनिधियों और अन्य" में तारीख 10 अगस्त, 2005 के अपने आदेश द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय ने प्रतिवादियों के पक्ष में पूर्वोक्त विवाद्यक संख्या 3 का विनिश्चय किया था । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा प्रतिप्रेषित करने के बाद तारीख 10 अगस्त, 2005 के उक्त आदेश के विरुद्ध वादियों सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय और अन्य ने पुनः प्रथम अपील संख्या 71/2005 फाइल की थी जिसको विद्वान्

अपर जिला न्यायाधीश सं. 1, भीलवाड़ा ने यह अभिनिर्धारित करते हुए तारीख 3 सितम्बर, 2013 के आक्षेपित आदेश द्वारा वादियों के पक्ष में मंजूरी दी थी कि वादी वाद संपत्ति अर्थात् प्रश्नगत चार दुकानों का कब्जा लेने के हकदार थे क्योंकि प्रतिवादी-किराएदार यह साबित नहीं कर सके कि वे बंधक के समय पर किराएदार और बंधक के मोचन् के बाद भी वाद संपत्ति में किराएदार के रूप में निरन्तर बने रहे थे । अपर जिला न्यायाधीश सं. 1, भीलवाड़ा के विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, प्रतिवादी-कन्हैयालाल पुत्र श्री हीरानंद सिंधी और हसमत राय **उर्फ** हिम्मतराज पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी ने तारीख 2 दिसम्बर, 2013 को इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान द्वितीय अपील फाइल की है । न्यायालय द्वारा वर्तमान द्वितीय अपील को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को विस्तार से सुना और अभिलेख का परिशीलन किया । इस न्यायालय की विचारणीय राय में अपीलार्थी-प्रतिवादियों द्वारा फाइल की गई वर्तमान अपील में विधि का कोई सारवान् प्रश्न उद्भूत नहीं होता है और अपर जिला न्यायाधीश सं. 1, भीलवाड़ा के विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में न्यायानुमत था कि वर्तमान अपीलार्थी-प्रतिवादी-कन्हैयालाल हीरानंद सिंधी और हसमत राय **उर्फ** हिम्मतराज पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी किराएदार नहीं थे जिनकी किराएदारी बंधक के मोचन हेतु वाद के पश्चात् पुनरुज्जीवित थी जिसकी तारीख 18 मार्च, 2004 को विद्वान् विचारण न्यायालय ने डिक्री की थी और उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए किसी साक्ष्य के अभाव में बंधक के मोचन के बाद उनके पक्ष में किराएदारी ऐसे पुनरुज्जीवन लिए थी, वे बंधक के मोचन के बाद प्रश्नगत वाद दुकानों का कब्जा रखने के हकदार नहीं थे । उपरोक्त आकर्षित बंधक विलेख के सुसंगत भाग से, यह स्पष्ट होता है कि बंधकदारों ने बंधकदारों के रूप में संपूर्ण संपत्ति का कब्जा लिया था और स्पष्ट रूप से घर और बंधक के मोचन के ऊपर प्रश्नगत दुकानों का कब्जा सौंपने के लिए सहमत थे और किराएदारी के बारे में यह शर्त थी कि यदि वही किराएदार अर्थात् कन्हैयालाल, सुगनचंद और रामदयाल तुलसीराम सिंधी बंधक मोचन के समय पर भी किराएदार बने रहे थे और एक नया टिप्पण उनके पक्ष में निष्पादित किया था तो वे उसी प्रकार से किराएदार बने रहेंगे । क्योंकि उक्त संपूर्ण सम्पत्ति अर्थात् हवेली बंधक थी जिसमें किराएदारों के पक्ष में वाद दुकानें ही सम्मिलित थीं और किराया वसूल नहीं किया था और बंधक के मोचन के साथ बंधकदारों को

बंधककर्ता द्वारा ब्याज संदेय के विरुद्ध समायोजित किया था, उनकी किराएदारी अपने आप ही समाप्त हो गई थी और इसमें स्वयं तारीख 7 दिसम्बर, 1974 के बंधक के मोचन के समय से ही किराएदारी का समर्पण निहित था । जब तक नए किराए टिप्पण के अधीन कोई नई किराएदारी उनके निबंधनों पर उनके पक्ष में सृजित नहीं थी यदि वे केवल बंधक के मोचन के समय पर ही किराएदार बने रहेंगे तो तब उनकी किराएदारी पुनरुज्जीवित बनी रहेगी अन्यथा नहीं । स्वीकृततः, ऐसी कोई नई किराएदारी कब्जे में व्यक्तियों के पक्ष में सृजित ही नहीं हुई थी, जिसे विवाद्यक संख्या 3 के संबंध में अपने भार को निर्वाह करते हुए अपने पक्ष में सिद्ध करने में असफल रहे कि (1) वही किराएदार बंधक के मोचन के समय किराएदार बने रहेंगे और (2) कि किराएदारी ऐसे बंधक के मोचन के बाद एक नए किराए टिप्पण के निष्पान द्वारा पुनः सृजित/पुनरुज्जीवित हो गई थी । बंधक की मुद्रा के दौरान या बंधक के मोचन के बाद भी वादी या बंधककर्ता को किराए देने का उनके संदाय का कोई ऐसा सबूत विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया । उनके द्वारा न कोई किराया रसीद, खातों की किताबें इत्यादि प्रस्तुत की गई थीं, हालांकि वे किसी भिन्न नाम और "न्यू लक्ष्मी बेकरी" के स्टाइल के अधीन व्यवसाय कर रहे थे । इसलिए, इसमें प्रत्यर्थियों-वादियों की ओर से उपस्थित हुए विद्वान् काउंसेल श्री विनय जैन की दलील में विचारणीय बल यह है कि वर्तमान अपीलार्थी-प्रतिवादियों कन्हैयालाल पुत्र श्री हीरानंद सिंधी और हसमत राय **उर्फ** हिम्मतराज पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी बंधकदारों के विधिक वारिसों की हैसियत में इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुए हैं किन्तु समान किराए के रूप में नहीं और इसलिए, वे मोचन बंधक आधारों के बाद किराएदार के रूप में प्रश्नगत वाद दुकानों के कब्जा लेने का दावा नहीं कर सकते हैं । प्रतिवादियों के काउंसेल श्री आर. के. थानवी ने यह तथ्य स्वीकार किया है कि प्रश्नगत उक्त चार दुकानों के सिवाय वाद संपत्ति या हवेली के भाग का कब्जा किसी संदेय को दूर करके ही उक्त मोचन डिक्री के अधीन वादियों को सौंपना था कि किराएदारों के रूप में प्रश्नगत वाद दुकानें प्रतिधारित नहीं की गई हैं बल्कि बंधकदारों के विधिक प्रतिनिधियों के रूप में प्रतिधारित की गई हैं । बंधक के मोचन के बाद किराएदारों के रूप उनके अधिकारों को पुनरुज्जीवित या बनाए रखना तारीख 7 दिसम्बर, 1974 के बंधक, प्रदर्श 20 के अधीन यथाअनुध्यात उनके पक्ष में नए किराया टिप्पण के निष्पादन पर निर्भर था और उसके अभाव में,

वे संपूर्ण वाद संपत्ति जिसमें दुकानें भी सम्मिलित हैं, बंधककर्ता अर्थात् सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय से बंधककर्ता/क्रेता को कब्जा सौंपने के लिए बाध्य हैं । अपीलार्थियों-प्रतिवादियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिए गए अधिनिर्णय, वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू नहीं होते हैं किन्तु वे तथ्यों पर, वादी-प्रत्यर्थी के मामले को विवक्षित रूप से समर्थन करते हैं । पूर्वोक्त सुव्यस्थित विधिक स्थिति को दृष्टिगत करते हुए, यह स्पष्ट हो जाता है और प्रथम अपीली निचले न्यायालय द्वारा यह ठीक ही पाया गया है कि वर्तमान मामले में, बंधकदारों की किराएदारी बंधक के साथ विलय की गई थी और इसमें किराएदारी का अंतर्निहित समर्पण था और उनकी किराएदारी का अधिकार निष्पादित किए जाने के लिए नए किराया टिप्पण के निष्पादन पर निर्भर बंधक के मोचन के बाद बना रहेगा जिन पर वैसे किराएदारों को दिए गए निबंधन बंधक के मोचन के समय पर उसी परिसर में निरंतर बना रहेगा, इसमें समर्पण और स्वयं बंधक के समय पर बंधकदारों द्वारा किराएदारी के अधिकारों विलय तथा बंधक के मोचन के साथ स्पष्ट तौर पर था, उनकी किराएदारी के अधिकार पुनरुज्जीवित नहीं थे और इसलिए, वे किराएदार के रूप में वाद दुकानों के कब्जे में बने रहने का किसी प्रकार से अधिकार का दावा नहीं कर सकते हैं । इसलिए, इस न्यायालय के राय में, इस न्यायालय द्वारा विचार करने के लिए भी कोई विधि का सारवान् प्रश्न उद्‌भूत नहीं होता है और इसलिए, इसमें तारीख 3 सितम्बर, 2013 के अपर जिला न्यायाधीश संख्या 1, भीलवाड़ा के विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित तथ्य के उक्त निष्कर्षों और आदेश में कोई त्रुटि या विकृति नहीं हुई है, अपीलार्थी-प्रतिवादी संपूर्ण वाद संपत्ति जिसमें बंधक के मोचन की उक्त डिक्री के अधीन वादियों की चार दुकानें सम्मिलित हैं का कब्जा सौंपने के लिए बाध्य हैं । (पैरा 11, 13, 16 और 17)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2001]	ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2284 : **निर्मल चंद्रा** बनाम **विमल चंद ;**	9
[1999]	1999 डी. एन. जे. (एस. सी.) 118 : **चेरियान सोसाम्मा और अन्य** बनाम **सुदर्शन पिल्लै सारस्वथी अम्मा और अन्य ;**	9

[1996] (1996) 3 एस. सी. सी. 424 :
पालन कृष्णामूर्ति बनाम **कुंजुम्मा पिल्लै सरोजनी अम्मा और अन्य ।** 17

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2013 की एस. बी. सिविल द्वितीय अपील सं. 210.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थियों/प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री आर. के. थानवी और मुक्तेश माहेश्वरी

प्रत्यर्थियों/वादियों की ओर से सर्वश्री विनय जैन और दर्शन जैन

न्यायमूर्ति (डा.) विनीत कोठारी – प्रतिवादियों की यह द्वितीय अपील, सिविल अपील संख्या 71/2005 "सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय और अन्य बनाम किशन चन्द (मृतक) पुत्र श्री ढल्लूमल ने अपने विधिक प्रतिनिधियों और अन्य के माध्यम" में विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश सं. 1, भीलवाड़ा द्वारा तारीख 3 सितम्बर, 2013 को पारित निर्णय और डिक्री से उद्भूत हुई है । जिसे वर्तमान प्रत्यर्थियों-वादियों द्वारा फाइल की गई अपील को मंजूर कर लिया था और सिविल मूल वाद संख्या 322/1999 "सोहन लाल पुत्र श्री कल्याण विजयवर्गीय और अन्य बनाम किशन चन्द (मृतक) पुत्र श्री ढल्लूमल ने अपने विधिक प्रतिनिधियों और अन्य के माध्यम" में विद्वान् अपर सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ खंड) सं. 2, भीलवाड़ा द्वारा तारीख 10 अगस्त, 2005 को पारित संशोधित निर्णय और डिक्री जिसके द्वारा विद्वान् अपर सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ खंड) ने वाद घर के बंधक का मोचन और उसके कब्जे की ईप्सा करते हुए वादियों द्वारा फाइल वाद की डिक्री थी जिसको "खटीनामी हवेली" के नाम से जाना जाता है जो आजाद चौक, भीलवाड़ा में स्थित है ।

2. वर्तमान द्वितीय अपील सिविल अपील संख्या 71/2005 "सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय और अन्य बनाम किशन चन्द (मृतक) पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी ने अपने विधिक प्रतिनिधियों (प्रत्यर्थी संख्या 1 से 9) और कन्हैयालाल पुत्र श्री हीरानंद सिंधी (प्रत्यर्थी संख्या 10 से 16) और अन्य के माध्यम" में विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश संख्या 1, भीलवाड़ा के प्रथम अपीली न्यायालय द्वारा तारीख 3 सितम्बर, 2013 को पारित निर्णय और डिक्री आदेश से व्यथित होकर प्रत्यर्थियों-वादियों-सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय और अन्य के विरुद्ध प्रतिवादियों-

कन्हैयालाल पुत्र श्री हीरानंद सिंधी और हसमत राय **उर्फ** हिम्मतराज पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी द्वारा फाइल की गई है ।

3. वर्तमान द्वितीय अपील के संक्षिप्त में मुख्य तथ्य इस प्रकार हैं जिसका विचित्र या रंग बिरंगा इतिहास वाद संपत्ति के संबंध में है जो आजाद चौक, भीलवाड़ा में स्थित है जिस वाद संपत्ति को उक्त वाद संपत्ति के किराएदारों ढल्लूमल सिंधी और हीरानंद सिंधी के पक्ष में प्यारे लाल पुत्र श्री राम लाल (बंधककर्ता) द्वारा तारीख 7 दिसम्बर, 1974 को रजिस्ट्रीकृत बंधक पत्र (प्रदर्श 20) द्वारा बंधक किया गया था । किराएदार उक्त घर के सामने की तरफ स्थित चार वाद दुकानों में बेकरी का व्यवसाय चलाते थे और वाद दुकानों से भिन्न वाद संपत्ति का कुछ अधिक भाग भी उनके कब्जे में था और एक भाग ही जो अकेले राजकुमार पुत्र श्री विलायती राम खन्ना के कब्जे में था जिसके साथ ही वाद संपत्ति के उस भाग को स्वामी प्यारे लाल ने बंधकित किया था और वह भाग बाद में प्रत्यर्थियों संख्या 2 से 4 राजकुमार पुत्र श्री मनोहर लाल सिंधी, श्रीमती कमला पत्नी स्वर्गीय मनोहर लाल सिंधी और गोविंद राम कलवानी पुत्र कन्हैयालाल कलवानी ने क्रय कर लिया था । वर्तमान मामले में विवाद केवल चार दुकानों की बाबत है जो तारीख 7 दिसम्बर, 1974 के करार प्रदर्श 20 के अधीन बंधकदारों के विधिक प्रतिनिधियों अर्थात् ढल्लूमल सिंधी और हीरानंद सिंधी के कब्जे में है और इन प्रतिवादियों-अपीलार्थियों का दावा यह है कि 20,000/- रुपए के संदाय पर उक्त बंधक का मोचन ही जो तारीख 7 दिसम्बर, 1974 के रजिस्ट्रीकृत बंधक विलेख (प्रदर्श 20) के अधीन ढल्लूमल सिंधी और हीरानंद सिंधी के पक्ष में बंधककर्ता प्यारेलाल द्वारा सृजित हुआ था क्योंकि वे उक्त वाद दुकानों में किराएदार थे, उनकी किराएदारी न्यायालय की डिक्री के अधीन बंधक के मोचन के साथ पूर्वरूप में स्थिर थी और इसलिए, वाद संपत्ति अर्थात् प्रश्नगत चार दुकानों का कब्जा बंधक के मोचन के पश्चात् बंधककर्ता को वापस सौंपा जाना अपेक्षित नहीं था । इसमें यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि मूल बंधककर्ता प्यारेलाल ने मूल वादी सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय जिसमें बंधक के मोचन का अधिकार भी सम्मिलित है, के पक्ष में वाद संपत्ति जिसमें प्रश्नगत उक्त चार वाद दुकानें शामिल हैं को विक्रय किया था और बंधक के मोचन के लिए वर्तमान वाद केवल क्रेता सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय ने ही फाइल किया था ।

4. सिविल वाद जिसकी संख्या 322/1992 सोहन लाल पुत्र श्री राम

कल्याण विजयवर्गीय और अन्य बनाम किशन चंद पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी (मृतक) ने अपने विधिक प्रतिनिधियों और अन्य माध्यम से फाइल किया था जिसकी तारीख 18 मार्च, 2004 को विद्वान् विचारण न्यायालय ने डिक्री की थी जो बंधक के मोचन और वादियों के पक्ष में निम्नलिखित निष्कर्षों के साथ वाद संपत्ति के कब्जे के लिए वाद था :–

> "बहस सुनी गई, पत्रावली का अवलोकन किया गया । वाद गौर इस संदर्भ में मेरा विनम्र मत है कि वादीगण द्वारा प्रस्तुत गवाहों ने विवादित जायदाद प्रदर्श 1 से प्रदर्श 4 के जरिए खरीदने का कथन किया है एवं चारों विक्रय पत्रों में यह स्पष्ट रूप से वर्णित है कि उक्त जायदाद रहन है जिस रहन की राशि का भुगतान कर क्रेता को छुड़ाने का अधिकार होगा एवं विक्रेता ने क्रेता से विक्रय राशि 15,000/- रुपए प्राप्त कर ली है एवं शेष रहन की राशि भुगतान हेतु छोड़ दी है एवं इस संबंध में प्रतिवादीगण द्वारा प्रस्तुत गवाहों ने कोई कथन नहीं किया है । कि वादीगण को विवादित जायदाद को रहन से छुड़ाने का अधिकार न हो एवं प्रतिवादी गवाहों ने यह स्वीकार किया है कि वे रहन छोड़ने को तैयार हैं । उपरोक्तानुसार प्रस्तुत साक्ष्य एवं दस्तावेजों से यह प्रमाणित है कि वादीगण ने विवादित संपत्ति को प्यारे लाल से चार अलग-अलग विक्रय पत्रों द्वारा खरीद ली है एवं उन्हें विवादित संपत्ति को रहन से मुक्त कराने का अधिकार है ।

अब हमें इस तथ्य पर विचार करना है कि क्या प्रतिवादीगण विवादित जायदाद में रहन के पूर्व से ही बतौर किराएदार काबिज थे एवं वर्तमान में भी काबिज हैं । इस संबंध में डी.ड. 1 कन्हैयालाल ने व्यक्त किया है कि विवादित जायदाद में से चार दुकानें उसके पास हैं जिसमें न्यू लक्ष्मी बेकरी के नाम से व्यवसाय करता है । उक्त दुकानें सन् 1950 से उसके पास किराए पर हैं एवं वो ही मालिक है एवं विवादित दुकानों की किराए की रसीदें प्रदर्श ए. 1 से प्रदर्श ए. 4 हैं इन सभी पर सी से डी इबारत प्यारेलाल की है व ई से एफ इबारत उसके पिता हीरानंद की है । यद्यपि उक्त गवाह ने उक्त रसीदें विवादित दुकानों की होना बताया है परन्तु यदि हम उक्त रसीदों का अवलोकन करें तो उसमें उक्त रसीदें किस परिसर की है, का हवाला नहीं है एवं मात्र उसमें यह वर्णित नहीं है । न ही यह वर्णित है कि ये दुकानें कहां स्थित हैं साथ ही गवाह ने विवादित दुकानों में स्वयं को किराएदार होना बताया है साथ ही यह भी बताया है कि ई से एफ

इबारत हीरानंद की है । यह तथ्य उचित एवं युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता है क्योंकि किराया उक्त गवाह स्वयं देना बताता है । साथ ही किराया देना बताता है तब ई से एफ इबारत हीरानंद द्वारा क्योंकर लिखी इस संबंध में कथन नहीं है । प्रदर्श-20 के सी से डी भाग में यह वर्णित है कि पूर्व तरफ की दुकानें व मकानों पर मौजूदा किराएदार कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी अगर व उस समय भी किराएदार रहेंगे तो उनसे वापिस किराया चिट्ठी आज की दर से लिखवा देगा । परन्तु डी.ड. 1 कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी जो प्रदर्श-20 में किराएदार होना बताया गया है वह वहीं है एवं उक्त वर्णित किराएदार फर्म का नाम है अथवा व्यक्तिगत इस संबंध में भी उक्त गवाह द्वारा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया । साथ ही प्रतिवादीगण की ओर से प्रस्तुत गवाहों ने स्वीकार किया है कि प्यारेलाल जीवित है । अतः इस संबंध में उक्त गवाह सर्वोत्तम साक्षी थी जो यह स्पष्ट करता कि प्रदर्श 20 में वर्णित कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी कौन था एवं वह आज भी किराएदार है अथवा नहीं अथवा वह व्यक्ति है या फर्म । उक्त गवाह द्वारा स्वयं को न्यू लक्ष्मी बेकरी के नाम से व्यवसाय करना बताया है जबकि प्रदर्श 20 में कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी वर्णित है । प्रदर्श 20 के समग्र अवलोकन से यह तथ्य स्पष्ट है कि व्यक्ति के नाम के आगे श्री दर्शाया गया है परन्तु कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी को किराएदार होना जाहिर किया एवं जिससे यह जाहिर नहीं है कि वह व्यक्ति है अथवा फर्म एवं डी.ड. 1 द्वारा भी इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है । न ही उसके द्वारा प्रस्तुत रसीदें इस तथ्य को युक्तियुक्त रूप से साबित करती हैं कि उक्त रसीदें विवादित जायदाद की सारी दुकानों की हों व बतौर किराएदार है एवं उक्त किराया उसके द्वारा प्यारेलाल को पूर्व से ही अदा किया गया है । डी.ड. 2 हसमत राम ने इस बाबत व्यक्त किया है कि उसका व्यापार रामदयाल तुलसीराम के नाम से करीब 50 साल से है जो उसके बड़े भाई किशनचंद संभालते थे जिनका स्वर्गवास हो गया । कजोइमल को किराया देते थे रसीदें प्रदर्श ए.5 से ए.43 हैं । साथ ही उक्त गवाह ने यह स्वीकार किया है कि उक्त फर्म का मालिक किशनचंद था जिनके वारिस शास्त्रीनगर में रहते हैं एवं दुकान करते हैं । इस संबंध में मेरा विनम्र मत है कि उक्त गवाह ने स्वयं स्वीकार किया है कि विवादित जायदाद रहननामें के समय प्रदर्श 20 में उक्त रामदयाल तुलसीराम सिंधी फर्म है जिसके मालिक

किशनचंद थे जिनके वारिस वर्तमान में अन्य जगह निवास एवं व्यवसाय करते हैं । उक्त गवाह यह बताने में असमर्थ रहा है कि वह किस प्रकार से उक्त फर्म का मालिक बना साथ ही उसने यह भी स्वीकार किया कि किराए की रसीदों में रामदयाल तुलसीराम फर्म का नाम नहीं है, न ही बुकलेट पर फर्म का नाम है एवं इस बाबत उक्त गवाह द्वारा बहीखाते पेश नहीं किए गए लिहाजा प्रदर्श ए.5 से ए.93 जिन पर बुकलेट फर्म का नाम अथवा विवादित दुकानों की बाबत अंकन न होने से यह नहीं माना जा सकता कि उक्त रसीदें विवादित दुकानों की ही हों एवं इस संबंध में भी प्रतिवादीगण द्वारा कोई कथन नहीं किया गया कि प्रदर्श 20 में वर्णित रामदयाल तुलसीराम सिंधी फर्म का नाम अथवा व्यक्ति का जो रसीदें प्रदर्श ए.5 से प्रदर्श ए.93 भी साबित नहीं कर पाई हैं । यदि हम प्रदर्श ए.94 ए.95 ए.96, 98, 97 का अवलोकन करें तो उससे मैसर्स रामदयाल तुलसीराम कन्फेक्सनरी वर्क्स, आजाद चौक भीलवाड़ा का हवाला है परन्तु प्रदर्श 20 में मात्र रामदयाल तुलसीराम सिंधी वर्णित है । अतः उक्त दस्तावेज का प्रतिवादीगण लाभ प्राप्त नहीं कर सकते, न ही वे यह प्रमाणित कर सके हैं कि उक्त दस्तावेज में वर्णित फर्म ही प्रदर्श 20 में दर्शित है, विवादित जायदाद रहननामें से बतौर किराएदार काबिज है ।

साथ ही डी.ड. 2 ने यह भी स्वीकार किया है कि विवादित जायदाद का किराया किसी को नहीं देते हैं, न ही उक्त दोनों गवाह द्वारा ऐसा कोई दस्तावेजी दस्तावेज पेश किया गया जिससे यह जाहिर होता हो कि प्रदर्श 20 में वर्णित किराएदार वर्तमान में भी उक्त परिसर में भी व्यवसाय कर रहे हैं । जबकि प्रदर्श 20 में यह स्पष्ट रूप से अंकित है कि रहन के वक्त यदि जो किराएदार है वे रहन छुड़ाने के समय भी किराएदार रहेंगे तो उनसे नई किराया चिट्ठी लिखा ली जाएगी । परन्तु प्रतिवादीगण द्वारा प्रस्तुत दोनों गवाहों के बयानों से प्रतिवादी यह प्रमाणित करने में विफल रहा है कि वह विवादित जायदाद में बतौर किराएदार रहन से पूर्व काबिज हो तथा वर्तमान में भी काबिज हैं एवं उनके बयानों का समग्र अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि विवादित जायदाद में उनका आधिपत्य रहनग्रहिता के वारिसों के रूप में चला आ रहा है ।

उपरोक्तानुसार उक्त दोनों विवाद्यक प्रतिवादीगण के विरुद्ध व बहक वादीगण निर्णीत किए जाते हैं ।

आदेश

दावा वादीगण बाबत रहनमुक्ति मकान एवं आधिपत्य विरुद्ध प्रतिवादीगण निम्न प्रकार डिक्री किया जाता है :–

वादीगण 20,000/- रुपए प्रतिवादीगण को दिए जाकर रहनशुदा संपत्ति को रहनमुक्ति प्राप्त करने के अधिकारी हैं । साथ ही प्रतिवादीगण वादपत्र के पैरा सं. 1 में वर्णित संपत्ति का खाली कब्जा दो माह की अवधि में वादीगण को संभलावें । पक्षकारान खर्चा अपना-अपना वहन करेंगे । पर्चा डिक्री नियमानुसार बनाई जाए ।

हस्ता./-
(लता गौड़)
अतिरिक्त सिविल न्यायाधीश (क.ख.)
एवं न्यायिक मजिस्ट्रेट सं. 2 भीलवाड़ा"

5. प्रतिवादियों किशन चंद पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी और अन्य ने तारीख 18 मार्च, 2004 को उक्त निर्णय और डिक्री के विरुद्ध विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश सं. 1, भीलवाड़ा के समक्ष प्रथम अपील फाइल की है जिसमें अपील संख्या 14/2004 "किशन चंद पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी और अन्य" को तारीख 22 मार्च, 2005 को मंजूर कर लिया और मामले को पुनः विवाद्यक संख्या 3 का विनिश्चय करने के लिए विद्वान् विचारण न्यायालय को वापस भेज दिया गया । तारीख 22 मार्च, 2005 के उक्त आदेश का सुसंगत भाग इसमें नीचे वर्तमान संदर्भ के लिए उद्धृत है :–

आदेश

अपील अपीलार्थी की स्वीकार की जाती है । अधीनस्थ न्यायालय का आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाता है और अधीनस्थ न्यायालय को पत्रावली इस निर्देश के साथ प्रतिप्रेषित की जाती है कि अधीनस्थ न्यायालय तनकी संख्या 03 पर उपरोक्त विवेचनानुसार उभयपक्ष को सुनवाई का अवसर देकर पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य का विवेचन कर यथासंभव तीन माह की अवधि में इस तनकी पर पुनः निर्णय पारित करे और यदि दावा डिक्री योग्य पाए तो आदेश 34 नियम 07 सिविल प्रक्रिया संहिता के आज्ञापक प्रावधानों के तहत डिक्री पारित करे । अपील व्यय पक्षकारान अपना-अपना वहन करेंगे । अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष उभयपक्ष दिनांक 11 अप्रैल, 2005 को

उपस्थित रहे ।

हस्ता./-
(सुश्री प्रभा शर्मा)
अपर जिला न्यायाधीश सं. 1
भीलवाड़ा (राजस्थान)"

6. रिमांड के बाद, उसी वाद जिसकी संख्या 322/1992 "सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय और अन्य बनाम किशन चंद पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी (मृतक) के विधिक प्रतिनिधियों और अन्य" में तारीख 10 अगस्त, 2005 के अपने आदेश द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय ने प्रतिवादियों के पक्ष में पूर्वोक्त विवाद्यक संख्या 3 का विनिश्चय किया था और वादियों के विरुद्ध विनिश्चय किया था जो इस प्रकार है :–

"9. **विवाद्यक संख्या-3** :–

क्या वादीगण कन्हैयालाल, सुगनचंद, रामदयाल व तुलसीराम से भौतिक कब्जा प्राप्त करने के अधिकारी नहीं हैं ?

इस विवाद्यक को साबित करने का भार प्रतिवादीगण पर था । माननीय अपीलीय न्यायालय द्वारा अपने निर्णय तारीख 22 मार्च, 2005 में दिए गए निर्देशों के अनुसार इस विवाद्यक को तय करने के लिए हमें यह देखना है कि रहनशुदा जायदाद में रहन के वक्त किराएदार कन्हैयालाल, सुगनचंद, रामदयाल किराएदार के रूप में उक्त जायदाद पर काबिज हैं और उनकी किराएदारी सरेंडर हुई है या नहीं, और सरेंडर हुई तो कब हुई? पत्रावली पर उपलब्ध रहननामा प्रदर्श 20 के सी से डी भाग में यह अंकित किया गया है कि उपरोक्त जायदाद जब मैं रहन के रूप में एकमुश्त दूंगा उसके तीन महीने बाद पश्चिम तरफ व पूर्व की दुकानें व मकान तीनों मंजिल तक जीन पर मौजूदा किराएदार कन्हैयालाल पिता सुगनचंद सिंधी व रामदयाल तुलसीराम सिंधी है, अगर वह उस समय भी किराएदार ही रहेंगे तो मैं वापस उनसे किराए चिट्ठी आज के पद की जो उनके किराए पर है, उनसे किराया चिट्ठी लिखवा दूंगा दूसरी तरफ का उज्र नहीं करूंगा ।

रहननामा प्रदर्श 20 के सी से डी भाग में अंकितानुसार विवादित संपत्ति रहन करते वक्त कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी व रामदयाल तुलसीराम सिंधी पूर्व की तरफ की दुकानें व मकान तीन मंजिला तक

जीन पर किराएदार के रूप में काबिज होना प्रमाणित है ।

हमें यह देखना है कि क्या उनकी किराएदारी सरेंडर हुई है या नहीं, और सरेंडर हुई तो कब हुई?

प्रतिवादी साक्षी डी.ड. 1 कन्हैयालाल ने मुख्य परीक्षा में कथन किया है कि विवादित जायदाद में से 4 दुकानें उसके पास हैं । जिसमें लक्ष्मी बेकरी के नाम से व्यवसाय है । यह दुकानें हमारे पास 1950 से किराए पर हैं । जिसमें वह कहता है कि सारी जायदाद पर वर्तमान में ढल्लूमल व हीरानंद के लड़कों का कब्जा है । रहन हम छोड़ने को तैयार हैं, लेकिन हम किराएदार थे, किराएदार हैं । यह गलत है कि हम रहनदार हों, बल्कि हम किराएदार हैं, किराएदार रहेंगे ।

साक्षी डी.ड. 2 हसमत राय कहता है कि मेरा व्यापार रामदयाल तुलसीराम के नाम से है । करीब 50 साल से मैं इस नाम से व्यवसाय कर रहा हूं । ये व्यवसाय पहले मेरे बड़े भाई संभालते थे किशनचंद मेरे बड़े भाई का स्वर्गवास हो गया किशनचंद के जीवनकाल में मैं कारोबार का मालिक नहीं था व उनके साथ काम करता था । किशनचंद की मृत्यु के बाद में सारा काम मैं ही कर रहा था । कन्हैयालाल के पास की चार दुकानें मय बरामदा किराए पर है ।

जिरह में वह कहता है कि रामदयाल तुलसीराम फर्म सन् 1964 से व्यापार कर रही है । इस फर्म का मालिक रामदयाल तुलसीराम को नहीं बनाया, किशनचंद को बना रखा है । किशनचंद मेरे भाई हैं । सन् 1964 में मैं पढ़ता भी था और दुकान पर बैठता भी था । आगे वह कहता है कि ढल्लूमल के 6 लड़के रामदयाल, किशनचंद, हरिराम, हसमत राय, शोभालाल, दयालदास व मनोहरलाल, मनोहरलाल 1998 में गुजर गया । यह गलत है कि विवादित जायदाद पर मेरा व शोभालाल का तन्हा कब्जा हो । यह गलत है कि विवादित जायदाद के किसी भी हिस्से पर किशनचंद के पुत्रों का कब्जा नहीं रहा हो । यह भी गलत है कि हमारा जायदाद पर कब्जा केवल ढल्लूमल के पुत्र होने के कारण है । व्यापार करने के कारण हमारा कब्जा है ।

10. उपरोक्त दोनों गवाहों ने विवादित जायदाद में सन् 1964 से किराएदार के रूप में काबिज होने की ताईद की है । जबकि वादीगण की ओर से प्रस्तुत साक्षी पी.ड. 1 सोहनलाल ने जिरह में कथन किया है कि प्यारेलाल ने विक्रय के समय यह बताया था कि

विवादित जायदाद के जो किराएदार हैं, उसका जिम्मा उसका होगा । प्यारेलाल विवादित जायदाद के नाम रहननामा लिखा है । इस गवाह के उपरोक्त कथनों से विवादित जायदाद वादीगण द्वारा क्रय किए जाते समय उसमें किराएदार के मौजूद होने के तथ्य की पुष्टि होती है ।

साक्षी पी.ड. 2 व 3 रामदयाल दोनों ने विवादित परिसर में किराएदार होने व रहननामा की शर्तों के बारे में अनभिज्ञता जाहिर की है ।

साक्षी पी.ड. 4 रामेश्वरलाल ने जिरह में कथन किया कि रहन से पूर्व किराएदार होने की जानकारी प्यारेलाल ने नहीं दी । उस समय कोई किराएदार नहीं था । मुझे पता नहीं कि रहननामा प्रदर्श 20 में सी से डी में अंकित व्यक्ति रहननामा प्रदर्श 20 निष्पादित करते समय बहैसियत किराएदार रह रहे थे । आगे फिर स्वतः कहा कि प्रदर्श 20 के सी से डी भाग लिखित व्यक्ति ढल्लूमल हीरानंद के उत्तराधिकारी हैं, जो जुदा प्रकरण में प्रतिवादीगण है । इस गवाह ने हालांकि विवादित जायदाद वादीगण द्वारा क्रय किए जाते समय किराएदार होने की जानकारी से इनकार किया है, लेकिन इसी गवाह ने प्रदर्श 20 रहननामा के सी से डी भाग में अंकित व्यक्ति को रहनग्रहिता हीरानंद ढल्लूमल के उत्तराधिकारी होने का कथन किया है ।

रिबटल साक्ष्य में साक्षी पी.ड. 4 रामेश्वरलाल द्वारा जिरह में कथन किया है कि वादग्रस्त जायदाद काफी समय से हीरानंद के लड़कों के पास है, किशनचंद को छोड़कर 1 इस गवाह ने यह भी कथन किया है कि प्यारेलाल ने रहननामा लिखा तब कैसी स्थिति थी, उसे पता नहीं । प्यारेलाल के किराएदार रामदयाल तुलसीराम, कन्हैयालाल सुगनचंद नहीं थे । मेरी प्यारेलाल से बात हुई थी । प्यारेलाल से मेरी बात हुई, तब विवादित मकान मेरे भाइयों वादीगण ने खरीदा । इस गवाह ने प्रदर्श 20 रहननामा के सी से डी भाग में अंकित जायदाद पर प्रतिवादीगण का उत्तराधिकार होने का कथन किया है तथा इसी गवाह द्वारा यह भी कथन किया गया है । वह वाद द्वारा संपत्ति प्यारेलाल से खरीदते समय उसकी प्यारेलाल से बात हुई थी और उसने विवादित संपत्ति में किराएदार नहीं होने की बाबत बताया था । लेकिन इस गवाह के कथनों से रहननामा प्रदर्श 20 के बारे में इस गवाह को जानकारी होने का तथ्य प्रमाणित है और विवादित जायदाद खरीदते समय किराएदार नहीं होने का कथन इस

गवाह द्वारा किया गया लेकिन तथ्य प्रदर्श 20 के सी से डी भाग में अंकित किराएदार के विवादित संपत्ति के किराएदार के अधिकार कब समाप्त हुए, यह गवाह द्वारा नहीं बताया गया है, इसलिए प्रदर्श 20 रहननामा के सी से डी भाग में अंकित किराएदार ने विवादित संपत्ति का खाली कब्जा सौंपा हो, यह तथ्य वादीगण के साक्ष्य से प्रमाणित नहीं है । जबकि प्रतिवादीगण साक्षी डी.ड. 1 कन्हैयालाल व डी.ड. 2 हसमत राय दोनों ही गवाहों ने विवादित संपत्ति पर किराएदार के रूप में सन् 1964 से काबिज रहने के तथ्य की पुष्टि की है, लेकिन वादी साक्षीगण के कथनों से इस तथ्य का खण्डन नहीं किया जा सका है । इसलिए रहननामा प्रदर्श 20 के सी से डी भाग में अंकित रहननामे के वक्त किराएदार कन्हैयालाल सुगनचंद, रामदयाल तुलसी राम की किराएदारी सरेंडर हुई हो, यह तथ्य पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर प्रमाणित नहीं है ।"

* * * *

"और न्यायालय के समक्ष विचाराधीन इस प्रकरण में पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य से रहननामा के सी से डी भाग में अंकित किराएदार कन्हैयालाल सुगनचंद रामदयाल तुलसीराम की किराएदारी सरेंडर होना प्रमाणित नहीं है । इसलिए उपरोक्त दोनों न्यायिक दृष्टांतों में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशानुसार वादीगण कन्हैयालाल, सुगनचंद, रामदयाल तुलसीराम से भौतिक कब्जा प्राप्त करने के अधिकारी नहीं हैं ।

अतः विवाद्यक संख्या 3 प्रतिवादी के पक्ष में तथा वादीगण के विरुद्ध तय किया जाता है ।"

7. विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा प्रतिप्रेषित करने के बाद तारीख 10 अगस्त, 2005 के उक्त आदेश के विरुद्ध वादियों सोहनलाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय और अन्य ने पुनः प्रथम अपील संख्या 71/2005 फाइल की थी जिसको विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश सं.1, भीलवाड़ा ने यह अभिनिर्धारित करते हुए तारीख 3 सितम्बर, 2013 के आक्षेपित आदेश द्वारा वादियों के पक्ष में मंजूरी दी थी कि वादी वाद संपत्ति अर्थात् प्रश्नगत चार दुकानों का कब्जा लेने के हकदार थे क्योंकि प्रतिवादी-किराएदार यह साबित नहीं कर सके कि वे बंधक के समय पर किराएदार और बंधक के मोचन के बाद भी वाद संपत्ति में किराएदार के रूप में निरन्तर बने रहे थे । विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश संख्या 1 भीलवाड़ा का तारीख 3 सितंबर,

2013 का आदेश वर्तमान संदर्भ के लिए नीचे उद्धृत है :–

"11. जहां तक इस अपील का सवाल है यह अपील केवल मात्र तनकी संख्या 3 पर अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित निर्णय से संबंधित है। तनकी संख्या निम्न प्रकार है –

क्या वादीगण कन्हैयालाल, सुगनचंद, रामदयाल एवं तुलसीराम से भौतिक कब्जा प्राप्त करने के अधिकारी हैं?"

12. अधीनस्थ न्यायालय ने कब्जे के संबंध में जो विवाद्यक बिन्दु बनाया है वह केवल मात्र इस बाबत बनाया गया है कि क्या वादीगण कन्हैयालाल, सुगनचंद, रामदयाल एवं तुलसीराम से भौतिक कब्जा प्राप्त करने के अधिकारी है? इस संबंध में जो अहम दस्तावेज है, वह प्रदर्श 20 है जो रहननामा है। उक्त रहननामें को देखा जाए तो उक्त रहननामा प्यारेलाल द्वारा ढल्लूराम व हीरानंद के पक्ष में लिखा गया था अर्थात् दो के पक्ष में लिखा गया था। संपत्ति का विवरण उक्त रहननामे में दिया गया है। इस प्रदर्श 20 का सुसंगत भाग निम्न प्रकार है –

"उपरोक्त जायदाद जब मैं रहन के रुपए एक मुश्त दूंगा उसके तीन महीने बाद पश्चिम तरफ व पूर्व तरफ की दुकानें व मकान तीनों मंजिल तक जीन पर मौजूदा किराएदार कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी व रामदयाल तुलसीराम सिंधी है अगर वो उस समय भी किराएदार ही रहेंगे तो मैं वापस उनसे किराए चिट्ठी आज के दर की जो उनके किराए पर है उनसे किराए चिट्ठी लिखवा दूंगा दूसरी तरफ का उज्र नहीं करूंगा।"

13. अतः रहननामें के उपरोक्त मुआयदे के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि संपत्ति का पश्चिमी भाग, जो कि द्वितीय पक्ष रहनग्रहिता के कब्जे में दिया गया था, वह द्वितीय पक्ष को रहने के रुपयों की अदायगी के समय वापस रहनकर्ता को सौंपना था एवं जो पश्चिम की तरफ जो दुकानों व मकान तीन मंजिला, जिन पर किराएदार कन्हैयालाल, सुगनचंद, रामदयाल व तुलसीराम के समय थे, का रहन छोड़ते वक्त भी अगर किराएदार रहेंगे तो वादी उनसे किराया चिट्ठी उस समय की दर से जो उनके किराए पर है, उनसे चिट्ठी लिखवाकर दी जाएगी। अतः वे किराएदार पुनः किराएदार बन जाएंगे।

14. इस संबंध में दोनों पक्षों ने इस अपील में जो न्यायिक दृष्टांत

प्रस्तुत किए हैं उनमें अपीलार्थी की ओर से न्यायिक दृष्टांत ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 2127 पोलम्मारासेट्टी बरना **बनाम** सुधा अप्पाराम नायटू 2011 (1) डी. एन. जे. (राज.) 193 गौतम लाल **बनाम** सुखलाल के विधिक प्रतिनिधि तथा ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 1565 शाह मथुरादास मगन लाल एंड कंपनी **बनाम** नागप्पा शंकरअप्पा व अन्य प्रस्तुत किए गए हैं ।

15. अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत प्रथम न्यायिक दृष्टांत ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 2127 में यह प्रतिपादित किया गया है कि जहां धारा 60 के संबंध में किस प्रकार किराया राशि अदा की जाएगी, इसका कोई प्रावधान रहननामें में दिया गया है तो पक्षकारों का यह आशय माना जाएगा कि वह किराया खत्म करना चाहते हैं । परन्तु प्रस्तुत प्रकरण में यह आया है कि जो किराएदार पहले थे, उनसे दुबारा किराया चिट्ठी लिखाई जाएगी । अतः यह स्पष्ट है कि पक्षकारों के बीच यह तय किया गया था कि अगर किराएदार किराएशुदा परिसर में रहते हैं तो व दुबारा किराएदार जाने जाएंगे । अतः यह न्यायिक दृष्टांत हस्तगत प्रकरण में लागू नहीं होता है । दूसरा न्यायिक दृष्टांत 2011 (1) डी. एन. जे. (राज.) 193 में यह प्रतिपादित किया गया है जहां दोनों पक्षकारों ने लिखित में मुआयदा किया, वहां पक्षकारों को मुआयदे के विपरीत कार्य करने नहीं दिया जा सकता । इसमें पक्षकारों के बीच यह माना गया था कि रहन छुड़ाने के समय दुकान का रिक्त कब्जा सुपुर्द कर दिया जाएगा । अपीलार्थी ने धन स्वीकार करने और कब्जा देने से इनकार कर दिया व रहननामें की शर्तों के प्रतिकूल कार्य किया । इसकी अनुमति नहीं दी जा सकती । तीसरे न्यायिक दृष्टांत ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 1565 में यह प्रतिपादित किया गया है कि जहां डीड की समयावधि निश्चित की गई है उसके बाद मोर्डगेज डीड की शर्तें लागू होंगी एवं रहनकर्ता कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी होगा ।

16. इसके विपरीत जो न्यायिक दृष्टांत प्रत्यर्थीगण की ओर से प्रस्तुत किए गए हैं, उनमें 1999 डी. एन. जे. (एस. सी.) 118 चिरियां सोसाम्मा व अन्य **बनाम** सुंदरेस्सान पिल्लाई सारस्वथी अम्मा व अन्य, ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2284 निर्मल चन्द्रा बनाम विमल चंद प्रस्तुत किए गए हैं, जिनमें यह प्रतिपादित किया गया है कि जहां किराएदारी के अधिकारों को समाप्त नहीं किया गया है, वहां

रहन मुक्त होने के बाद पुनः किराएदारी के अधिकार उत्पन्न हो जाते हैं एवं किराएदारी चालू हो जाती है । इस कारण से रहनशुदा संपत्ति का किराया किराएदारी समाप्त नहीं होने पर रहनकर्ता प्राप्त करने का अधिकारी नहीं होता है । अतः उपरोक्त न्यायिक दृष्टांतों से यह स्पष्ट है कि यदि रहननामा निष्पादित करते समय किराएदारी समाप्त कर दी जाती है या उसके बाद किसी भी समय रहन किराएदारी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से समाप्त की जाती है वहां पर रहनकर्ता रहन की समाप्ति के बाद संपत्ति का कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी होता है एवं जहां पर किराएदारी समाप्त नहीं होती है, वहां किराएदारी रहन समाप्त होने पर पुनःजीवित हो जाती है ।

17. इस प्रकरण में जो तथ्य आए हैं उसमें यह देखना है कि क्या प्रस्तुत मामले में वादी रहन की समाप्ति के बाद वादग्रस्त संपत्ति का कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी है या नहीं ? सर्वप्रथम रहननामें का अवलोकन किया जाए तो इसमें यह बात स्पष्ट अंकित है कि 'उपरोक्त जायदाद जब मैं रहन के रुपए एक मुश्त दूंगा उसके तीन महीने बाद पश्चिम तरफ व पूर्व तरफ की दुकानें व मकान तीनों मंजिल तक जीन पर मौजूदा किराएदार कन्हैयालाल पिता सुगनचंद सिंधी व रामदयाल तुलसीराम सिंधी है अगर वो उस समय भी किराएदार ही रहेंगे तो मैं वापस उनसे किराए चिट्ठी आज के दर की जो उनके किराए पर है उनसे किराए चिट्ठी लिखवा दूंगा दूसरी तरह का उजर नहीं करूंगा ।' अतः इस प्रकरण में दो किराएदार वो उस समय भी किराएदार ही रहेंगे तो मैं वापस उनसे किराए की चिट्ठी आज के दर की जो उनके किराए पर है उनसे किराए चिट्ठी लिखवा दूंगा दूसरी तरफ का उज्र नहीं करूंगा । अतः इस प्रकरण में दो किराएदार कन्हैयालाल, सुगनचंद व रामदयाल तुलसीराम सिंधी बताए गए हैं ये दोनों फर्में हैं, जो रहनग्रहिता से भिन्न हैं । इस रहनशुदा संपत्ति को रहननामें में दो भागों में बताया गया है, जिसमें से पश्चिम दिशा का मकान जो रहनग्रहिता के पास है, उसे रुपयों की अदायगी के तीन माह में खाली कर द्वितीय पक्ष को सौंपना होगा, ऐसी इबारत लिखी गई है अर्थात् जहां तक पश्चिम दिशा के मकान का सवाल है, उसका कब्जा रहनग्रहिता को दिया गया था । एवं इसके लिए यह स्पष्ट किया गया है कि इसका कब्जा द्वितीय पक्ष को रहनकर्ता को सौंपना होगा । जहां तक इस

पश्चिम तरफ के हिस्से के मकान का सवाल है, इस संबंध में इस दस्तावेज प्रदर्श 20 के अनुसार यह स्पष्ट है कि इसका कब्जा वादी रहन समाप्त होने के बाद प्राप्त करने का अधिकारी था एवं इस संबंध में अधीनस्थ न्यायालय द्वारा इस बात पर गौर नहीं किया है एवं वादी कब्जा पाने का अधिकारी हो, ऐसा नहीं माना है ।

18. जहां तक पूर्व तरफ की दुकानें एवं मकान की तीनों मंजिल तक जिन पर किराएदार कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी एवं रामदयाल तुलसीराम सिंधी रहननामा लिखते वक्त मौजूद थे, जिनके संबंध में यह देखना है कि क्या रहन से छुड़ाने का नोटिस देते समय या दावा करते समय या दोनों के समय भी बने हुए थे या नहीं? इनकी किराएदारी तभी मानी जा सकती है जब रहन की रकम अदा करते समय मौजूदा किराएदार किराएदारी में बने हों, क्योंकि इस रहनामें में स्पष्ट रूप से अंकित है कि "उस समय भी किराएदार ही रहेंगे ।" अर्थात् यदि उक्त दोनों किराएदार द्वारा किराएदारी समाप्त कर परिसर खाली कर रहनग्रहिता को सौंप दिया हो तो व उनकी ओर से किराएदारी समाप्त होना माना जा सकता है ।

19. अब देखना यह है कि क्या किराएदार कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी व रामदयाल तुलसीराम सिंधी लगातार किराएदारी में बने रहे हैं या नहीं ? इस संबंध में तनकी सं. 3 जो कायम की गई है कि क्या वादी कन्हैयालाल सुगनचंद व रामदयाल तुलसीराम सिंधी से भौतिक कब्जा प्राप्त करने के अधिकारी है या नहीं? इसका भार प्रतिवादी पर था, अर्थात् प्रतिवादी को यह साबित करना था कि उक्त दोनों किराएदार हमेशा से किराएदारी में रहे थे । वादी ने जो वाद प्रस्तुत किया है वह केवल रहनग्रहिता के विधिक प्रतिनिधियों के रूप में प्रस्तुत किया है एवं संपूर्ण संपत्ति का कब्जा प्राप्त करने की मांग की है, अर्थात् उनकी ओर से यह कथन किया गया है कि संपूर्ण संपत्ति प्रतिवादीगण के पास कब्जे में है एवं उक्त दोनों फर्में वर्तमान में किराएदार नहीं हैं । प्रतिवादीगण ने कहीं भी जवाब दावे में यह अंकित नहीं किया है कि उक्त दोनों फर्में लगातार किराए पर बनी हुई हो एवं यह भी कथन नहीं किया है कि संपत्ति के रहने के दौरान उक्त फर्म किराया अदा करती हो एवं किस प्रकार किराया समायोजित किया जाता था । रहननामें में दो किराएदार कन्हैयालाल सुगनचंद व रामदयाल तुलसीराम बताए हैं । उक्त दोनों फर्में कौन

चलाता है एवं रहननामें के निष्पादन के बाद दावा दायरी तक उक्त दोनों फर्मों द्वारा कब तक का किराया दिया, ऐसा कोई साक्ष्य अभिलेख पर नहीं है । फर्म अगर अलग से किराएदार थी तो दोनों फर्मों की अकाउंट बुक, किराए की रसीद, जो रहननामें के बाद अदा की जाती रही हो, ऐसा कोई दस्तावेज प्रतिवादीगण ने प्रस्तुत नहीं किया है । इस संबंध में डी.ड. 1 प्रतिवादी ने जिरह में यह कथन किया है कि "सारी जायदाद पर वर्तमान में ढल्लूमल व हीरानंद के लड़कों का कब्जा है ।" प्रतिवादीगण के गवाह डी.ड. 1 ने यह स्वीकार किया है कि समस्त जायदाद रहनग्रहिता के लड़को के कब्जे में आ गई है । अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि दोनों फर्में जो किराए पर हैं, वह समाप्त हो गई हैं एवं ढल्लूमल व हीरानंद के लड़के उस पर काबिज हैं ।

20. अब आगे यह देखना है कि क्या जो ढल्लूमल व हीरानंद के लड़के वादग्रस्त संपत्ति पर काबिज हैं, वे रहनग्रहिता के उत्तराधिकारी की हैसियत से काबिज हैं या उक्त फर्मों के मालिक होने के रूप में काबिज है ? इस संबंध में हीरानंद के लड़के उक्त फर्म कन्हैयालाल सुगनचंद व रामदयाल तुलसीराम सिंधी के मालिक हो गए हों, ऐसा कोई दस्तावेज प्रतिवादीगण की ओर से प्रस्तुत नहीं किया गया है । इसके अलावा प्रतिवादीगण की ओर से ऐसा कोई दस्तावेजी साक्ष्य भी प्रस्तुत नहीं किया गया है कि उक्त फर्मों के मालिक कब-कब, कौन-कौन रहे, न ही कोई खाता बही आदि प्रस्तुत किया गया है न ही रहन करने के बाद किस प्रकार फर्म किराया अदा करती वह किसको अदा करती थी, ऐसा कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है । अतः यह माना जा सकता है कि ढल्लूमल व हीरानंद के लड़के उक्त फर्मों के मालिक की हैसियत से नहीं बल्कि रहनग्रहिता के उत्तराधिकारी होने की हैसियत से काबिज हैं एवं चूंकि जैसा कि द्वितीय पक्ष के बारे में रहननामें में स्पष्ट है कि द्वितीय पक्ष को परिसर खाली कर संपत्ति सौंपनी होगी । अतः इस आधार पर उक्त दोनों फर्मों के पास जो संपत्ति किराए पर थी, उक्त किराएदारी समाप्त होना माना जा सकता है और किराएशुदा संपत्ति रहनग्रहिता के पुत्रों (प्रतिवादीगण) के पास बहैसियत रहनग्रहिता कब्जे में होना माना जा सकता है । चूंकि रहननामें के अनुसार रहनग्रहिता रहन समाप्त होने के बाद कब्जा वापस सौंपने का दायी होगा । इस बाबत शर्त अंकित है । अतः वादी रहन राशि अदा करने के बाद उसका रिक्त कब्जा प्राप्त करने के अधिकारी होना माना

जा सकता है । अतः इस विवाद्यक बिन्दु सं. 3 के निर्णय में अधीनस्थ न्यायालय ने कानून व तथ्यों की भूल की है एवं वादी को रहनशुदा संपत्ति का कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी न मानकर गलती की है । अतः तनकी सं. 3 इस कदर निर्णीत की जाती है कि वादगण रहनशुदा संपत्ति का आधिपत्य प्रतिवादीगण से प्राप्त करने के अधिकारी हैं । अतः यह तनकी सं. 3 प्रतिवादीगण के विरुद्ध व वादीगण के पक्ष में निर्णीत की जाती है ।

21. अन्य विवाद्यक इस अपील की विषयवस्तु नहीं है वह जिसके द्वारा अधीनस्थ न्यायालय ने वादी की रहनशुदा संपत्ति को बंधक मुक्त करवाने का अधिकारी माना है, उसके विरुद्ध प्रतिवादीगण ने कोई अपील प्रस्तुत नहीं की है । अतः अधीनस्थ न्यायालय द्वारा आंशिक रूप से वादीगण के पक्ष में जो डिक्री प्रदान की है, उसे अपील में संशोधित करते हुए पूर्ण रूप से वादी के पक्ष में पारित किया जाना उचित है ।

22. अतः उपरोक्त विवेचनानुसार अपीलार्थीगण द्वारा प्रस्तुत यह अपील स्वीकार किए जाने योग्य है ।

आदेश

23. अतः अपीलार्थीगण द्वारा प्रस्तुत यह अपील स्वीकार की जाकर अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांकित 10 अगस्त, 2005 को निम्न प्रकार परिवर्तित कर वादीगण के पक्ष में एवं प्रतिवादीगण के विरुद्ध निम्न डिक्री पारित की जाती है :–

24. वादीगण वादपत्र की चरण सं. 1 तथा रहननामा प्रदर्श 20 तारीख 7 दिसम्बर, 1974 में वर्णित रहन रखी गई संपत्ति को रहनमुक्त कराने का अधिकारी है । साथ ही वादीगण प्रतिवादीगण से उक्त रहनशुदा संपत्ति का पूर्ण रूप से वास्तविक कब्जा भी प्राप्त करने का अधिकारी है । रहननामें की पुश्त पर संपत्ति रहन से आजाद करने का इन्द्राज किया जाए । यदि प्रतिवादीगण ऐसा नहीं करें तो वादीगण बंधक मोचन डीड न्यायालय से सब रजिस्ट्रार कार्यालय में रजिस्टर्ड करवाने के अधिकारी होंगे । प्रतिवादीगण वादीगण से बीस हजार रुपए की राशि प्राप्त करें । असल रहननामा तारीख 7 दिसंबर, 1974 प्रदर्श 20 वादीगण प्रतिवादीगण से प्राप्त करने के अधिकारी है । उपरोक्तानुसार डिक्री बनाई जाए । निर्णय व डिक्री की प्रति

सहित विचारण न्यायालय की पत्रावली अविलंब भिजवाई जाए ।

हस्ता./-

(अनन्त भण्डारी)
अपर जिला न्यायाधीश संख्या 1
भीलवाड़ा (राजस्थान)"

8. अपर जिला न्यायाधीश सं. 1, भीलवाड़ा के विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर, प्रतिवादी-कन्हैयालाल पुत्र श्री हीरानंद सिंधी और हसमत राय **उर्फ** हिम्मतराज पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी ने तारीख 2 दिसम्बर, 2013 को इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान द्वितीय अपील फाइल की है ।

9. श्री आर. के. थानवी, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल के सहायक श्री मुकेश महेश्वरी, विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी-प्रत्यर्थियों की ओर से पेश होकर यह निवेदन किया है कि विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में त्रुटि की है कि किराएदारों को प्रश्नगत वादग्रस्त दुकान में किराएदारी का स्वतंत्र अधिकार नहीं था और कि बंधक मोचन की तारीख 7 दिसम्बर, 1974 को बंधक विलेख प्रदर्श 20 के अधीन वादी-सोहनलाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय के पक्ष में डिक्री थी जिसके साथ तारीख 18 मार्च, 2004 की डिक्री के अनुसरण में विद्वान् विचारण न्यायालय सहित तारीख 6 अप्रैल, 2004 को वादी द्वारा बंधक मोचन के लिए 20,000/- रुपए की डिक्री की गई राशि के साथ जमा की गई थी और चूंकि वे बंधककर्ता वादी के प्रश्नगत वाद दुकानों का कब्जा सौंपने के लिए भी बाध्य थे । विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री आर. के. थानवी ने माननीय उच्चतम न्यायालय के **निर्मल चंद्रा** बनाम **विमल चंद**[1] और **चेरियान सोसाम्मा और अन्य** बनाम **सुदर्शन पिल्लै सारस्वथी अम्मा और अन्य**[2] वाले मामलों में दिए गए निर्णयों का अवलंब लेते हुए यह तर्क दिया है कि इसमें उक्त बंधक विलेख प्रदर्श 20 तारीख 7 दिसम्बर, 1974 के अधीन बंधकदार के दो अधिकारों और बंधक के पक्ष में किराएदारी का कोई विलयन नहीं हुआ था जिसमें मैसर्स कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी और रामदयाल तुलसीराम सिंधी के कब्जे में होने के वाद दुकानों के तथ्य विधिवत् रूप से उल्लिखित थे और इसलिए बंधक के मोचन के साथ ही जिसके साथ

---

[1] ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2284.

[2] 1999 डी. एन. जे. (एस. सी.) 118.

वर्तमान किराएदारों का कोई विवाद्यक नहीं जुड़ा है, उनकी किराएदारी ने बंधक के मोचन के साथ पुनरुज्जीवित किया और इसलिए राजस्थान परिसर (किराया और बेदखली नियंत्रण) अधिनियम, 1950 या नया राजस्थान किराया नियंत्रण अधिनियम, 2001 के उपबंधों के अधीन बेदखली की उचित प्रक्रिया अंगीकृत किए बिना किराएदारों को प्रश्नगत वाद दुकानों से बेकब्जा नहीं किया जा सकता है भले ही बंधक के अधीन निर्मित संपूर्ण वाद के भाग को वादियों को वापस सौंप दिया गया था ।

10. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों-वादियों के विद्वान् काउंसेलों श्री विजय जैन और श्री दर्शन जैन ने प्रबलता से यह निवेदन किया है कि वर्तमान प्रतिवादी कन्हैयालाल पुत्र श्री हीरानंद सिंधी और हसमत राय **उर्फ** हिम्मतराज पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी ने किराएदारों के रूप में वर्तमान द्वितीय अपील फाइल नहीं की है बल्कि विधि प्रतिनिधियों और मूल बंधकदारों ढल्लूमल पुत्र श्री किरतमल सिंधी और हीरानंद पुत्र श्री बासरमल सिंधी के विधिक वारिसों के रूप में फाइल की है । विद्वान् काउंसेल श्री विजय जैन ने यह भी निवेदन किया है कि मैसर्स कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी और रामदयाल तुलसीराम सिंधी के पक्ष में किराएदारी जैसा कि संपूर्ण वाद के संबंध में, जिसमें वाद दुकानें सम्मिलित हैं, मूल बंधककर्ता प्यारेलाल द्वारा सृजित तारीख 7 दिसम्बर, 1974 के प्रदर्श 20 में उल्लिखित किया गया है, वादी-सोहन लाल पुत्र श्री कल्याण विजयवर्गीय द्वारा क्रय की गई थी, तारीख 7 दिसम्बर, 1974 को उनके द्वारा सृजित बंधक के मोचन का अधिकार और इसकी किराएदारियां बंधक विलेख में सम्मिलित की गई थीं और उनकी पुनरुज्जीवन बंधक विलेख में बंधककर्ता द्वारा बंधक के मोचन के बाद वर्तमान किराएदारों के पक्ष में सृजित किए जाने के लिए नई किराएदारी पर निर्भर था । चूंकि ऐसी कोई नई किराएदारी उनके पक्ष में सृजित नहीं हुई थी और प्रतिवादी यह साबित करने में असफल रहे कि किसी तरह का किराया बंधककर्ता या वर्तमान वादी को उनके द्वारा संदत्त नहीं किया गया था, इसलिए, वे वादियों को प्रश्नगत वाद दुकानों का कब्जा सौंपने के लिए बाध्य थे जैसा कि तारीख 3 सितम्बर, 2013 के आक्षेपित निर्णय में विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने यर्थात् रूप से अभिनिर्धारित किया है । विद्वान् काउंसेल श्री विनय जैन ने यह भी निवेदन किया है कि क्योंकि विवाद्यक सं. 3 के लिए प्रमाण देने का भार प्रतिवादियों पर था और वे तारीख 18 मार्च, 2004 के विद्वान् विचारण न्यायालय के आदेश के अनुसार बंधक संपत्ति के मोचन के बाद बंधककर्ता या वर्तमान वादी द्वारा सृजित उनके पक्ष में कोई ऐसी स्वतंत्र किराएदारी

साबित नहीं कर सके । इसलिए, वर्तमान अपीलार्थी-प्रतिवादी वादियों को प्रश्नगत वाद दुकानों का कब्जा सौंपने के लिए बाध्य भी थे । विद्वान् काउंसेल श्री विनय जैन ने यह निवेदन किया है कि वर्तमान मामले में विधि का कोई सारवान् प्रश्न उद्भूत नहीं होता है और प्रतिवादियों द्वारा फाइल की गई वर्तमान द्वितीय अपील खारिज किए जाने योग्य है ।

11. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को विस्तार से सुना और अभिलेख का परिशीलन किया । इस न्यायालय की विचारणीय राय में अपीलार्थी-प्रतिवादियों द्वारा फाइल की गई वर्तमान अपील में विधि का कोई सारवान् प्रश्न उद्भूत नहीं होता है और अपर जिला न्यायाधीश सं. 1, भीलवाड़ा के विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में न्यायानुमत था कि वर्तमान अपीलार्थी-प्रतिवादी-कन्हैयालाल हीरानंद सिंधी और हसमत राय **उर्फ** हिम्मतराज पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी किराएदार नहीं थे जिनकी किराएदारी बंधक के मोचन हेतु वाद के पश्चात् पुनरुज्जीवित थी जिसकी तारीख 18 मार्च, 2004 को विद्वान् विचारण न्यायालय ने डिक्री की थी और उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए किसी साक्ष्य के अभाव में बंधक के मोचन के बाद उनके पक्ष में किराएदारी ऐसे पुनरुज्जीवन लिए थी, वे बंधक के मोचन के बाद प्रश्नगत वाद दुकानों का कब्जा रखने के हकदार नहीं थे ।

12. तारीख 1 दिसम्बर, 1974 का बंधक विलेख प्रदर्श 20 जो झगड़े की जड़ है और सुसंगत भाग जिसको विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा उद्धृत किया गया है, वर्तमान संदर्भ के लिए विस्तृत रूप में इसमें नीचे भी उद्धृत किया है और जिसमें वाद के संबंधित पक्षकारों द्वारा विधिवत रूप से हस्ताक्षर किए गए है :–

> "रहननामा जायदाद वाके भीलवाड़ा भोपालगंज आजाद चौक के पास गवाडी नामी खदीकान तादादी 20,000/- रुपए अक्षरे बीस हजार रुपए मात्र ।
>
> श्री प्यारेलाल आत्मज श्री रामलाल जी खटीक निवासी भीलवाड़ा वार्ड सं. 5
>
> राहीन..... प्रथमपक्ष
>
> श्री ढल्लूमल जी आत्मज श्री कीतरमल जी सिंधी निवासी भीलवाड़ा
>
> श्री हीरानंद जी आत्मज श्री बसरमल जी सिंधी निवासी भीलवाड़ा

वार्ड नम्बर 7 सिन्धुनगर...... द्वितीयपक्ष.....मुर्तहीन

जो कि भीलवाड़ा भोपालगंज में आजाद चौक के पास में एक हवेली तीन मंजिली खटीकान नामी दुकान स्थित है । उक्त जायदाद अन्य जायदाद के साथ मुक्त प्रथमपक्ष के दादा कजोड जी ने मुझ प्रथमपक्ष को वसीयत में दी थी कजोड जी शांत हो गए । इसलिए वसीयत के अनुसार इस जायदाद का प्रथमपक्ष मालिक होकर काबीज है और प्रथमपक्ष का इसे रहन बय करने का कानूनी पूर्ण अधिकार है ।

उपरोक्त हवेली में बाहर की तरफ पोल के दोनों ओर दो-दो दुकानें ऊपर की तरफ आजाद चौक की ओर की तथा बाहर चबुतरी स्थित है गवाडी के अन्दर चौक व दोनों ओर यानि पूर्व व पश्चिम की ओर बरामदे है तथा पूर्व में एक बड़ा कमरा व उसके पास में एक छोटा कमरा व बरामदे में एक कमरा तथा इसी प्रकार पश्चिम में एक बड़ा कमरा व उसके पास एक छोटा कमरा और बरामदे में एक कमरा तथा चौक के सामने 3 कमरे तथा गवाडी में दोनों तरफ नाले व लेट्रीन और गुसलखाने बने हुए हैं दूसरी मंजिल में दोनों ओर दुकान के ऊपर एक एक कमरा तथा बरामदा है तथा पूर्व तरफ एक बड़ा कमरा व बरामदा तथा पश्चिम तरफ एक बड़ा कमरा तथा बरामदा है और दक्षिण तरफ केवल बरामदा बना हुआ है तथा बरामदे में पूर्व तरफ एक कमरा भी बना हुआ है तथा नाले लट्रीन बनी हुई है और तीसरी मंजिल में पूर्व तरफ एक कमरा व पश्चिम तरफ एक कमरा है । इस प्रकार कुल 19 कमरे मय दुकान छोटे बड़े हैं तथा चौक नाले लेट्रीन गुसलघर पाले चबुतरीये बनी हुई है जिसके पड़ोस निम्न प्रकार हैः इस प्रकार कुल 20 कमरे हैं ।

पूर्व : सोहनलाल जी काबरा की बिल्डिंग

पश्चिम : भगवतीलाल जी मुन्दडा की बिल्डिंग

उत्तर : आम रास्ता आजाद चौक

दक्षिण : रामेश्वरलाल जी/सुरतराम जी विजयवर्गीय की दुकान जिनका भी मुझ प्रथमपक्ष प्यारेलाल ने बेचाव की ।

कि प्रथम पक्ष को व्यवसाय करने में रुपए की आवश्यकता है अतः आज दिन आप द्वितीय पक्ष श्री ढल्लूमल जी व श्री हीरानंद जी से 20,000/- रुपए अक्षरे बीस हजार रुपए नकद प्राप्त करने उपरोक्त वर्णित कुलीया हवेली समस्त हक हकुका सहित द्वितीय पक्ष के रहन

रख दी है । सो कुलीया गवाडी समस्त हक हकुका सहित द्वितीय पक्ष रहन के अधिकारों से उपभोग व उपयोग में लावे ।

उपरोक्त जायदाद में से दूसरी मंजिल के पूर्व तरफ के दो कमरे मय बरामदा व इसके ऊपर का तीसरी मंजिल का तथा दूसरी मंजिल का सामनेः दक्षिणः का बरामदा श्री राजकुमार जी खन्ना मालिक होजरी गृह उद्योग के रहन बिल कब्ज है जो 2,500/- रुपए में रहन है सौ 2,500/- रुपए अक्षरे दो हजार पांच सौ रुपए आप द्वितीय पक्ष के पास ही रखे है सो यह रुपए आप द्वितीय पक्ष श्री राजकुमार जी खन्ना को देकर खत रहन भरपाई करा कर मकानात पर आप द्वितीय पक्ष कब्जे में लेवे । व इसी तरफ दूसरी मंजिल के दक्षिण तरफ के दो कमरे व बरामदा और इसके ऊपर तीसरी मंजिल का एक कमरा श्री मूलचंद पिता साजनदास जी सिंधी निवासी भीलवाड़ा के किराए पर है उससे जायदाद खाली कराकर द्वितीय पक्ष कब्जा ले लेवे ।

उपरोक्त जायदाद जब मैं रहन के रुपए एक मुश्त दूंगा उसके तीन महीने बाद पश्चिम तरफ के मकान आप द्वितीय पक्ष को खाली कर मुझे सौंपना होगा व पूर्व तरफ की दुकानें व मकान तीनों मंजिल तक जिन पर मौजूदा किराएदार कन्हैयालाल सुगनचंद सिंधी व रामदयाल तुलसीराम सिंधी है अगर वो उस समय भी किराएदार ही रहेंगे तो मैं वापस उनसे किराए चिट्ठी आज के दर की जो उनके किराए पर है उनसे किराए चिट्ठी लिखवा दूंगा दूसरी तरफ का उजर नहीं करूंगा।

उपरोक्त जायदाद की द्वितीय पक्ष को रहने के लिए आवश्यकता होने से 20,000/- रुपए अक्षरे बीस हजार रुपए निम्न तरीके से मुझ प्रथमपक्ष को नकद देकर कब्जे में ली है ।

रहनशुदा हवेली व दुकान सारे मकानात सहित अन्य हर प्रकार के ऋण व भार से मुक्त है यदि इस जायदाद पर प्रथमपक्ष का या प्रथमपक्ष के पितामह आदि का कोई भी ऋण होगा तो उसके सफाई की जिम्मेदारी प्रथमपक्ष की होगी ।

2,500/- रुपए अक्षरे दो हजार पांच सौ रुपए तो राजकुमार जी खन्ना को देने के लिए आप द्वितीय पक्ष के पास रखे हैं ।

17,500/- रुपए अक्षरे सत्रह हजार पांच सौ रुपए आज दिन नकद प्राप्त कर लिए हैं ।

उपरोक्त तरीके से कुल 20,000/- रुपए अक्षरे बीस हजार रुपए द्वितीय पक्ष से नकद प्राप्त कर लिए हैं ।

यदि राजकुमार जी खन्ना मकानात रहन से नहीं छोड़े व खाली नहीं करे तो उस अवस्था में द्वितीय पक्ष को अदालती कार्यवाही करानी पड़े और उसमें जो भी खर्चा लगे उसको भी वक्त छुड़ाते रहन जायदाद मैं प्रथमपक्ष अदा करूंगा। यह रहननामा प्रथम पक्ष ने अपनी प्रसन्नता से लिख दिया सो सही प्रमाण रहे तारीख 7 दिसम्बर सन् 1947 ईस्वी ।

साख हस्ता./- साख हस्ता./-

साख हस्ता./- साख हस्ता./"

13. उपरोक्त आकर्षित बंधक विलेख के सुसंगत भाग से, यह स्पष्ट होता है कि बंधकदारों ने बंधकदारों के रूप में संपूर्ण संपत्ति का कब्जा लिया था और स्पष्ट रूप से घर और बंधक के मोचन के ऊपर प्रश्नगत दुकानों का कब्जा सौंपने के लिए सहमत थे और किराएदारी के बारे में यह शर्त थी कि यदि वही किराएदार अर्थात् कन्हैयालाल, सुगनचंद और रामदयाल तुलसीराम सिंधी बंधक मोचन के समय पर भी किराएदार बने रहे थे और एक नया टिप्पण उनके पक्ष में निष्पादित किया था तो वे उसी प्रकार से किराएदार बने रहेंगे । क्योंकि उक्त संपूर्ण सम्पत्ति अर्थात् हवेली बंधक थी जिसमें किराएदारों के पक्ष में वाद दुकानें ही सम्मिलित थीं और किराया वसूल नहीं किया था और बंधक के मोचन के साथ बंधकदारों को बंधककर्ता द्वारा ब्याज संदेय के विरुद्ध समायोजित किया था, उनकी किराएदारी अपने आप ही समाप्त हो गई थी और इसमें स्वयं तारीख 7 दिसम्बर, 1974 के बंधक के मोचन के समय से ही किराएदारी का समर्पण निहित था । जब तक नए किराए टिप्पण के अधीन कोई नई किराएदारी उनके निबंधनों पर उनके पक्ष में सृजित नहीं थी यदि वे केवल बंधक के मोचन के समय पर ही किराएदार बने रहेंगे तो तब उनकी किराएदारी पुनरुज्जीवित बनी रहेगी अन्यथा नहीं । स्वीकृतः, ऐसी कोई नई किराएदारी कब्जे में व्यक्तियों के पक्ष में सृजित ही नहीं हुई थी, जिसे विवाद्यक संख्या 3 के सबंध में अपने भार को निर्वाह करते हुए अपने पक्ष में सिद्ध करने में असफल रहे कि (1) वही किराएदार बंधक के मोचन के समय किराएदार बने रहेंगे और (2) कि किराएदारी ऐसे बंधक के मोचन के बाद एक नए किराए टिप्पण के निष्पान द्वारा पुनः सृजित/पुनरुज्जीवित हो गई थी । बंधक की मुद्रा के दौरान या बंधक के मोचन के बाद भी वादी या

बंधककर्ता को किराए देने का उनके संदाय का कोई ऐसा सबूत विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया । उनके द्वारा न कोई किराया रसीद, खातों की किताबें इत्यादि प्रस्तुत की गई थीं, हालांकि वे किसी भिन्न नाम और "न्यू लक्ष्मी बेकरी" के स्टाइल के अधीन व्यवसाय कर रहे थे । इसलिए, इसमें प्रत्यर्थियों-वादियों की ओर से उपस्थित हुए विद्वान् काउंसेल श्री विनय जैन की दलील में विचारणीय बल यह है कि वर्तमान अपलार्थी-प्रतिवादियों कन्हैयालाल पुत्र श्री हीरानंद सिंधी और हसमत राय **उर्फ** हिम्मतराज पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी बंधकदारों के विधिक वारिसों की हैसियत में इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुए हैं किन्तु समान किराए के रूप में नहीं और इसलिए, वे मोचन बंधक आधारों के बाद किराएदार के रूप में प्रश्नगत वाद दुकानों के कब्जा लेने का दावा नहीं कर सकते हैं । प्रतिवादियों के काउंसेल श्री आर. के. थानवी ने यह तथ्य स्वीकार किया है कि प्रश्नगत उक्त चार दुकानों के सिवाय वाद संपत्ति या हवेली के भाग का कब्जा किसी संदेय को दूर करके ही उक्त मोचन डिक्री के अधीन वादियों को सौंपना था कि किराएदारों के रूप में प्रश्नगत वाद दुकानें प्रतिधारित नहीं की गई हैं बल्कि बंधकदारों के विधिक प्रतिनिधियों के रूप में प्रतिधारित की गई हैं । बंधक के मोचन के बाद किराएदारों के रूप उनके अधिकारों को पुनरुज्जीवित या बनाए रखना तारीख 7 दिसम्बर, 1974 के बंधक, प्रदर्श 20 के अधीन यथाअनुध्यात उनके पक्ष में नए किराया टिप्पण के निष्पादन पर निर्भर था और उसके अभाव में, वे संपूर्ण वाद संपत्ति जिसमें दुकानें भी सम्मिलित हैं, बंधककर्ता अर्थात् सोहन लाल पुत्र श्री राम कल्याण विजयवर्गीय से बंधककर्ता/क्रेता को कब्जा सौंपने के लिए बाध्य हैं । अपीलार्थियों-प्रतिवादियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिए गए अधिनिर्णय, वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू नहीं होते हैं किन्तु वे तथ्यों पर, वादी-प्रत्यर्थी के मामले को विवक्षित रूप से समर्थन करते हैं ।

14. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **निर्मल चन्द्रा** बनाम **विमल चन्द** (उपर्युक्त) मामले में यह अभिनिर्धारित किया है जो इस प्रकार है :—

> "8. उपर्युक्त यथा उपदर्शित इस न्यायालय के विनिश्चयों के परिशीलन से यह साफ तौर से स्पष्ट हो जाता है कि इसमें दोनों अधिकारों का विलयन अपने आप नहीं होता है जहां बंधक किसी किराए के पक्ष में निष्पादित हो जाता है और बंधक मोचन पर, स्थगन में किराएदारी अधिकारों को रखना पुनरुज्जीवित होता है और बंधक

के मोचन के बाद ही कब्जे में बने रहने के लिए किराएदार का हक होता है । बंधक के निष्पादन पर, किराएदारी के अधिकार तभी समाप्त होते हैं यदि अभिव्यक्त रूप से या आचरण द्वारा अन्तर्निहित रूप से या किन्ही अन्य संबंधित परिस्थितियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि पक्षकारों का ऐसा इरादा था जिसका प्रश्नगत तथ्य हो जाएगा । इस प्रकार किसी सामान्य नियम के रूप में सिवाय विरोधी, बंधक और एक दूसरे के स्वतंत्र संचालन पट्टे का होना आशय में और मोचन द्वारा किसी समाप्ति के लिए बंधक के होने पर किराएदारी पुनरुज्जीवित होगा ।"

15. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **चेरियन सोसाम्मा** (उपरोक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है जो इस प्रकार है :-

"12. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने संबागनी अप्पास्वामी नायडु और अन्य **बनाम** बेहरा वेंकटरामन्या पात्रो और अन्य [1985] 1 एस. सी. आर. 651 वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चयों को सही प्रकार से निर्दिष्ट किया था जिसमें न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि इसमें किसी पट्टे या किसी बंधक का विलयन नहीं हो सकता है जहां दोनों ही सौदे एक ही संपत्ति के संबंध में होते हैं; यह सुव्यस्थित हो जाता है कि विलयन के लिए उद्भूत होने के लिए, यह आवश्यक होता है कि लघु संपदा और किसी अधिक संपदा को केवल एक बार ही एक व्यक्ति में विलय और उसी समय पर और उसी अधिकार में होनी चाहिए और संपत्ति में कोई हित शेष बचा नहीं होना चाहिए । किसी पट्टे के मामले में, संपदा उस पट्टाकर्ता में बकाया होती है जिसका प्रत्यावर्तन होता है; बंधक के मामले में, संपदा उस बंधककर्ता के मोचन के समान होती है जो बकाया है । तद्नुसार, इसमें पट्टे के विलयन और उसी संपत्ति के संबंध में बंधक नहीं हो सकता है क्योंकि उनमें से कोई भी अधिक या लघु संपदा से दूसरे की अपेक्षा नहीं है । यद्यपि किसी संपत्ति के संबंध में पट्टेदार के अधिकार और बंधकदार के अधिकार पट्टे के संबंध में प्रत्यावर्तन एक ही व्यक्ति में संयुक्त नहीं थे और बंधक के संबंध मोचन के लिए समानता संपत्ति के स्वामी में बकाया होगी और तद्नुसार, इसमें एक ही व्यक्ति में स्वामित्व के सभी अधिकार संपूर्ण संयोजित नहीं होंगे । इस स्थिति को बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा यथा परिभाषित विधि में नारायण डोगरा शेट्टी **बनाम** रामचंद्रन शिवराम

हिंग्ने प्रकाशित 65 बो. एल. आर. 449 वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा शाह मथुरादास मगालाल और कं. **बनाम** नगप्पा शंकराप्पा मलागे, (1976) 3 एस. सी. सी. 360 वाले मामले में संपूर्ण रूप से अनुमोदित कर दिया गया है । न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि पट्टेदारों के अधिकारों के अंतर्निहित समर्पण के संबध में जब भोगाधिकारी बंधक निष्पादित था तो इस पर निर्भर करेगा कि आसित किराएदार के पक्ष में बंधक विलेख के निष्पादन के समय पर पक्षकारों का आशय क्या था और उसी मामले की प्रतिवेदी परिस्थितियों की दृष्टि में बंधक सौदे के निबंधन और शर्तों से संग्रहित करना होगा । पूर्वोक्त विनिश्चय का नेमी चंद **बनाम** ओंकार लाल, जे. टी. 1991 (3) एस. सी. 106 वाले मामले में इस न्यायालय ने अवलंब लिया है ।"

16. पूर्वोक्त सुव्यवस्थित विधिक स्थिति को दृष्टिगत करते हुए, यह स्पष्ट हो जाता है और प्रथम अपीली निचले न्यायालय द्वारा यह ठीक ही पाया गया है कि वर्तमान मामले में, बंधकदारों की किराएदारी बंधक के साथ विलय की गई थी और इसमें किराएदारी का अंतर्निहित समर्पण था और उनकी किराएदारी का अधिकार निष्पादित किए जाने के लिए नए किराया टिप्पण के निष्पादन पर निर्भर बंधक के मोचन के बाद बना रहेगा जिन पर वैसे किराएदारों को दिए गए निबंधन बंधक के मोचन के समय पर उसी परिसर में निरंतर बना रहेगा, इसमें समर्पण और स्वयं बंधक के समय पर बंधकदारों द्वारा किराएदारी के अधिकारों विलय तथा बंधक के मोचन के साथ स्पष्ट तौर पर था, उनकी किराएदारी के अधिकार पुनरुज्जीवित नहीं थे और इसलिए, वे किराएदार के रूप में वाद दुकानों के कब्जे में बने रहने का किसी प्रकार से अधिकार का दावा नहीं कर सकते हैं ।

17. यह स्थिति होने के नाते, जैसा कि निचले न्यायालय ने पाया था, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय के **गोपालन कृष्णामूर्ति** बनाम **कुंजुम्मा पिल्ले सरोजनी अम्मा और अन्य**[1] में यथा अभिनिर्धारित तथ्यों के निष्कर्ष हैं, इसलिए, इस न्यायालय के राय में, इस न्यायालय द्वारा विचार करने के लिए भी कोई विधि का सारवान् प्रश्न उद्भूत नहीं होता है और इसलिए, इसमें तारीख 3 सितम्बर, 2013 के अपर जिला न्यायाधीश संख्या 1, भीलवाड़ा के विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित तथ्य के उक्त निष्कर्षों और आदेश में कोई त्रुटि या विकृति नहीं हुई है, अपीलार्थी-प्रतिवादी

---

[1] (1996) 3 एस. सी. सी. 424.

संपूर्ण वाद संपत्ति जिसमें बंधक के मोचन की उक्त डिक्री के अधीन वादियों की चार दुकानें सम्मिलित हैं का कब्जा सौंपने के लिए बाध्य हैं ।

18. तद्नुसार, अपीलार्थी-प्रतिवादी-कन्हैयालाल पुत्र श्री हीरानंद सिंधी और हसमत राय **उर्फ** हिम्मतराज पुत्र श्री ढल्लूमल सिंधी द्वारा फाइल की गई वर्तमान द्वितीय अपील खारिज की जाती है । खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है । इस आदेश की एक प्रति दोनों विद्वान् निचले न्यायालय और दोनों तरफ के संबंधित पक्षकारों को तुरन्त भेजी जाए ।

19. यह निर्देश दिया जाता है कि अपीलार्थी-प्रतिवादी आज अर्थात् तारीख 31 दिसम्बर, 2015 से पूर्व नौ मास की अवधि के भीतर प्रत्यर्थियों-वादियों को संपूर्ण वाद संपत्ति वाद दुकानों सहित शांतिपूर्ण कब्जा खाली करके सौंपेंगे । और तारीख अप्रैल, 2015 से आरंभ करके 2,000/- रुपए प्रतिमास की दर से मध्यवर्ती लाभ का संदाय करेंगे और अगले अनुवर्ती मास की 15 दिन से प्रत्येक मास या प्रत्यर्थियों-वादियों को अग्रिम में भी मध्यवर्ती लाभ का संदाय निरंतर करते रहेंगे और यदि मध्यवर्ती लाभ का संदाय करने में कोई चूक होती है तो 9 महीने की अवधि स्थित रहेगी और कब्जे की डिक्री तुरन्त निष्पादित बन जाएगी । अपीलार्थी-प्रतिवादी पास वाद दुकानों के कब्जे का भाग या किसी अन्य के पक्ष में वाद संपत्ति का कोई भाग नहीं होगा और पूर्वोक्त अवधि के दौरान उसमें किसी तीसरे पक्षकार का हित सृजित नहीं होगा और यदि ऐसा होता है तो उसे शून्य समझा जाएगा और ऐसे तीसरे पक्षकार इस डिक्री से भी बाध्य होंगे । अपीलार्थी-प्रतिवादी तीन मास के भीतर विचारण न्यायालय में पूर्वोक्त शर्तों निगमित करते हुए लिखित वचनबद्ध भेजेंगे और इस न्यायालय में शपथपत्र के साथ संबंधित एक प्रति भेजेंगे । इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि वाद परिसरों का कब्जा खाली करके शांतिपूर्ण तरीके से आज से या तारीख 31 दिसम्बर, 2015 से पूर्व 9 मास की अवधि के भीतर प्रत्यर्थियों-वादियों को नहीं सौंपते हैं या मध्यवर्ती लाभ संदत्त नहीं करते हैं जैसा कि उपरोक्त में निर्देशित किया गया है तो सामान्य क्रम में डिक्री के शीघ्र निष्पादन के अतिरिक्त, प्रत्यर्थी-वादी इस न्यायालय की अधिकारिता में अवमानना फाइल करने के हकदार भी होंगे ।

वर्तमान द्वितीय अपील खारिज की गई ।

मही./क.

अजनेश कुमार

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 12 जुलाई, 2016

न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर और न्यायमूर्ति तारलोक सिंह चौहान

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय लोक हित वाद नियम, 2010 का नियम 3 और 4] – लोक हित वाद – आपसी रंजिश और वैयक्तिक कुलबैर – किसी भी प्रकार से लोक हित अन्तर्निहित नहीं होना – तुच्छ और अप्रत्यक्ष हेतु – जहां अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि कोई वाद आपसी रंजिश और वैयक्तिक कुलबैर तथा तुच्छ और अप्रत्यक्ष हेतु से फाइल किया गया है और उसमें किसी भी प्रकार से कोई लोक हित अन्तर्निहित नहीं है तो ऐसे वाद को लोक हित के रूप में नहीं माना जा सकता है और यह प्रथमदृष्ट्या ही खारिज होने योग्य होगा ।

वर्तमान मामले में, याची ने लोक हित के रूप में इस याचिका को फाइल करने का दावा किया है जिसमें यह प्रकथन किया गया है कि "कामना देवी" मंदिर, शिमला में और आस-पास का एक बड़ा भाग वन क्षेत्र है जो प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 के स्वामित्व और कब्जे के अधीन है किन्तु, बाद में कतिपय प्रभावशाली व्यक्तियों, जिनमें प्रत्यर्थी सं. 5 सम्मिलित है, जो नगर निगम, शिमला में कार्यपालक अभियन्ता है, ने उक्त वन क्षेत्र के आस-पास और सटे हुए भूमि को क्रय कर लिया था और वह अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 5 ने बड़ी चालाकी से अपने भूखंड तक निर्माण कर लिया था । यह प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं. 5 ने भवन निर्माण के लिए अनुज्ञा प्राप्त करने के अनुक्रम में मिथ्या, बनावटी और कूटरचित दस्तावेजों को प्रस्तुत किया था और प्रत्यर्थी सं. 4 के कर्मचारियों के साथ दुरभिसंधि करके उसका अनुमोदन प्राप्त कर लिया था । यह भी प्रकथन किया गया है कि राजस्व कर्मचारियों ने प्रत्यर्थी सं. 5 को खुश करने और अवैध सहायता पहुंचाने के लिए प्रत्यर्थी सं. 5 से संबंधित भूखंड से सटे कतिपय सीढ़ियों की मौजूदगी के बारे में ततिमा (स्थल नक्शा) के बाईं और दाईं ओर पर एक नोट उल्लिखित किया था । यह भी प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी

सं. 4 ने वन विभाग की पूर्व मंजूरी या अनुमोदन के बिना "चक्कर से कामना देवी" मंदिर तक सीढ़ियों का निर्माण किया था और "कामना देवी" मंदिर, से सटे वन क्षेत्र में मोटर यान चलने योग्य नई सड़क का निर्माण करना आरम्भ कर दिया था और यह सड़क प्रत्यर्थी सं. 5 के भूखंड के दाईं ओर तक जाता था और इस प्रयोजन के लिए प्रत्यर्थी सं. 4 से संबंधित व्यक्ति, सामग्री और यानों का बिना रोक-टोक उसके द्वारा स्पष्टतः प्रयोग किया गया था । याची ने कतिपय समाचारपत्र मदों का भी अवलंब लिया जो तारीख 8 और 9 मार्च, 2010 के हिन्दी दैनिक (दैनिक भास्कर) प्रतीत होते हैं जिसमें यह रिपोर्ट किया गया था कि 80 मीटर सड़क का खाका वन क्षेत्र से प्रत्यर्थी सं. 5 के भूखंड तक निर्मित किया गया था और बड़े पैमाने पर वृक्षों को चिन्हित किया गया था और संभाव्यतः जिन्हें काट दिया गया होगा । प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 तथा प्रधान सचिव (वन) और प्रधान मुख्य संरक्षक, वन ने एक सामान्य उत्तर फाइल किया जिसमें यह प्रकथन किया गया है कि "कामना देवी" मंदिर के आस-पास के अधिकतर क्षेत्र या तो सी. पी. डब्ल्यू. डी. से संबंधित हैं या प्राइवेट स्वामियों से संबंधित हैं किन्तु उन्होंने वन भूमि से किसी वृक्ष को उखाड़ने या काटने के बारे में कोई शिकायत प्राप्त नहीं की है और उसमें मलबा फेंकने के बारे में भी कोई शिकायत प्राप्त नहीं की है । यह भी प्रकथन किया गया है कि यद्यपि, डी. पी. एफ.-सैडल से होकर एम्बुलेंस सड़क का निर्माण करने के लिए वन भूमि का संपरिवर्तन करने के लिए एक प्रस्थापना, आयुक्त, नगर निगम शिमला द्वारा प्राप्त की गई थी और उसे प्रभागीय वन अधिकारी (डी. एफ. ओ.), शिमला के पास भेज दिया गया था और तत्पश्चात्, उसे प्रत्यर्थी सं. 2 के कार्यालय में प्राप्त की गई थी किन्तु उसे कुछ मताभिव्यक्तियों पर विचार करने के लिए वापस भेज दिया गया था, जिसे डी. एफ. ओ., शिमला द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 को सम्यक् रूप से संसूचित कर दिया गया था । जहां तक प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा किए गए निर्माण का संबंध है, यह विनिर्दिष्टतः प्रकथन किया गया है कि वन भूमि से निर्माण करने के लिए विहित दूरी 5 मीटर है जबकि प्रत्यर्थी द्वारा किए गए निर्माण की माप मात्र सीमांकन पूरा होने के पश्चात् ही किया जा सकता था । अधीक्षक अभियन्ता, सी. पी. डब्ल्यू. डी. को प्रत्यर्थी सं. 3 के रूप में सूचीबद्ध किया गया है और उसने अपने पृथक् उत्तर में याचिका को सुने जाने और कायम रखने के बारे में प्रारम्भिक आक्षेप उद्‌भूत किया । गुणागुणों पर यह प्रकथन किया गया है कि सी. पी. डब्ल्यू. डी. के कब्जे के अधीन क्षेत्र, वन भूमि

नहीं है अपितु राजस्व अभिलेखों में इसे "गैर-मुमकिन अहाता" के रूप में वर्गीकृत किया गया है और इसी प्रकार, क्षेत्र जहां स्टाफ क्वार्टरों का निर्माण किया गया है वह भी वन भूमि नहीं है अपितु "घासनी सरकार" (सरकार से संबंधित चरागाह भूमि) भूमि है । उसके बाद, यह प्रकथन किया गया है कि सी. पी. डब्ल्यू. डी. जैसा और जब इस भूमि के संरक्षण के लिए अपेक्षित होता है वैसा कदम उठाता है और उसके कब्जे के अधीन भूमि पर किसी सड़क का निर्माण नहीं किया गया है । प्रत्यर्थी सं. 4 अर्थात् नगर निगम, शिमला ने अपने उत्तर में याची को सुने जाने और याचिका कायम रखने को प्रश्नगत करते हुए प्रारम्भिक आक्षेप उद्‌भूत किया इस आधार पर कि प्रत्यर्थी सं. 5 अपने भवन निर्माण का कार्य करते समय भवन विनियमों के किसी उपबंध का अतिक्रमण नहीं किया है । गुणागुणों पर, यह विनिर्दिष्टतः प्रकथन किया गया है कि याची ने भवन अतिक्रमण के मामले को काल्पनिक आधार पर कहानी बनाई है । प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा प्रस्तुत भवन योजना को समुचित सत्यापन करने और निर्माण को शासित करने वाले आज्ञापक उपबंधों का अनुपालन सुनिश्चित करने के पश्चात् तारीख 6 मार्च, 2003 को मंजूरी दी गई थी । जहां तक सीढ़ियों की मौजूदगी का संबंध है, उसे प्राइवेट व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत कई भवन नक्शों में इंगित किया गया है और निगम द्वारा अन्यथा भी इस प्रकार के रास्ते का समय-समय पर पुनर्निर्माण किया जाता रहा है और किसी समय पर किसी व्यक्ति द्वारा कोई आक्षेप उद्‌भूत नहीं किया गया है । यह भी स्पष्टीकृत किया गया है कि प्रत्यर्थी द्वारा किया गया निर्माण, कठोरतः मंजूर नक्शे के अनुसार ही किया गया है और उसने सीढ़ियों से 5.55 मीटर पीछे तक छोड़ रखा है और उसके घर की चारदीवारी और रास्ते के लिए उसके भूमि का खुला भाग चारों तरफ 3 मीटर चौड़ा है । जहां तक "चक्कर से कामना देवी" मंदिर तक रास्ते का संबंध है, यह प्रकथन किया गया है कि यह अत्यधिक लम्बे समय से मौजूद है और उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी द्वारा इसकी देखभाल की जाती है । मोटर चलने योग्य सड़क के निर्माण के बारे में अभिकथन से विनिर्दिष्टतः इनकार किया गया है और यह प्रकथन किया गया है कि उस क्षेत्र में एम्बुलेंस सड़क के निर्माण के बारे में मामला अत्यधिक लम्बे समय से निगम के विचाराधीन था क्योंकि इसके बारे में मांग न केवल वहां के अधिकतर निवासियों द्वारा अपितु उस क्षेत्र के नगर पार्षद द्वारा भी की जाती रही है । जहां तक "दैनिक भास्कर" में प्रकाशित समाचार मद का संबंध है, यह विनिर्दिष्टतः प्रकथन किया गया है कि तथ्यों

की जानकारी करने के पश्चात्, तारीख 12 मार्च, 2010 को उक्त समाचारपत्र के ब्यूरो प्रमुख को सविस्तार खंडन जारी किया गया था जिससे यह स्पष्टतः दर्शित होता है कि समाचार मद की अन्तर्वस्तुएं न केवल मिथ्या और आधारहीन हैं अपितु आम जनता की नजरों में कठोर परिश्रमी और कर्तव्यनिष्ठ अधिकारियों की साख पर धब्बा लगाने और प्रत्यर्थी-निगम के प्राधिकारियों की ख्याति को क्षति पहुंचाने के लिए भी एकमात्र उद्देश्य से प्रकाशित किया गया था । प्रत्यर्थी सं. 5 ने एक पृथक् उत्तर फाइल किया जिसमें सुने जाने के अधिकार, सक्षमता, वाद कायम रखने और सही तथा तात्विक तथ्यों इत्यादि को छिपाने से संबंधित प्रारम्भिक आक्षेप उद्भूत किए गए थे । यह विनिर्दिष्टतः प्रकथन किया गया है कि यद्यपि याचिका को लोक हित में फाइल करने का दावा किया गया है जबकि यह ऐसा नहीं है क्योंकि इसे विनोद कुमार पुत्र स्वर्गीय एस. पी. शर्मा और श्रीमती विजय शर्मा, पत्नी श्री अशोक शर्मा, दोनों प्रास्पेक्ट हिल, बोलियुगंज के निवासी हैं, की प्रेरणा पर फाइल किया गया है, जो प्रत्यर्थी सं. 5 के अन्य पड़ोसियों के अलावा हैं और प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा धारित भूमि के भूखंड के ऊपर भवन में रहते हैं । इन व्यक्तियों ने प्रत्यर्थी सं. 5 के विरुद्ध उसके द्वारा किए जाने वाले निर्माण के बारे में पूर्व में भी शिकायत दर्ज कराई थी, जिसकी जांच की गई थी और अन्ततोगत्वा प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा तारीख 14 जून, 2006 के अपने आदेश द्वारा कार्यवाहियों को बन्द कर दिया गया था । इस आदेश को पूर्वोक्त व्यक्तियों ने अपील में विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, शिमला के समक्ष आक्षेपित किया था, जिन्होंने भी इसे तारीख 5 जून, 2007 को खारिज कर दिया था । तारीख 21 नवम्बर, 2007 को याचिका विचार के लिए आई और इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 4 को यह निर्देश दिया कि वह व्यक्तिगत तौर पर घटनास्थल का निरीक्षण करे अथवा तकनीकी विशेषज्ञ को नियुक्त करे, यह पता लगाने के लिए कि क्या प्रत्यर्थी द्वारा निर्मित प्रतिरोधक दीवार इसमें के याचियों के ढांचे को कोई क्षति कारित करता है अथवा भविष्य में कोई क्षति कारित करने की संभावना है ? कार्यपालक अभियन्ता ने पक्षकारों की उपस्थिति में घटनास्थल का दौरा किया और यह रिपोर्ट की कि उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी द्वारा निर्मित प्रतिरोधक दीवार में कोई कमी नहीं है और यह भी रिपोर्ट की कि प्रतिरोधक दीवार के निर्माण के कारण इसमें के याचियों के ढांचे को कोई क्षति कारित नहीं हुई है । किन्तु, इस रिपोर्ट के बावजूद, दोनों श्री विनोद कुमार और श्रीमती विजय शर्मा ने उत्तर देने वाले

प्रत्यर्थी को तंग करना आरम्भ कर दिया था और उस व्यक्ति के माध्यम से यह याचिका संस्थित की जो उस क्षेत्र का रहने वाला भी नहीं था, यह दावा करते हुए कि यह लोक हित में फाइल किया गया है । न्यायालय द्वारा याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय जानबूझकर पक्षकारों के अभिवचनों को उस सीमा तक निर्दिष्ट करते हैं, ताकि, न्यायालय यह निष्कर्ष निकालने में समर्थ हो सके कि क्या याची का आशय वस्तुतः लोक हित है और वास्तव में, बृहत्तर लोक हित में वर्तमान याचिका फाइल की गई है । आरम्भ में ही, न्यायालय यह मत व्यक्त कर सकता है कि सुस्पष्ट कथनों से सुरक्षित तौर पर यह प्रतीत होता है कि याचिका लोक हित में फाइल की गई है, इसके बारे में कोई सामग्री, जो भी हो, याची द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं की गई है जिसके द्वारा यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि वह लोक हित का हिमायती है अथवा यह कि याचिका वस्तुतः लोक हित में फाइल की गई है । इसके अतिरिक्त, यदि सम्पूर्ण याचिका का परिशीलन किया जाए तो यह सुस्पष्ट होता है कि लोक हित के अवयवों का पूर्णतः अभाव है । याची की विश्वसनीयता भी संदेहपूर्ण हो जाती है जब वह मात्र प्रत्यर्थी सं. 5 को ही निशाना बनाते हैं और अन्य तथाकथित प्रभावशाली व्यक्तियों, जिनमें श्री विनोद कुमार और श्रीमती विजय शर्मा सम्मिलित हैं, द्वारा किए गए स्वीकृततः निर्माण को प्रश्नगत नहीं करते हैं । याची की विश्वसनीयता तब और अधिक संदेहपूर्ण हो जाती है जब वह इस बात से भी इनकार नहीं करता है कि पूर्वोक्त व्यक्ति उसे जानते हैं । वह इस बात से भी इनकार नहीं करता है कि उसके भाइयों में से एक श्री दिनेश सूद, नगर निगम, शिमला में एक सरकारी ठेकेदार के रूप में कार्य कर रहा है और वर्ष 2010 में प्रत्यर्थी सं. 1 की प्रेरणा पर निगम द्वारा उसे आबंटित कार्य को रद्द कर दिया गया था और उसके अग्रिम धन को भी समपहृत कर लिया गया था । इसलिए, प्रथमदृष्ट्या न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि याची एक डमी के रूप में स्थापित हुआ है और इसलिए, अप्रत्यक्ष हेतु के लिए लोक रिष्टि में अन्तर्वलित है और ऐसी परिस्थितियों में, न्यायालय को लोक भावना से अभिभूत व्यक्तियों के रूप में धोखेबाजों, दस्तंदाजों, हस्तक्षेप करने वाले छद्मम् व्यक्तियों पर विचार करते समय निष्ठुरतापूर्वक कार्य करना चाहिए । याची धर्म योद्धा के रूप में छद्मम् भेष धारण नहीं कर सकता है और लोक हित के नाम में कार्य करने से ही मात्र संबंधित हो सकता है, यद्यपि उसका लोक संरक्षण में कोई हित नहीं होता है । वर्तमान

याचिका अप्रत्यक्ष हेतु को प्राप्त करने के लिए फाइल की गई है । यह अत्यधिक सुस्थिर है कि मात्र इस कारण से ही कोई याचिका लोक हित वाद के रूप में नामित नहीं होती है अपितु वस्तुतः यह विवाद्यकों या कुलबैर रखने वाले व्यक्तियों को प्रोत्साहित करने के लिए छद्मावरण से अधिक कुछ नहीं है और याची वस्तुतः एक अप्रत्यक्ष मुकदमेबाज है उसे लोक हित वाद के रूप में अभिलिखित नहीं किया जा सकता है । एक मुकदमे में वास्तविक और सही लोक हित वाद अन्तर्वलित हो सकता है और इसे न्यायालय के समक्ष हेतुक कायम रखने के लिए प्रत्यक्ष और विश्वसनीय आधारों पर होना चाहिए और मात्र इसे इच्छापूर्ण विचार से निकलने वाले शूरवीर के सहासिक कार्य तक सीमित नहीं रहना चाहिए । मात्र जो व्यक्ति सद्भाविक कार्य करता है और उसका लोक हित वाद की कार्यवाहियों में पर्याप्त हित होता है मात्र उसे ही सुने जाने का अधिकार होगा और वह ही गरीब और जरूरतमंद व्यक्तियों के आंसू पोंछने के लिए उनके मूल अधिकारों का अतिक्रमण हेतु न्यायालय आ सकता है, किन्तु, कोई व्यक्ति वैयक्तिक अर्जन या प्राइवेट लाभ या किसी अन्य अप्रत्यक्ष प्रतिफल के लिए न्यायालय नहीं आ सकता है । लोक हित वाद एक हथियार है जिसका अत्यधिक सावधानीपूर्वक और परिस्थितियोंवश प्रयोग करना चाहिए और न्यायपालिका को अत्यधिक सावधानीपूर्वक यह देखना चाहिए कि लोक हित वाद के अच्छे उद्देश्य के पीछे घृणित प्राइवेट दुर्भावना के हित निहित नहीं हैं और या लोक हित की ईप्सा छिपने की जगह तो नहीं है । इसका प्रयोग नागरिकों के सामाजिक न्याय प्रदान करने के लिए विधि के कवच के रूप में प्रभावी हथियार के रूप में किया जाना चाहिए । (पैरा 17, 18, 19, 20 और 21)

इस प्रकार, यह स्पष्ट होता है कि लोक हित वाद सद्भाविक मुकदमेबाज की प्रेरणा पर ही ग्रहण किया जा सकता है और इसका धोखेबाज मुकदमेबाजों द्वारा वैयक्तिक या व्यक्तिगत शिकायत को प्रमाणित करने के लिए लोक हित वाद के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता है । उपर्युक्त मापदंडों को पूरा नहीं करने के कारण वर्तमान याचिका असफल होती है । तथ्यों का उल्लेख करते हुए, एक बार पुनः यह उल्लिखित किया जाता है कि याची स्वयं द्वारा दर्शित के अनुसार, जातोग का रहने वाला है जो "कामना देवी" मंदिर से कम से कम 5 किलोमीटर दूर है और इसलिए, हमें यह आश्चर्य है कि इस मुकदमे में याची का क्या विशेष हित है, विनिर्दिष्टतः जब विभागीय प्रत्यर्थियों के उत्तर में यह आया है कि प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा "चक्कर चौक से कामना देवी" मंदिर तक लाल बालू पत्थर से

खूबसूरत रास्ते का निर्माण करवाया गया है जो वस्तुतः, मंदिर तक जाने का एकमात्र रास्ता है और यह स्थल नक्शा से प्रदर्शित होता है । अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों से यह भी प्रकट होता है कि कोई भी वृक्ष अवैध तौर पर गिराया या काटा नहीं गया है । तथाकथित वन के किसी भाग पर कूड़ा नहीं फेंका गया है और प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा किए गए निर्माण भी कठोरतः विधि के अनुसरण में किए गए हैं क्योंकि उसने अपने घर का निर्माण करते समय आज्ञापक पिछवाड़ा छोड़ा है । यहां तक कि सी. पी. डब्ल्यू. डी. अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 3 के कब्जे में तथाकथित वन भूमि राजस्व अभिलेखों में इस प्रकार वर्गीकृत और अभिलिखित नहीं है और अभिकथित वन भूमि से होते हुए किसी सड़क का निर्माण भी नहीं किया गया है । इसी प्रकार, याची तथाकथित वन भूमि के ऊपर अतिक्रमण/अतिक्रमणों के बारे में अपने अभिकथनों को सिद्ध करने में भी असफल रहा है और तुच्छ कारणों से प्रत्यर्थी सं. 5 का नाम लेने के सिवाय, याची तथाकथित प्राइवेट बिल्डरों का नाम बताने में भी असफल रहा है जो अभिकथित वन भूमि के ऊपर या तो कूड़े फेंकते हैं या अतिक्रमण कर रखे हैं । इसके अलावा, याची इस न्यायालय के समक्ष आने के पूर्व इस याचिका में जो कुछ भी कथन किया गया है उसके बारे में, संबंधित प्राधिकारियों का ध्यान आकर्षित करते हुए कोई भी अभ्यावेदन कभी भी प्रस्तुत नहीं किया । साधारणतया, कोई याची, जो परमादेश की प्रकृति का रिट या आदेश पाने के लिए आवेदन करता है, उसे सुज्ञात व्यवहारिक नियमों का पालन करना चाहिए । साधारणतया, सर्वप्रथम संबंधित प्राधिकारियों को अपनी विधिक बाध्यताओं का निर्वहन करने के लिए कहा जाना चाहिए और यह दर्शित किया जाना चाहिए कि उन्होंने ऐसे आदेश के लिए न्यायालय के समक्ष आवेदन करने के पूर्व युक्तियुक्त अवधि के भीतर इसे करने से इनकार या उपेक्षा किया है । यह मामला एक ऐसा आदर्श उदाहरण है जहां याची प्राक्सी वार (अप्रत्यक्ष युद्ध) में सम्मिलित है और वर्तमान याचिका तुच्छ और निराधार अभिकथनों को करते हुए, अप्रत्यक्ष हेतुक के साथ फाइल की गई है वह भी श्री विनोद कुमार और श्रीमती विजय शर्मा की प्रेरणा पर, जो प्रत्यर्थी सं. 5 के पड़ोसी के अलावा कुछ नहीं है । याची ने रिष्टि के संदेहास्पद उत्पादों के लिए लोक हित वाद के आकर्षक नाम का उपयोग किया है । यह याचिका, लोक गलती या लोक क्षति को सही करने के प्रतितोष की ईप्सा करते हुए फाइल नहीं की गई है अपितु, यह वैयक्तिक कुलबैर पर आधारित है और इसे कम से कम प्राक्सी मुकदमेबाजी (अप्रत्यक्ष मुकदमेबाजी) कह सकते

हैं । यह भी उल्लिखित किया जाता है कि क्यों याची ने वस्तुतः स्वयं द्वारा अधिरोपित अभिकथनों को सिद्ध करने के लिए कोई समकालीन शासकीय अभिलेखों को अभिलेख पर रखे बिना त्वरित और अतिगामी जांच कराने की ईप्सा की है, विशिष्टया प्रत्यर्थी सं. 3 से 5 के विरुद्ध । यह याद रखना होगा कि न्यायालय की कार्यवाहियां अतिपवित्र होती हैं और इसलिए, इसे दूषित करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती है । न्यायिक व्यवस्था का बेईमान मुकदमेबाजों द्वारा दुरुपयोग और अपनी इच्छा को मनवाने के लिए मंजूर नहीं किया जा सकता है । यदि याची, वास्तव में प्राकृतिक सम्पन्ता और सघन वनों को प्रतिरक्षित और संरक्षित करना चाहता और शिमला के आस-पास तथा शिमला में स्थित पुरातत्व स्मारकों/मंदिरों में विशेष हित रखता था तो उसे ऐसी दलीलों के समर्थन में कम से कम कुछ सामग्रियों को अभिलेख पर रखा होता । न केवल यह, यदि याची इन सभी को प्रतिरक्षित करने में सही तौर पर हित रखता था तो उसे इसी प्रकार के कम से कम एक कार्य किए जाने के बारे में दावा नहीं किया होता ? इस प्रकार, पूर्वोक्त चर्चा से यह प्रकट होता है कि याची इस न्यायालय के समक्ष स्वच्छ हाथों से नहीं आया है । यह न्यायालय अपनी असाधारण अधिकारिता का प्रयोग करते हुए, एक साम्या का न्यायालय है और कोई व्यक्ति जो न्यायालय आता है, उससे न केवल यह प्रत्याशा की जाती है कि वह स्वच्छ हाथों से न्यायालय आए अपितु, उसे स्वच्छ मस्तिष्क, स्वच्छ हृदय और स्वच्छ उद्देश्य से न्यायालय आना चाहिए । वह जो साम्या की ईप्सा करता है उसे साम्या करना चाहिए । न्यायिक प्रक्रिया का न्याय समाप्त करने के लिए उत्पीड़न या दुरुपयोग या न्यायालय की प्रक्रिया के साधन के उपकरण नहीं हो सकते हैं, इस कारण से कि न्यायालय न्याय के अनुसरण में ही अधिकारिता का प्रयोग करते हैं । न्याय हित और लोक हित एक दूसरे के पूरक हैं और इसलिए, वे एक दूसरे से भिन्न नहीं हो सकते हैं और वे एक दूसरे के पर्याय होते हैं । (पैरा 24, 27, 28, 29, 30 और 31)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2016]	2016 की सिविल रिट याचिका सं. 328, विनिश्चित तारीख 1 मार्च, 2016 : **लाला राम और अन्य** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य ;**	22

[2015]	2015 की सिविल रिट याचिका सं. 2775, विनिश्चित तारीख 7 जुलाई, 2015 : **अनुराग शर्मा और एक अन्य** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** ;	22
[2015]	2015 की सिविल रिट याचिका सं. 4838, विनिश्चित तारीख 16 मार्च, 2016 : **अली मोहम्मद** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** ;	22
[2015]	2015 की सिविल रिट याचिका सं. 4240, विनिश्चित तारीख 19 अप्रैल, 2016 : **ओम प्रकाश शर्मा** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** ;	22
[2014]	2014 की सिविल रिट याचिका सं. 3131, विनिश्चित तारीख 6 मई, 2016 : **डा. जे. एस. चौहान** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** ;	22
[2014]	2014 की सिविल रिट याचिका सं. 9480, विनिश्चित तारीख 9 जनवरी, 2015 : **विजय कुमार गुप्ता** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** ;	22, 23
[2010]	2010 की सिविल रिट याचिका सं. 7249, विनिश्चित तारीख 3 दिसम्बर, 2014 : **देवेन्द्र चौहान जयता** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** ;	22
[2010]	(2010) 3 एस. सी. सी. 402 : **उत्तरांचल राज्य** बनाम **बलबन्त सिंह चौफल** ।	25

आरम्भिक (सिविल रिट) अधिकारिता : 2010 की सिविल रिट याचिका सं. 4159.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सुश्री वंदना मिश्रा पंत, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 और 6 की ओर से सर्वश्री श्रवण डोगरा,

	महाधिवक्ता के साथ अनूप रतन रूपेश वर्मा, महाधिवक्तागण और जे. के. वर्मा, उप-महाधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 4 की ओर से	श्री हमेन्दर चंदेल, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 5 की ओर से	श्री रमाकान्त शर्मा, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ सुश्री देवियानी शर्मा, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 7 से 9 की ओर से	श्री बी. सी. वर्मा, अधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति तारलोक सिंह चौहान ने दिया ।

न्या. चौहान – याची ने लोक हित के रूप में इस याचिका को फाइल करने का दावा किया है जिसमें यह प्रकथन किया गया है कि "कामना देवी" मंदिर, शिमला में और आस-पास का एक बड़ा भाग वन क्षेत्र है जो प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 के स्वामित्व और कब्जे के अधीन है किन्तु, बाद में कतिपय प्रभावशाली व्यक्तियों, जिनमें प्रत्यर्थी सं. 5 सम्मिलित है, जो नगर निगम, शिमला में कार्यपालक अभियन्ता है, ने उक्त वन क्षेत्र के आस-पास और सटे हुए भूमि को क्रय कर लिया था और वह अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 5 ने बड़ी चालाकी से अपने भूखंड तक निर्माण कर लिया था । यह प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं. 5 ने भवन निर्माण के लिए अनुज्ञा प्राप्त करने के अनुक्रम में मिथ्या, बनावटी और कूटरचित दस्तावेजों को प्रस्तुत किया था और प्रत्यर्थी सं. 4 के कर्मचारियों के साथ दुरभिसंधि करके उसका अनुमोदन प्राप्त कर लिया था । यह भी प्रकथन किया गया है कि राजस्व कर्मचारियों ने प्रत्यर्थी सं. 5 को खुश करने और अवैध सहायता पहुंचाने के लिए प्रत्यर्थी सं. 5 से संबंधित भूखंड से सटे कतिपय सीढ़ियों की मौजूदगी के बारे में ततिमा (स्थल नक्शा) के बाईं और दाईं ओर पर एक नोट उल्लिखित किया था । यह भी प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं. 4 ने वन विभाग की पूर्व मंजूरी या अनुमोदन के बिना "चक्कर से कामना देवी" मंदिर तक सीढ़ियों का निर्माण किया था और "कामना देवी" मंदिर, से सटे वन क्षेत्र में मोटर यान चलने योग्य नई सड़क का निर्माण करना आरम्भ कर दिया था और यह सड़क प्रत्यर्थी सं. 5 के भूखंड के दाईं ओर तक जाता था और इस प्रयोजन के लिए प्रत्यर्थी सं. 4 से संबंधित व्यक्ति, सामग्री और यानों का बिना रोक-टोक उसके द्वारा स्पष्टतः प्रयोग किया

गया था । याची ने कतिपय समाचारपत्र मदों का भी अवलंब लिया जो तारीख 8 और 9 मार्च, 2010 के हिन्दी दैनिक (दैनिक भास्कर) प्रतीत होते हैं जिसमें यह रिपोर्ट किया गया था कि 80 मीटर सड़क का खाका वन क्षेत्र से प्रत्यर्थी सं. 5 के भूखंड तक निर्मित किया गया था और बड़े पैमाने पर वृक्षों को चिन्हित किया गया था और संभाव्यतः जिन्हें काट दिया गया होगा । ऐसे अभिवाकों पर याची ने निम्नलिखित सारवान् अनुतोषों की ईप्सा की है :–

"(1) कि प्रत्यर्थियों को कामना देवी मंदिर के आस-पास के वन क्षेत्र/सी. पी. डब्ल्यू. डी. भूमि के ऊपर कोई सड़क/रास्ते का न तो कोई निर्माण करने न ही अनुज्ञा देने के लिए समुचित रिट, निर्देश/ आदेश जारी किया जाए ।

(2) कि प्रत्यर्थी सं. 6 को यह निर्देश दिया जाए कि वह सभी अन्य प्रत्यर्थियों के साथ ही भूमि स्वामियों, यदि कोई हो, की उपस्थिति में, हिमाचल प्रदेश बंदोबस्त मैनुअल के अनुसरण में, कठोरतः तहसीलदार (ए. सी. प्रथम श्रेणी) से निम्न नहीं, सक्षम राजस्व कर्मचारियों द्वारा कामना देवी मंदिर के आस-पास वन भूमि का समुचित सीमांकन कराए और इसके पश्चात् सभी अतिक्रमण, यदि कोई हों, को हटाते हुए और नष्ट करते हुए, वन भूमि का संरक्षण करने के लिए समुचित बाड़ा लगवाए ।

(3) कि यह समुचित निर्देश दिया जाए कि सी. पी. डब्ल्यू. डी. (प्रत्यर्थी सं. 3 के अधीन) वन भूमि की प्रकृति के वर्णन में परिवर्तन करने की गैर-मुमकिन अहाता से संरक्षित वन भूमि तक उनके कब्जे में रहने वाले एक भी वृक्ष को इस माननीय न्यायालय की पूर्व अनुज्ञा के बिना सी. पी. डब्ल्यू. डी. के अगले निर्देश तक काटने की अनुज्ञा न दी जाए ।

(4) कि प्रत्यर्थी सं. 4 और 6 के दोषपूर्ण कर्मचारियों, जिसमें प्रत्यर्थी सं. 5 सम्मिलित है, के विरुद्ध बनावटी ततिमा (प्रदर्श पी-2) को जारी, उपयोग और अनुमोदन करने के लिए कार्रवाई की जाए, जिसके आधार पर प्रत्यर्थी सं. 5 के भवन निर्माण योजना का अनुमोदन और मंजूरी दी गई थी

(5) कि प्रत्यर्थी सं. 4 को यह समुचित निर्देश जारी किया जाए कि वह प्रत्यर्थी सं. 5 के विरुद्ध पदीय हैसियत का घोर दुरुपयोग

करने के लिए विभागीय कार्रवाई आरम्भ करे जिसके द्वारा उसने स्वयं प्रत्यर्थी सं. 4 के वास्तुकार के रूप में कार्य करते हुए बनावटी ततिमा (उपाबंध पी-2) के आधार पर स्वयं भवन योजना मंजूर करवा ली थी, को प्रत्यर्थी सं. 5 की अनुज्ञा से उक्त भवन योजना को रद्द और वापस लेने का भी निर्देश दिया जाए ।

(6) कि प्रत्यर्थी सं. 5 के विरुद्ध कार्यपालक अभियन्ता, नगर निगम, शिमला के रूप में विभागीय शक्तियों का घोर दुरुपयोग करने के लिए समुचित कार्रवाई की जाए, जिसके अधीन उसने जानबूझकर वन क्षेत्र के ऊपर सड़क का निर्माण करवाया और अप्राधिकृत तौर पर कामना देवी मंदिर के समीप अपने भवन का निर्माण करवाया और अवैध तौर पर प्रत्यर्थी सं. 4 के कर्मचारियों और सामग्रियों का उपयोग किया ।"

2. प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 तथा प्रधान सचिव (वन) और प्रधान मुख्य संरक्षक, वन ने एक सामान्य उत्तर फाइल किया जिसमें यह प्रकथन किया गया है कि "कामना देवी" मंदिर के आस-पास के अधिकतर क्षेत्र या तो सी. पी. डब्ल्यू. डी. से संबंधित हैं या प्राइवेट स्वामियों से संबंधित हैं किन्तु उन्होंने वन भूमि से किसी वृक्ष को उखाड़ने या काटने के बारे में कोई शिकायत प्राप्त नहीं की है और उसमें मलबा फेंकने के बारे में भी कोई शिकायत प्राप्त नहीं की है । यह भी प्रकथन किया गया है कि यद्यपि, डी. पी. एफ.-सैडल से होकर एम्बुलेंस सड़क का निर्माण करने के लिए वन भूमि का संपरिवर्तन करने के लिए एक प्रस्थापना, आयुक्त, नगर निगम शिमला द्वारा प्राप्त की गई थी और उसे प्रभागीय वन अधिकारी (डी. एफ. ओ.), शिमला के पास भेज दिया गया था और तत्पश्चात्, उसे प्रत्यर्थी सं. 2 के कार्यालय में प्राप्त की गई थी किन्तु उसे कुछ मताभिव्यक्तियों पर विचार करने के लिए वापस भेज दिया गया था, जिसे डी. एफ. ओ., शिमला द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 को सम्यक् रूप से संसूचित कर दिया गया था ।

3. जहां तक प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा किए गए निर्माण का संबंध है, यह विनिर्दिष्टतः प्रकथन किया गया है कि वन भूमि से निर्माण करने के लिए विहित दूरी 5 मीटर है जबकि प्रत्यर्थी द्वारा किए गए निर्माण की माप मात्र सीमांकन पूरा होने के पश्चात् ही किया जा सकता था ।

4. अधीक्षक अभियन्ता, सी. पी. डब्ल्यू. डी. को प्रत्यर्थी सं. 3 के रूप में सूचीबद्ध किया गया है और उसने अपने पृथक् उत्तर में याचिका को सुने

जाने और कायम रखने के बारे में प्रारम्भिक आक्षेप उद्भूत किया । गुणागुणों पर यह प्रकथन किया गया है कि सी. पी. डब्ल्यू. डी. के कब्जे के अधीन क्षेत्र, वन भूमि नहीं है अपितु राजस्व अभिलेखों में इसे "गैर-मुमकिन अहाता" के रूप में वर्गीकृत किया गया है और इसी प्रकार, क्षेत्र जहां स्टाफ क्वार्टरों का निर्माण किया गया है वह भी वन भूमि नहीं है अपितु "घासनी सरकार" (सरकार से संबंधित चरागाह भूमि) भूमि है । उसके बाद, यह प्रकथन किया गया है कि सी. पी. डब्ल्यू. डी. जैसा और जब इस भूमि के संरक्षण के लिए अपेक्षित होता है वैसा कदम उठाता है और उसके कब्जे के अधीन भूमि पर किसी सड़क का निर्माण नहीं किया गया है ।

5. प्रत्यर्थी सं. 4 अर्थात् नगर निगम, शिमला ने अपने उत्तर में याची को सुने जाने और याचिका कायम रखने को प्रश्नगत करते हुए प्रारम्भिक आक्षेप उद्भूत किया इस आधार पर कि प्रत्यर्थी सं. 5 अपने भवन निर्माण का कार्य करते समय भवन विनियमों के किसी उपबंध का अतिक्रमण नहीं किया है । गुणागुणों पर, यह विनिर्दिष्टतः प्रकथन किया गया है कि याची ने भवन अतिक्रमण के मामले को काल्पनिक आधार पर कहानी बनाई है । प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा प्रस्तुत भवन योजना को समुचित सत्यापन करने और निर्माण को शासित करने वाले आज्ञापक उपबंधों का अनुपालन सुनिश्चित करने के पश्चात् तारीख 6 मार्च, 2003 को मंजूरी दी गई थी । जहां तक सीढ़ियों की मौजूदगी का संबंध है, उसे प्राइवेट व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत कई भवन नक्शों में इंगित किया गया है और निगम द्वारा अन्यथा भी इस प्रकार के रास्ते का समय-समय पर पुनर्निर्माण किया जाता रहा है और किसी समय पर किसी व्यक्ति द्वारा कोई आक्षेप उद्भूत नहीं किया गया है । यह भी स्पष्टीकृत किया गया है कि प्रत्यर्थी द्वारा किया गया निर्माण, कठोरतः मंजूर नक्शे के अनुसार ही किया गया है और उसने सीढ़ियों से 5.55 मीटर पीछे तक छोड़ रखा है और उसके घर की चारदीवारी और रास्ते के लिए उसके भूमि का खुला भाग चारों तरफ 3 मीटर चौड़ा है । जहां तक "चक्कर से कामना देवी" मंदिर तक रास्ते का संबंध है, यह प्रकथन किया गया है कि यह अत्यधिक लम्बे समय से मौजूद है और उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी द्वारा इसकी देखभाल की जाती है । मोटर चलने योग्य सड़क के निर्माण के बारे में अभिकथन से विनिर्दिष्टतः इनकार किया गया है और यह प्रकथन किया गया है कि उस क्षेत्र में एम्बुलेंस सड़क के निर्माण के बारे में मामला अत्यधिक लम्बे समय से निगम के विचाराधीन था क्योंकि इसके

बारे में मांग न केवल वहां के अधिकतर निवासियों द्वारा अपितु उस क्षेत्र के नगर पार्षद द्वारा भी की जाती रही है ।

6. जहां तक "दैनिक भास्कर" में प्रकाशित समाचार मद का संबंध है, यह विनिर्दिष्टतः प्रकथन किया गया है कि तथ्यों की जानकारी करने के पश्चात्, तारीख 12 मार्च, 2010 को उक्त समाचारपत्र के ब्यूरो प्रमुख को सविस्तार खंडन जारी किया गया था जिससे यह स्पष्टतः दर्शित होता है कि समाचार मद की अन्तर्वस्तुएं न केवल मिथ्या और आधारहीन हैं अपितु आम जनता की नजरों में कठोर परिश्रमी और कर्तव्यनिष्ठ अधिकारियों की साख पर धब्बा लगाने और प्रत्यर्थी-निगम के प्राधिकारियों की ख्याति को क्षति पहुंचाने के लिए भी एकमात्र उद्देश्य से प्रकाशित किया गया था ।

7. प्रत्यर्थी सं. 5 ने एक पृथक् उत्तर फाइल किया जिसमें सुने जाने के अधिकार, सक्षमता, वाद कायम रखने और सही तथा तात्विक तथ्यों इत्यादि को छिपाने से संबंधित प्रारम्भिक आक्षेप उद्भूत किए गए थे । यह विनिर्दिष्टतः प्रकथन किया गया है कि यद्यपि याचिका को लोक हित में फाइल करने का दावा किया गया है जबकि यह ऐसा नहीं है क्योंकि इसे विनोद कुमार पुत्र स्वर्गीय एस. पी. शर्मा और श्रीमती विजय शर्मा, पत्नी श्री अशोक शर्मा, दोनों प्रास्पेक्ट हिल, बोलियुगंज के निवासी हैं, की प्रेरणा पर फाइल किया गया है, जो प्रत्यर्थी सं. 5 के अन्य पड़ोसियों के अलावा हैं और प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा धारित भूमि के भूखंड के ऊपर भवन में रहते हैं । इन व्यक्तियों ने प्रत्यर्थी सं. 5 के विरुद्ध उसके द्वारा किए जाने वाले निर्माण के बारे में पूर्व में भी शिकायत दर्ज कराई थी, जिसकी जांच की गई थी और अन्ततोगत्वा प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा तारीख 14 जून, 2006 के अपने आदेश द्वारा कार्यवाहियों को बन्द कर दिया गया था । इस आदेश को पूर्वोक्त व्यक्तियों ने अपील में विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, शिमला के समक्ष आक्षेपित किया था, जिन्होंने भी इसे तारीख 5 जून, 2007 को खारिज कर दिया था । तारीख 21 नवम्बर, 2007 को याचिका विचार के लिए आई और इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 4 को यह निर्देश दिया कि वह व्यक्तिगत तौर पर घटनास्थल का निरीक्षण करे अथवा तकनीकी विशेषज्ञ को नियुक्त करे, यह पता लगाने के लिए कि क्या प्रत्यर्थी द्वारा निर्मित प्रतिरोधक दीवार इसमें के याचियों के ढांचे को कोई क्षति कारित करता है अथवा भविष्य में कोई क्षति कारित करने की संभावना है ? कार्यपालक अभियन्ता ने पक्षकारों की उपस्थिति में घटनास्थल का दौरा किया और यह रिपोर्ट किया कि उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी द्वारा निर्मित

प्रतिरोधक दीवार में कोई कमी नहीं है और यह भी रिपोर्ट की कि प्रतिरोधक दीवार के निर्माण के कारण इसमें के याचियों के ढांचे को कोई क्षति कारित नहीं हुई है । किन्तु, इस रिपोर्ट के बावजूद, दोनों श्री विनोद कुमार और श्रीमती विजय शर्मा ने उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी को तंग करना आरम्भ कर दिया था और उस व्यक्ति के माध्यम से यह याचिका संस्थित की जो उस क्षेत्र का रहने वाला भी नहीं था, यह दावा करते हुए कि यह लोक हित में फाइल किया गया है । यह विनिर्दिष्टतः अभिवाक् किया गया है कि फाइल याचिका कुछ नहीं है अपितु यह विधि का दुरुपयोग करने और पूर्व नियोजित योजना के अनुक्रम में ही फाइल की गई है । यह भी प्रकथन किया गया है कि श्रीमती विजय शर्मा ने स्वयं ही अपने भवन का निर्माण करते हुए, खसरा सं. 547 में समाविष्ट वन भूमि का अतिक्रमण कर रखा है और बंदोबस्त अधिकारी से इस खसरा सं. के 37.68 वर्ग मीटर भूमि को अपने नाम में, वन संरक्षण अधिनियम, 1980 के उपबंधों के अधिक्रमण में करवा लिया है और इस तथ्य को सभी संबंधित प्राधिकारियों के नोटिस में सम्यक् रूप से लाया गया था, किन्तु, इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ ।

8. गुणागुणों पर, यह प्रकथन किया गया है कि याचिका को प्रतिशोधात्मक तौर पर फाइल किया गया है क्योंकि उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी ने याचियों के भाइयों में से एक श्री दिनेश सूद के कार्य को रद्द कर दिया था और उसके पश्चात्, उसके द्वारा जमा अग्रिम धन को समपहृत कर लिया था जो नगर निगम, शिमला में सरकारी ठेकेदार के रूप में कार्य कर रहा था । प्रत्यर्थी सं. 5 ने विनिर्दिष्टतः इस बात से इनकार किया है कि उसने मिथ्या और बनावटी ततिमा प्रस्तुत करते हुए, अनुज्ञा प्राप्त कर ली थी और इस बात से भी इनकार किया कि अपने प्रभाव का प्रयोग करते हुए उसने अनुज्ञा प्राप्त की थी ।

9. जहां तक ततिमा के बाईं ओर रास्ते का संबंध है, यह विनिर्दिष्टतः प्रकथन किया गया है कि रास्ता "चक्कर से प्रारम्भ होकर कामना देवी" मंदिर तक जाता है और यह वस्तुतः, मंदिर तक ही जाता है । रास्ता लम्बाई में लगभग 450 मीटर कथित है और सीढ़ियां आरोही क्रम में हैं और ये पिछले कई वर्षों से मौजूद हैं । प्रत्यर्थी सं. 4 ने स्वयं ही इस सम्पूर्ण सड़क (लम्बाई-चौड़ाई) पर लाल पत्थर बिछाकर इस रास्ते की भूमि पर खड़ंजा लगवाया था जिसके लिए उसे तारीख 29 जून, 2006 को अनुज्ञा मंजूर की गई थी । इसके अलावा, वन भूमि के रास्ते पर पिछले

कई वर्षों से सम्यक् रूप से चारदीवारी लगाई गई थी और किसी भी दशा में, उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत नक्शे के पूर्व, इसे प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा अनुमोदित की गई थी ।

10. प्रधान सचिव (राजस्व) को प्रत्यर्थी सं. 6 के रूप में सूचीबद्ध किया गया है और उसने अपने उत्तर में यह प्रकथन किया है कि प्रत्यर्थी सं. 5 मौजा करेरू में स्थित खाता खतौनी सं. 278/401, खसरा सं. 1626/548 माप 442-00 वर्ग मीटर में समाविष्ट भूमि का स्वामी है और भूखंड निर्माणाधीन है । यह भी प्रकथन किया गया है कि खसरा सं. 1626/548 से सटे रास्ते/सीढ़ियों का उपयोग आम जनता द्वारा किया जाता है ।

11. याचिका लम्बित रहने के दौरान, तीन व्यक्तियों अर्थात् पवन कुमार, भीम सिंह और पद्म चन्द ने प्रत्यर्थी सं. 7 से 9 के रूप में स्वयं को अभिवाचित करवाया और याची के दावे का विरोध करते हुए, अपने-अपने पृथक् उत्तर फाइल किए । यह प्रकथन किया गया है कि इन सभी व्यक्तियों का उस स्थान पर अपने आवासीय भवन हैं जहां प्रत्यर्थी सं. 5 के भवन का निर्माण कार्य वर्ष 2006 से चल रहा है । यह भी प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा किया गया कार्य कठोरतः मंजूर योजना के अनुसरण में है । उसके बाद, यह प्रकथन किया गया है कि उस स्थान पर रहने वाले निवासी विभिन्न प्रतिवेदनों को प्रस्तुत करते हुए, लम्बे समय से एम्बुलेंस सड़क के निर्माण की मांग करते रहे हैं और उन प्रतिवेदनों को प्राप्त करने के पश्चात् विभाग ने वन संरक्षण अधिनियम, 1980 के उपबंधों के अधीन सक्षम प्राधिकारी से अनुमोदन प्राप्त करने की ईप्सा करते हुए, मामले को आगे बढ़ाया । यह भी इंगित किया गया है कि वस्तुतः, याची ने एम्बुलेंस सड़क के निर्माण कार्य को रुकवाने के लिए अपने स्तर पर बेहतर प्रयास किया किन्तु वह तीन बड़े दूर संचार टावरों को लगाने के विरुद्ध अग्रेषित नहीं हुआ जो उस स्थान पर लगाए गए थे और स्वास्थ्य के लिए खतरनाक थे जिससे यह साबित होता है कि याची के पास वर्तमान याचिका संस्थित करने के लिए वास्तव में कोई सही लोक हित नहीं था ।

12. प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 द्वारा फाइल उत्तर के प्रत्युत्तर में याची ने यह प्रकथन किया है कि प्रत्यर्थी सं. 5 ने एम्बुलेंस सड़क को हड़पने के लिए पहले ही वन भूमि का एक बड़े भाग का अतिक्रमण कर चुका है और सड़क का निर्माण उसके भूखंड तक हुआ है और अपनी पदीय शक्ति का प्रयोग करते हुए "एम्बुलेंस सड़क के निर्माण के बहाने वन भूमि से होकर आवासीय भवन तक आने के लिए सड़क निर्माण की अनुज्ञा प्राप्त करने के

लिए वन विभाग हिमाचल प्रदेश के साथ" कुछ व्यक्तियों से प्रत्यर्थी सं. 4 पर दबाव डाला । यह भी दलील दी गई है कि प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा मिथ्या और बनावटी ततिमा प्रस्तुत करते हुए, अधिक्रमण किया गया है और ऐसे अधिक्रमण की सीमा की जानकारी तभी हो सकती है जब राजस्व कर्मचारियों द्वारा वस्तुतः सीमांकन करवाया जाए ।

13. प्रत्यर्थी सं. 3 द्वारा फाइल उत्तर के प्रत्युत्तर में याची ने यह स्वीकार किया है कि वह उस क्षेत्र का निवासी नहीं है किन्तु मुकदमेबाजी में उसने किसी व्यक्तिगत हित का दावा नहीं किया है सिवाय इसके कि वह "कामना देवी" मंदिर के आस-पास के सुन्दर वन को संरक्षित करने में गंभीरतापूर्वक रुचि रखता है । यह भी प्रकथन किया गया है कि सी. पी. डब्ल्यू. डी. के कब्जे वाले वन क्षेत्र में बड़े देवदार, चीड़ और बैतूल के पेड़ों से भरे सघन वन हैं और इस प्रकार यह वन भूमि का एक भाग है । इसलिए, इसके प्रतिकूल राजस्व अभिलेख सुधार किए जाने योग्य हैं । यह भी प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा एम्बुलेंस सड़क का निर्माण सी. पी. डब्ल्यू. डी. से संबंधित भूमि पर किया गया है ।

14. प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा फाइल उत्तर के प्रत्युत्तर में याची ने अपने सुने जाने के अधिकार को न्यायानुमत करने की ईप्सा की है और यह भी प्रकथन किया है कि सीमांकन किया जाना ईप्सित है ताकि वन भूमि पर प्राइवेट बिल्डरों द्वारा किए गए अतिक्रमण की सीमा को सुनिश्चित किया जा सके । यह भी प्रकथन किया कि कुछ प्राइवेट बिल्डरों ने वन भूमि में अपने मलबे को भी फेंका है और पदीय प्रत्यर्थियों ने मूक दर्शक के रूप में साधारण कार्रवाई की क्योंकि उनमें से एक अत्यधिक कर्तव्यनिष्ठ अधिकारी ने वन भूमि से सटे अपने गृह का निर्माण भी कर लिया है । याची ने पुनः ततिमा की विश्वसनीयता को आक्षेपित किया, यह दावा करते हुए कि वह मिथ्या और बनावटी है क्योंकि वर्ष 2002 में जारी ततिमा (उपाबंध पी-2) विभिन्न हाथों और विभिन्न व्यक्तियों द्वारा की गई प्रविष्टि प्रतीत होती है जिसमें भूखंड के बाईं ओर पर 3 मीटर चौड़ी सीढ़ियों के बारे में उल्लेख किया गया है जबकि तारीख 17 मार्च, 2010 को जारी उसी भूखंड की नवीनतम ततिमा (उपाबंध पी-3) में ऐसा कुछ भी उल्लिखित नहीं किया गया है । याची ने अपनी इस दलील के समर्थन में राजस्व नक्शे की प्रतिलिपि (उपाबंध पी-8) के रूप में संलग्न की है । इसके पश्चात् यह प्रकथन किया गया है कि समुचित सीमांकन के अभाव में, अतिक्रमण की वास्तविक सीमा सुनिश्चित नहीं की जा सकती है । किन्तु, इसके बावजूद,

पदीय प्रत्यर्थी, याची द्वारा किए गए अभिकथनों और प्रिंट मीडिया में प्रसारित होने के बाद भी प्रत्यर्थी सं. 5 को निर्दोष साबित करने के लिए अत्यधिक इच्छुक थे ।

15. प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा फाइल उत्तर के प्रत्युत्तर में, यह प्रकथन किया गया है कि उक्त प्रत्यर्थी ने अपने पड़ोसियों के साथ कुछ पूर्ववर्ती मुकदमे के बारे में मुद्दे जानबूझकर उठाए हैं, जिसका वास्तव में, वर्तमान याचिका की विषयवस्तु से कुछ भी लेना-देना नहीं है । यह प्रकथन किया गया है कि यह याचिका विशेषतः "कामना देवी" मंदिर के आस-पास की वन भूमि पर अवैध और अप्राधिकृत सड़क/रास्ते के निर्माण के विरुद्ध फाइल की गई है । यह भी दावा किया गया है कि वर्तमान याचिका वस्तुतः, "कामना देवी" मंदिर से सटे वन भूमि पर प्राइवेट भूमि स्वामियों/बिल्डरों द्वारा किए गए अतिक्रमण के विरुद्ध फाइल की गई है । यह अभिकथन कि श्री विनोद कुमार और श्रीमती विजय शर्मा द्वारा याची के साथ किए गए दुर्व्यवहार के कारण दुर्भावना में प्रत्यर्थी सं. 5 के विरुद्ध याचिका फाइल की है, से इनकार किया गया है । याची ने यह कथन किया है कि उसने उसके भाई श्री दिनेश सूद के साथ ऐसा कुछ नहीं किया है क्योंकि अन्यथा भी उसके साथ उसका अत्यधिक सौहार्दपूर्ण संबंध हैं । यह भी प्रकथन किया गया है कि याची का पृथक् और स्वतंत्र कारबार है और उसके भाई के कारबार से उसका कोई संबंध नहीं है । इसके पश्चात्, याची ने मीडिया में आने वाली रिपोर्टों और प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा प्रयोग किए गए तथाकथित प्रभाव के कारण ततिमा की विश्वसनीयता के बारे में प्रकथनों को पुनः दोहराया है ।

16. प्रत्यर्थी सं. 6 द्वारा फाइल उत्तर के प्रत्युत्तर में, यह कथन किया गया है कि जब तक समुचित सीमांकन नहीं कर लिया जाता है तब तक अतिक्रमण की सीमा को सुनिश्चित नहीं किया जा सकता है ।

हमने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और मामले के अभिलेखों का परिशीलन किया ।

17. हम, जानबूझकर पक्षकारों के अभिवचनों को उस सीमा तक निर्दिष्ट करते हैं, ताकि, हम यह निष्कर्ष निकालने में समर्थ हो सकें कि क्या याची का आशय वस्तुतः लोक हित है और वास्तव में, बृहत्तर लोक हित में वर्तमान याचिका फाइल की गई है ।

18. आरम्भ में ही, हम यह मत व्यक्त कर सकते हैं कि सुस्पष्ट

कथनों से सुरक्षित तौर पर यह प्रतीत होता है कि याचिका लोक हित में फाइल की गई है, इसके बारे में कोई सामग्री, जो भी हो, याची द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं की गई है जिसके द्वारा यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि वह लोक हित का हिमायती है अथवा यह कि याचिका वस्तुतः लोक हित में फाइल की गई है । इसके अतिरिक्त, यदि सम्पूर्ण याचिका का परिशीलन किया जाए तो यह सुस्पष्ट होता है कि लोक हित के अवयवों का पूर्णतः अभाव है । याची की विश्वसनीयता भी संदेहपूर्ण हो जाती है जब वह मात्र प्रत्यर्थी सं. 5 को ही निशाना बनाते हैं और अन्य तथाकथित प्रभावशाली व्यक्तियों, जिनमें श्री विनोद कुमार और श्रीमती विजय शर्मा सम्मिलित हैं, द्वारा किए गए स्वीकृततः निर्माण को प्रश्नगत नहीं करते हैं । याची की विश्वसनीयता तब और अधिक संदेहपूर्ण हो जाती है जब वह इस बात से भी इनकार नहीं करता है कि पूर्वोक्त व्यक्ति उसे जानते हैं । वह इस बात से भी इनकार नहीं करता है कि उसके भाइयों में से एक श्री दिनेश सूद, नगर निगम, शिमला में एक सरकारी ठेकेदार के रूप में कार्य कर रहा है और वर्ष 2010 में प्रत्यर्थी सं. 1 की प्रेरणा पर निगम द्वारा उसे आबंटित कार्य को रद्द कर दिया गया था और उसके अग्रिम धन को भी समपहृत कर लिया गया था ।

19. इसलिए, प्रथमदृष्ट्या हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि याची एक डमी के रूप में स्थापित हुआ है और इसलिए, अप्रत्यक्ष हेतु के लिए लोक रिष्टि में अन्तर्वलित है और ऐसी परिस्थितियों में, न्यायालय को लोक भावना से अभिभूत व्यक्तियों के रूप में धोखेबाजों, दस्तंदाजों, हस्तक्षेप करने वाले छद्म व्यक्तियों पर विचार करते समय निष्ठुरतापूर्वक कार्य करना चाहिए । याची धर्म योद्धा के रूप में छद्म भेष धारण नहीं कर सकता है और लोक हित के नाम में कार्य करने से ही मात्र संबंधित हो सकता है, यद्यपि उसका लोक संरक्षण में कोई हित नहीं होता है । वर्तमान याचिका अप्रत्यक्ष हेतु को प्राप्त करने के लिए फाइल की गई है ।

20. यह अत्यधिक सुस्थिर है कि मात्र इस कारण से ही कोई याचिका लोक हित वाद के रूप में नामित नहीं होती है अपितु वस्तुतः यह विवाद्यकों या कुलबैर रखने वाले व्यक्तियों को प्रोत्साहित करने के लिए छद्यावरण से अधिक कुछ नहीं है और याची वस्तुतः एक अप्रत्यक्ष मुकदमेबाज है उसे लोक हित वाद के रूप में अभिलिखित नहीं किया जा सकता है । एक मुकदमे में वास्तविक और सही लोक हित वाद अन्तर्वलित हो सकता है और इसे न्यायालय के समक्ष हेतुक कायम रखने के लिए

प्रत्यक्ष और विश्वसनीय आधारों पर होना चाहिए और मात्र इसे इच्छापूर्ण विचार से निकलने वाले शूरवीर के साहसिक कार्य तक सीमित नहीं रहना चाहिए । मात्र जो व्यक्ति सद्भाविक कार्य करता है और उसका लोक हित वाद की कार्यवाहियों में पर्याप्त हित होता है मात्र उसे ही सुने जाने का अधिकार होगा और वह ही गरीब और जरूरतमंद व्यक्तियों के आंसू पोंछने के लिए उनके मूल अधिकारों का अतिक्रमण हेतु न्यायालय आ सकता है, किन्तु, कोई व्यक्ति वैयक्तिक अर्जन या प्राइवेट लाभ या किसी अन्य अप्रत्यक्ष प्रतिफल के लिए न्यायालय नहीं आ सकता है ।

21. लोक हित वाद एक हथियार है जिसका अत्यधिक सावधानीपूर्वक और परिस्थितियोंवश प्रयोग करना चाहिए और न्यायपालिका को अत्यधिक सावधानीपूर्वक यह देखना चाहिए कि लोक हित वाद के अच्छे उद्देश्य के पीछे घृणित प्राइवेट दुर्भावना के हित निहित नहीं हैं और या लोक हित की ईप्सा छिपने की जगह तो नहीं है । इसका प्रयोग नागरिकों के सामाजिक न्याय प्रदान करने के लिए विधि के कवच के रूप में प्रभावी हथियार के रूप में किया जाना चाहिए ।

22. लोक हित वाद के आकर्षक नाम को संदेहास्पद रिष्टि के उत्पादों के प्रयोग के लिए मंजूर नहीं किया जा सकता है । ऐसा माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अपने कई उद्घोषणाओं में अभिनिर्धारित किया गया है और उन्हें इस न्यायालय द्वारा कई रिट याचिकाओं में बार-बार दोहराया गया है । का शीर्षक **देवेन्द्र चौहान जयता** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[1], **विजय कुमार गुप्ता** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[2], **अनुराग शर्मा और एक अन्य** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[3], **लाला राम और अन्य** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[4], **अली मोहम्मद** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[5], **ओम प्रकाश शर्मा** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[6] तथा **डा. जे. एस. चौहान** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[7] ।

---

[1] 2010 की सिविल रिट याचिका सं. 7249, विनिश्चित तारीख 3 दिसम्बर, 2014.
[2] 2014 की सिविल रिट याचिका सं. 9480, विनिश्चित तारीख 9 जनवरी, 2015.
[3] 2015 की सिविल रिट याचिका सं. 2775, विनिश्चित तारीख 7 जुलाई, 2015.
[4] 2016 की सिविल रिट याचिका सं. 328, विनिश्चित तारीख 1 मार्च, 2016.
[5] 2015 की सिविल रिट याचिका सं. 4838, विनिश्चित तारीख 16 मार्च, 2016.
[6] 2015 की सिविल रिट याचिका सं. 4240, विनिश्चित तारीख 19 अप्रैल, 2016.
[7] 2014 की सिविल रिट याचिका सं. 3131, विनिश्चित तारीख 6 मई, 2016.

23. लोक हित वाद से संबंधित विवाद्यक पर **विजय कुमार गुप्ता** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायपीठ द्वारा विस्तारपूर्वक विचार किया गया है और इस विषय पर सम्पूर्ण विधि पर विचार करने के पश्चात् इस न्यायालय ने लोक हित वाद फाइल करने की अनुज्ञा प्रदान करने के लिए निम्नलिखित मानदंडों को अधिकथित किया है :–

"29. पूर्वोक्त विधिक प्रतिपादना से यह सुरक्षित तौर पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि न्यायालय को लोक हित में वाद तभी मंजूर करना चाहिए यदि वे निम्नलिखित निष्कर्ष निकालते हैं –

(i) कि आक्षेपित कार्रवाई, संविधान, 1950 के भाग 3 में समाविष्ट अधिकारों में से किसी का अथवा किसी अन्य विधिक अधिकार का अतिक्रमण करता है और अनुतोष जिसके लिए इसका प्रवर्तन किया जाना ईप्सित है ।

(ii) कि कार्रवाई की संभाव्य अवैधता या दुर्भावना के लिए शिकायत की गई है और उससे व्यक्तियों का ऐसा समूह प्रभावित होता है जो स्वयं अपने हित का संरक्षण करने की स्थिति में नहीं होते हैं अथवा अपनी गरीबी, अक्षमता या अज्ञानता के कारण अपने हित का संरक्षण करने की स्थिति में नहीं होते हैं ।

(iii) कि व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह लोक कर्त्तव्य के भंग से उद्भूत लोक क्षति का प्रतितोष करने के लिए अथवा सांविधानिक विधि के कुछ उपबंधों का अतिक्रमण होने से लोक हित में न्यायालय आ सकते हैं ।

(iv) ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह, जो दस्तंदाज या हस्तक्षेप करने वाले धोखेबाज नहीं हैं और अपनी वैयक्तिक प्रतिशोध या शिकायत को प्रमाणित करने के लिए दुर्भावनापूर्ण आशय से न्यायालय नहीं आते हैं ।

(v) कि लोक हित वाद की प्रक्रिया का राजनीतिज्ञों या दस्तंदाजों द्वारा राजनीतिक या असंबंधित उद्देश्यों के लिए दुरुपयोग नहीं किया जा सकता है । राज्य या लोक प्राधिकरण की ओर से किया गया प्रत्येक व्यतिक्रम ऐसे वाद में न्यायोचित

[1] 2014 की सिविल रिट याचिका सं. 9480, विनिश्चित तारीख 9 जनवरी, 2015.

नहीं होते हैं ।

(vi) कि लोक हित में वाद इस प्रकार आरम्भ किया गया था कि यदि उपचार या रोक नहीं लगाया जाता है तो इससे न्यायिक संस्था में सामान्य व्यक्ति की विश्वसनीयता और देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था भंग होती है ।

(vii) कि राज्य की कार्रवाई, कारपेट के अधीन ढकने की कोशिश करना था और तकनीकियों के आधार पर इसे त्यक्त करने का आशय था ।

(viii) लोक हित वाद या तो याचिका फाइल करके या पत्र के आधार पर या किसी प्राप्त अन्य सूचना के आधार पर आरम्भ की जा सकती है किन्तु यह समाधान होने पर कि न्यायालय के समक्ष अधिकथित सूचना ऐसी प्रकृति की थी जिसकी परीक्षा की जानी अपेक्षित थी ।

(ix) कि न्यायालय में आने वाले व्यक्ति को स्वच्छ हाथों, स्वच्छ हृदय और स्वच्छ उद्देश्यों के साथ आना चाहिए ।

(x) कि लोक हित में कोई कार्रवाई करने से पूर्व न्यायालय का यह समाधान होना चाहिए कि इस फोरम का किसी अनैतिक मुकदमेबाज, राजनीतिज्ञों, दस्तंदाजों या दुर्भावनापूर्ण उद्देश्य के साथ व्यक्तियों का समूह या अपनी वैयक्तिक शिकायत को सिद्ध करने के लिए या लोक हित में भयादोहन या असंगत विषय पर विचार करने के लिए दुरुपयोग नहीं किया जा सकता है ।"

24. इस प्रकार, यह स्पष्ट होता है कि लोक हित वाद सद्भाविक मुकदमेबाज की प्रेरणा पर ही ग्रहण किया जा सकता है और इसका धोखेबाज मुकदमेबाजों द्वारा वैयक्तिक या व्यक्तिगत शिकायत को प्रमाणित करने के लिए लोक हित वाद के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता है । उपर्युक्त मापदंडों को पूरा नहीं करने के कारण वर्तमान याचिका असफल होती है ।

25. यहां हम यह भी उल्लेख कर सकते हैं कि **उत्तरांचल राज्य** बनाम **बलवन्त सिंह चौफल**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों के अनुपालन में, यह न्यायालय तारीख 8 अप्रैल, 2010 की

[1] (2010) 3 एस. सी. सी. 402.

अधिसूचना द्वारा लोक हित वाद की शुद्धता और पवित्रता को संरक्षित करने को ध्यान में रखते हुए और तुच्छ पत्रों/याचिकाओं पर निगरानी रखते हुए भी **हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय लोक हित वाद नियम, 2010** के रूप में ज्ञात नियम को विरचित करते हैं । इसका नियम 3 और 4 इस प्रकार है :–

"3. याचिका/परिवाद/पत्र और नए कागजात कतरन जो निम्नलिखित संवर्गों के अधीन आते हैं, उन्हें लोक हित वाद के अधीन समझा जा सकता है –

(i) बंधुआ श्रमिक मामले,

(ii) उपेक्षित बच्चे,

(iii) कर्मकारों की न्यूनतम मजदूरी का असंदाय और नैमित्तिक कर्मकारों का शोषण और श्रमिक विधियों के अतिक्रमण की शिकायत (वैयक्तिक मामलों के सिवाय) ।

परन्तुक, यह कि उपर्युक्त खंड (i), (ii) और (iii) के संबंध में यदि इन मामलों में से कोई एक व्यक्ति (व्यक्तियों के समूह के विरोध में) से संबंधित संसूचना के मामले के अध्यधीन गठित करता है तो इसे लोक हित वाद के रूप में नहीं समझा जा सकता है और इसे बेहतर तरीके से वैयक्तिक रिट याचिका के रूप में समझा जा सकता है ।

(iv) स्त्री अत्याचार के विरुद्ध याचिकाएं, विशिष्टतः वधू को तंग करना, वधू को जलाना, बलात्संग, हत्या, अपहरण इत्यादि,

(v) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों से संबंधित व्यक्तियों के संबंध में, सह-ग्रामीणों द्वारा या पुलिस द्वारा ग्रामीणों को तंग या यातना देने की शिकायत से संबंधित याचिकाएं,

परन्तुक, यह कि उपर्युक्त खंड (iv) और (v) के संबंध में, यदि इन मामलों में से किसी की संसूचना एक व्यक्ति (व्यक्तियों के समूह के विरोध में) से संबंधित है तो इसे लोक हित वाद के रूप में नहीं कहा जा सकता है ।

(vi) पर्यावरणीय प्रदूषण, पारिस्थितिक संतुलन की बाधा, मादक द्रव्य, खाद्य अपमिश्रण, पुरातत्व और प्राचीन सांस्कृतिक

स्मारक, वन और जंगली जीवन, लोक सम्पत्ति का अतिक्रमण और लोक महत्व के अन्य मामलों से संबंधित याचिकाएं ।

(vii) दंगा पीड़ितों की याचिकाएं, और

(viii) कुटुम्ब पेंशन ।

स्पष्टीकरण – लोक हित वाद के रूप में, संसूचना समझे जाने का परीक्षण यह है कि क्या कोई विशिष्ट संसूचना एक व्यक्ति से संबंधित है, यदि ऐसा है तो यह व्यक्तिगत होगा और यदि ऐसा है तो यह एक व्यक्ति की सिविल रिट याचिका होगी न कि लोक हित वाद होगा, इस तथ्य के होते हुए भी कि क्या व्यक्ति ने किसी को तंग करने या अधिकारों के किसी अतिक्रमण के बारे में शिकायत की है जो व्यक्तियों के समूह के सदृश्य भी हो सकता है । तथापि, यदि संसूचना समूह से संबंधित है और उस समूह द्वारा स्वयं प्रतिरक्षा नहीं किया जा सकता है या वह समूह न्यायालय आने की स्थिति में नहीं होता है तो उस लोक हित वाद में उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप की अपेक्षा करते हुए, लोक हित वाद होगा ।

4. तथापि, कोई याचिका जिसमें वैयक्तिक और व्यक्तिगत मामले अन्तर्वलित हैं, लोक हित वाद के रूप में ग्रहण नहीं किए जाएंगे, जिनमें मकान-मालिक किराएदार के विवाद्यक, सेवा मामले के सिवाय संबंधित पेंशन और उपादान से संबंधित मामले अन्तर्वलित हैं, शीघ्र सुनवाई के लिए मामलों से संबंधित याचिकाओं के साथ-साथ विधवाओं, बच्चों और माता-पिता से संबंधित याचिकाएं ।"

26. नियम 9 के अनुसार, न्यायालय लोक हित वाद ग्रहण करने के पूर्व निम्नलिखित कारकों को ध्यान में रखेगा :–

"(i) याची की विश्वसनीयता का सत्यापन,

(ii) याचिका की अन्तर्वस्तुओं की असलियत के बारे में समाधान,

(iii) सारवान् लोक हित अन्तर्वलित है,

(iv) याचिका, जिसमें बृहत्तर लोक हित, गंभीरता और अत्यावश्यकता अन्तर्वलित है, जिसे अन्य याचिकाओं पर वरीयता दी जानी चाहिए,

(v) यह सुनिश्चित करना कि लोक हित वाद का उद्देश्य लोक अपहानि या लोक क्षति का सही प्रतितोषण करना है । यह भी सुनिश्चित करेगा कि लोक हित वाद फाइल करने के पीछे कोई वैयक्तिक लाभ, प्राइवेट या अप्रत्यक्ष हेतु नहीं है,

(vi) यह सुनिश्चित करना कि बाह्य और अन्तरस्थ हेतु के लिए दस्तंदाजों द्वारा फाइल याचिका में प्रतिकारात्मक खर्चों को अधिरोपित करते हुए, हतोत्साहित किया जाना चाहिए अथवा इसी प्रकार का असाधारण तरीका अपनाते हुए तुच्छ याचिकाओं और बाह्य प्रतिफल के लिए फाइल याचिकाओं को नियंत्रित किया जाना चाहिए ।"

याचिका, पूर्वोक्त नियमों में यथाविहित मानदंडों को भी पूरा नहीं करता है और यहां तक कि याचिका में लोक हित वाद फाइल करने का दावा किया गया है जो इस प्रकार, रजिस्ट्रीकृत होने के लिए अर्ह नहीं है और इसलिए, याचिका उपर्युक्त सभी कथित कारणों से और इसमें इसके पश्चात् भी अभिलिखित कारणों से कायम रखे जाने योग्य नहीं है ।

27. तथ्यों का उल्लेख करते हुए, एक बार पुनः यह उल्लिखित किया जाता है कि याची स्वयं द्वारा दर्शित के अनुसार, जातोग का रहने वाला है जो "कामना देवी" मंदिर से कम से कम 5 किलोमीटर दूर है और इसलिए, हमें यह आश्चर्य है कि इस मुकदमे में याची का क्या विशेष हित है, विनिर्दिष्टतः जब विभागीय प्रत्यर्थियों के उत्तर में यह आया है कि प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा "चक्कर चौक से कामना देवी" मंदिर तक लाल बालू पत्थर से खूबसूरत रास्ते का निर्माण करवाया गया है जो वस्तुतः, मंदिर तक जाने का एकमात्र रास्ता है और यह स्थल नक्शा से प्रदर्शित होता है ।

28. अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों से यह भी प्रकट होता है कि कोई भी वृक्ष अवैध तौर पर गिराया या काटा नहीं गया है । तथाकथित वन के किसी भाग पर कूड़ा नहीं फेंका गया है और प्रत्यर्थी सं. 5 द्वारा किए गए निर्माण भी कठोरतः विधि के अनुसरण में किए गए हैं क्योंकि उसने अपने घर का निर्माण करते समय आज्ञापक पिछवाड़ा छोड़ा है । यहां तक कि सी. पी. डब्ल्यू. डी. अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 3 के कब्जे में तथाकथित वन भूमि राजस्व अभिलेखों में इस प्रकार वर्गीकृत और अभिलिखित नहीं है और अभिकथित वन भूमि से होते हुए किसी सड़क का निर्माण भी नहीं किया गया है । इसी प्रकार, याची तथाकथित वन भूमि के ऊपर अतिक्रमण/अतिक्रमणों के बारे में अपने अभिकथनों को सिद्ध करने में भी असफल रहा

है और तुच्छ कारणों से प्रत्यर्थी सं. 5 का नाम लेने के सिवाय, याची तथाकथित प्राइवेट बिल्डरों का नाम बताने में भी असफल रहा है जो अभिकथित वन भूमि के ऊपर या तो कूड़े फेंकते हैं या अतिक्रमण कर रखे हैं । इसके अलावा, याची इस न्यायालय के समक्ष आने के पूर्व इस याचिका में जो कुछ भी कथन किया गया है उसके बारे में, संबंधित प्राधिकारियों का ध्यान आकर्षित करते हुए कोई भी अभ्यावेदन कभी भी प्रस्तुत नहीं किया । साधारणतया, कोई याची, जो परमादेश की प्रकृति का रिट या आदेश पाने के लिए आवेदन करता है, उसे सुज्ञात व्यवहारिक नियमों का पालन करना चाहिए । साधारणतया, सर्वप्रथम संबंधित प्राधिकारियों को अपनी विधिक बाध्यताओं का निर्वहन करने के लिए कहा जाना चाहिए और यह दर्शित किया जाना चाहिए कि उन्होंने ऐसे आदेश के लिए न्यायालय के समक्ष आवेदन करने के पूर्व युक्तियुक्त अवधि के भीतर इसे करने से इनकार या उपेक्षा किया है ।

29. यह मामला एक ऐसा आदर्श उदाहरण है जहां याची प्राक्सी वार (अप्रत्यक्ष युद्ध) में सम्मिलित है और वर्तमान याचिका तुच्छ और निराधार अभिकथनों को करते हुए, अप्रत्यक्ष हेतुक के साथ फाइल की गई है वह भी श्री विनोद कुमार और श्रीमती विजय शर्मा की प्रेरणा पर, जो प्रत्यर्थी सं. 5 के पड़ोसी के अलावा कुछ नहीं है । याची ने रिष्टि के संदेहास्पद उत्पादों के लिए लोक हित वाद के आकर्षक नाम का उपयोग किया है । यह याचिका, लोक गलती या लोक क्षति को सही करने के प्रतितोष की ईप्सा करते हुए फाइल नहीं की गई है अपितु, यह वैयक्तिक कुलबैर पर आधारित है और इसे कम से कम प्राक्सी मुकदमेबाजी (अप्रत्यक्ष मुकदमेबाजी) कह सकते हैं ।

30. यह भी उल्लिखित किया जाता है कि क्यों याची ने वस्तुतः स्वयं द्वारा अधिरोपित अभिकथनों को सिद्ध करने के लिए कोई समकालीन शासकीय अभिलेखों को अभिलेख पर रखे बिना त्वरित और अतिगामी जांच कराने की ईप्सा की है, विशिष्टतया प्रत्यर्थी सं. 3 से 5 के विरुद्ध । यह याद रखना होगा कि न्यायालय की कार्यवाहियां अतिपवित्र होती हैं और इसलिए, इसे दूषित करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती है । न्यायिक व्यवस्था का बेईमान मुकदमेबाजों द्वारा दुरुपयोग और अपनी इच्छा को मनवाने के लिए मंजूर नहीं किया जा सकता है । यदि याची, वास्तव में प्राकृतिक सम्पदा और सघन वनों को प्रतिरक्षित और संरक्षित करना चाहता और शिमला के आस-पास तथा शिमला में स्थित पुरातत्व स्मारकों/मंदिरों में

विशेष हित रखता था तो उसे ऐसी दलीलों के समर्थन में कम से कम कुछ सामग्रियों को अभिलेख पर रखा होता । न केवल यह, यदि याची इन सभी को प्रतिरक्षित करने में सही तौर पर हित रखता था तो उसे इसी प्रकार के कम से कम एक कार्य किए जाने के बारे में दावा नहीं किया होता ?

31. इस प्रकार, पूर्वोक्त चर्चा से यह प्रकट होता है कि याची इस न्यायालय के समक्ष स्वच्छ हाथों से नहीं आया है । यह न्यायालय अपनी असाधारण अधिकारिता का प्रयोग करते हुए, एक साम्या का न्यायालय है और कोई व्यक्ति जो न्यायालय आता है, उससे न केवल यह प्रत्याशा की जाती है कि वह स्वच्छ हाथों से न्यायालय आए अपितु, उसे स्वच्छ मस्तिष्क, स्वच्छ हृदय और स्वच्छ उद्देश्य से न्यायालय आना चाहिए । वह जो साम्या की ईप्सा करता है उसे साम्या करना चाहिए । न्यायिक प्रक्रिया का न्याय समाप्त करने के लिए उत्पीड़न या दुरुपयोग या न्यायालय की प्रक्रिया के साधन के उपकरण नहीं हो सकते हैं, इस कारण से कि न्यायालय न्याय के अनुसरण में ही अधिकारिता का प्रयोग करते हैं । न्याय हित और लोक हित एक दूसरे के पूरक हैं और इसलिए, वे एक दूसरे से भिन्न नहीं हो सकते हैं और वे एक दूसरे के पर्याय होते हैं ।

32. पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस याचिका में न केवल कोई गुणागुण है अपितु यह रिष्टिकारक भी है और इसके परिणामस्वरूप, न्यायालय का बहुमूल्य समय बरबाद हुआ है । यहां तक कि प्रत्यर्थियों को अन्यथा अनदेखी करने योग्य मुकदमे में अनावश्यक रूप से घसीटा गया है ।

33. तद्नुसार, यह याचिका तीन माह की अवधि के भीतर प्रत्यर्थी सं. 5 को याची द्वारा 50,000/- रुपए संदत्त किए जाने के खर्चे के साथ खारिज की जाती है जिसके संदाय में असफल रहने पर प्रत्यर्थी सं. 5 को इस आदेश के निष्पादन की ईप्सा करते हुए, खर्चों को वसूल करने की स्वतंत्रता होगी । पूर्वोक्त निबंधनों में, याचिका के साथ ही आवेदन, यदि कोई लम्बित हैं, को निपटाया जाता है ।

याचिका खारिज की गई ।

क.

राम करन और अन्य

बनाम

श्रीमती कौशल्या देवी और अन्य

तारीख 5 मई, 2017

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 – द्वितीय अपील – राजस्व प्राधिकारियों के साथ दुरभिसंधि करके अपने नाम में राजस्व प्रविष्टि कराना – नाम प्रविष्ट कराने का कोई आधार नहीं होना – किसी भी दस्तावेजी या मौखिक साक्ष्यों द्वारा इसकी पुष्टि नहीं होना – ऐसी दशा में, इस प्रकार की नाम प्रविष्टि अवैध और गलत अभिनिर्धारित होना – यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि वाद भूमि की राजस्व प्रविष्टियों में किसी व्यक्ति के नाम की गलत तौर पर प्रविष्टि हुई है अर्थात् राजस्व प्राधिकारियों के साथ दुरभिसंधि करके और उनका कोई आधार भी नहीं है, न ही इनका किसी मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य से समर्थन होता है, तो ऐसी दशा में, इस प्रकार की गई प्रविष्टि अवैध और गलत अभिनिर्धारित कर दी जाएगी ।

वर्तमान मामले में, वादियों-अपीलार्थियों ने ग्राम बेह कनैतन, परगना धरमपुर पहाड़, तहसील नालागढ़, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में स्थित खेवट/खतौनी सं. 23 मीन/24, खसरा सं. 14(7-9), 18(0-5), 37(4-15), 60(2-9), 81(0-11), 85(0-3), 89(0-10), 123(0-1), 313(0-2), 221(0-4), 223(0-7), 224(0-7), कीटा 12, माप 17 बीघा, 3 बिस्वा भूमि (जिसे इसमें इसके पश्चात् "वाद भूमि" कहा गया है) में समाविष्ट वाद भूमि के ऊपर वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादी के कब्जे में किसी भी तरीके से हस्तक्षेप करने से प्रतिवादियों को अवरुद्ध करते हुए, स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए वाद फाइल किया था । वादियों द्वारा यह प्रकथन किया गया है कि प्रतिवादी पिछले 20 वर्षों से अधिक समय से ग्राम भग्गुअल में रह रहे हैं और वर्ष 1995-96 के लिए जमाबंदी के अनुसार, वादी, प्रोफार्मा प्रतिवादियों के साथ वाद भूमि के कब्जे में अभिलिखित हैं जिसमें वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादियों का कब्जा प्रतिवादी की जानकारी में पूर्ण और स्वच्छंद है । वादियों द्वारा यह भी प्रकथन किया

गया है कि वाद भूमि, वर्ष 1931-32 अर्थात् वादियों और उनके हक पूर्वाधिकारियों के जीवनकाल के दौरान से ही उनके कब्जे सहित जोत में हैं । वादियों का दावा यह है कि आरम्भतः वाद भूमि का बंधक किया गया था और नामांतरण सं. 30, तारीख 29 सितम्बर, 2005 बी. के. प्रविष्ट थी और बंधक के तथ्य को तहसीलदार, नालागढ़ द्वारा नामंजूर कर दिया गया था । तथापि, वादियों का कब्जा तारीख 20 सितम्बर, 2005 बी. के. तक निरन्तर बना रहा और चूंकि उसके बाद वादियों ने अनन्य रूप से प्रतिवादी या उसके हक पूर्वाधिकारी की जानकारी में अनन्य रूप से वाद भूमि को अधिभोग में ले लिया गया था और तब से उसके बाद उनका कब्जा शांतिपूर्ण और निरन्तर बना रहा । वादियों का दावा यह है कि प्रतिवादी या उसके हक-पूर्वाधिकारी ने वादियों के कब्जे पर कभी भी कोई आक्षेप नहीं किया अथवा यहां तक कि वाद भूमि पर उनके पिता के जीवनकाल के दौरान भी कोई आक्षेप नहीं किया । वादियों द्वारा यह भी अभिकथन किया गया है कि प्रथम बंदोबस्त में वादियों के हक-पूर्वाधिकारी श्री मस्त राम वाद भूमि के कब्जे में थे और रुलिया इसका प्रथम स्वामी था । वादियों द्वारा यह प्रकथन किया गया है कि प्रतिवादी ने अपने कृत्य और आचरण द्वारा वाद भूमि के कब्जे में स्वामियों के रूप में वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादियों को स्वीकार कर लिया था और वह स्वयं या रुलिया के माध्यम से वर्ष 1931 तक वाद भूमि के आधिपत्य में कभी भी आक्षेप नहीं किया । वादियों द्वारा यह भी प्रकथन किया गया है कि प्रतिवादी, वाद भूमि पर वादियों के कब्जे में हस्तक्षेप करने से विबंधित है । वादियों का दावा यह भी है कि प्रतिवादी ने वादियों को राजस्व प्राधिकारियों के अवैध आदेश के बहाने से वाद भूमि से बेकब्जा करने की धमकी दी है । इस पृष्ठभूमि में, वादियों ने वाद भूमि पर उनके कब्जे में हस्तक्षेप करने से प्रतिवादियों को अवरुद्ध करते हुए, स्थायी व्यादेश के लिए वाद फाइल किया है । प्रतिवादी ने लिखित कथन फाइल करते हुए, वाद कायम रखने, सुने जाने और अधिकारिता के आधार पर वादियों के दावे का खंडन किया । गुणागुणों पर, प्रतिवादी द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि वह वाद भूमि कब्जे सहित स्वामी है और वादियों तथा प्रोफार्मा प्रतिवादी द्वारा वाद भूमि को कभी भी जोता नहीं गया और राजस्व अभिलेखों में उनके नामों की प्रविष्टियां गलत और अवैध हैं । प्रतिवादी द्वारा यह अभिकथित किया गया है कि भूमि सुधार अधिकारी ने प्रतिवादी की प्रविष्टि को सही किया है जिसके आदेश को जिला कलक्टर, सोलन द्वारा भी कायम रखा गया है और वह अंतिम हो गया है । प्रतिवादी

द्वारा यह भी अभिकथित किया गया है कि न्यायालय के समक्ष सिविल वाद कायम रखे जाने योग्य नहीं है । पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में प्रतिवादी ने वादियों द्वारा फाइल वाद को खारिज करने की ईप्सा की है । प्रत्युत्तर के माध्यम से, वादियों ने लिखित कथन में किए गए अभिकथनों से इनकार करते हुए, वादपत्र में किए गए प्रकथनों की पुनः पुष्टि की है और लिखित कथन में किए गए प्रतिकूल प्रकथनों का खंडन किया है । तत्पश्चात्, विद्वान् विचारण न्यायालय ने क्रमशः पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत अभिवचनों के साथ ही साक्ष्यों के आधार पर, विधि के अनुसरण के सिवाय वाद भूमि से वादियों को बेकब्जा करने से प्रतिवादी को अवरुद्ध करते हुए, स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए वादियों का वाद डिक्री कर दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित पूर्वोक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित और असंतुष्ट होकर प्रतिवादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, सोलन, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश के न्यायालय में एक अपील फाइल की, जिन्होंने क्रमशः पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत अभिवचनों के साथ ही साक्ष्यों को उल्लिखित करते हुए, अपील मंजूर कर ली और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया । पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, अपीलार्थियों-वादियों ने विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, सोलन, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश द्वारा पारित पूर्वोक्त निर्णय और डिक्री को चुनौती देते हुए इसे अभिखंडित और अपास्त करने की प्रार्थना के साथ वर्तमान नियमित द्वितीय अपील फाइल की जिसके द्वारा वादियों का वाद खारिज कर दिया गया था । न्यायालय द्वारा द्वितीय अपील को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में, वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादी को जमाबंदी में प्रविष्टियों के आधार पर वाद भूमि के कब्जे में होना अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है, विनिर्दिष्टतः, तब जब अपीलार्थी-वादी अभिलेख पर यह साबित करने में असफल रहे हैं कि किस आधार पर श्री कांशी राम और भगतू, वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादी के हित-पूर्वाधिकारी के नाम वर्ष 1931-32 में राजस्व अभिलेख में अभिलिखित हुआ था । जब वादियों का यह स्वीकृत पक्षकथन है कि प्रतिवादी, वाद भूमि के स्वामी हैं तब यह तत्कालीन पदधारी पर निर्भर करता था कि वह राजस्व प्राधिकारियों द्वारा पारित इस प्रभाव का आदेश या निर्देश, यदि कोई हों, कि श्री कांशी राम और भगतू, उनके हित-पूर्वाधिकारियों के नामों को वाद भूमि के कब्जे में प्रविष्ट करने का आदेश देता । वादियों और उनके हित-

पूर्वाधिकारियों के नाम वर्ष 1935-36 से वर्ष 1991-92 के लिए जमाबंदी की प्रतियों प्रदर्श पी 4 से प्रदर्श पी 14 में वाद भूमि के कब्जे में अभिलिखित किए गए हैं । स्वीकृततः, वादियों ने ऐसा कोई रपट रोजनामचा प्रस्तुत नहीं किया है जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि राजस्व प्राधिकारियों द्वारा राजस्व प्रविष्टियों में परिवर्तन करने के लिए कुछ आदेश पारित किए गए थे जो स्वीकृततः, वर्ष 1935-36 के पूर्व के थे, जिनमें प्रतिवादी-वादी के हित-पूर्वाधिकारी के नाम थे । इसी प्रकार, वादियों-अपीलार्थियों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत अभिवचनों में ऐसा कुछ नहीं है जिनसे इस तथ्य के बारे में सुझाव मिलता है कि वे किराएदारों के रूप में वाद भूमि के कब्जे में थे और इस प्रकार, विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने सही ही यह निष्कर्ष निकाला है कि वाद भूमि में उनके नामों की अभिलिखित प्रविष्टियां गलत और अवैध हैं और बिना किसी आधार के हैं । इसी प्रकार, अपीलार्थियों-वादियों का यह स्वीकृत पक्षकथन है कि उन्होंने नामांतरण को अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया है जिसे बंधन के बारे में प्रविष्ट किया गया था और इसके अतिरिक्त ऐसे बंधक को स्वीकृत वादियों के पक्ष में अनुप्रमाणित नहीं किया गया था, इसके बजाय, इसे राजस्व प्राधिकारियों द्वारा रद्द कर दिया गया था और इस प्रकार, विद्वान् निचले न्यायालय ने सही ही यह निष्कर्ष निकाला है कि वादी, ऐसे नामांतरण के आधार पर यह प्रत्याख्यान नहीं कर सकते हैं कि उनका कब्जा राजस्व अभिलेखों में अभिलिखित किया गया है । चूंकि, बंधक का नामांतरण, तहसीलदार द्वारा अनुप्रमाणित नहीं हुआ था, बजाय इसके ऐसी प्रविष्टि, यदि कोई हो, को नामंजूर करने का आदेश दिया गया था, जिसके आधार पर राजस्व प्राधिकारी द्वारा तारीख 26 अक्तूबर, 1996 के आदेश प्रदर्श डी-1 में इसे सही ही अवैध अभिनिर्धारित किया गया था । उपर्युक्त के अलावा, वादियों द्वारा अभिलेख पर ऐसा कोई मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है जिसका इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करने के लिए परिशीलन किया जा सके कि वे वाद भूमि के कब्जे में थे, इसके बजाय, वादियों के स्वयं साक्षियों द्वारा किए गए कथनों से यह सुझाव मिलता है कि वाद भूमि घटनास्थल पर खाली पड़ा था क्योंकि प्रतिवादी, तहसील कसौली के ग्राम भग्गुअल में स्थानांतरित हो गया था । उपर्युक्त के अलावा, वाद भूमि की प्रकृति, बंजर कादिम, गैर-मुमकिन बिर्द, घासनी के रूप में अभिलिखित है, जैसा कि वर्ष 1991-92, 1995-96 और वर्ष 1996-97 के लिए जमाबंदियों की प्रतियों अर्थात् प्रदर्श पी 14 से प्रदर्श पी 17 से प्रदर्शित होता है । पूर्वोक्त

प्रविष्टियां, आरम्भ से ही निरन्तर दर्ज थीं, इसलिए, यह प्रकट होता है कि वाद भूमि वादियों के जोत कब्जे में नहीं थीं । इसी प्रकार, वादियों द्वारा अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है, जिससे इस तथ्य के बारे में सुझाव मिलता है कि उन्होंने वाद भूमि की प्रकृति में परिवर्तन किया था या कोई अन्य प्रत्यक्ष कार्य किया था, अतएव, विद्वान् निचले न्यायालय ने यह सही ही निष्कर्ष निकाला है कि वादियों को बंजर कादिम और गैर-मुमकिन भूमि के कब्जे में होना भी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है और ऐसी भूमि का कब्जा, जो बंजर है और बिना जोत के है, हक धारक के अधिभोग में होना चाहिए । उपर्युक्त के अलावा, भूमि सुधार अधिकारी द्वारा पारित आदेश के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादी ने किराया संदाय पर गैर-अधिभोगी किराएदार के रूप में स्वयं को वाद भूमि के कब्जे में होने का दावा किया है और यह भी दावा किया है कि प्रत्यर्थी-प्रतिवादी के पक्ष में प्रविष्टि गलत और अवैध थी । वादियों ने भूमि सुधार अधिकारी के समक्ष यह दावा किया था कि वे वाद भूमि के कब्जे में प्रविष्ट हुए थे जो वर्तमान वाद में लिए गए आधार के पूर्णतया प्रतिकूल है जिसमें उन्होंने वर्ष 1931-32 के लिए जमाबंदी के आधार पर स्वयं को वाद भूमि के कब्जे में होने का दावा किया था । इसके अतिरिक्त, अभिवचनों से इस तथ्य के बारे में ऐसा कोई सुझाव नहीं मिलता है कि वे गैर-अधिभोगी किराएदार के रूप में प्रविष्ट हुए थे । इसी प्रकार, वर्ष 1926 में वाद भूमि में किराएदार के रूप में उनके प्रविष्ट होने के बारे में कोई उल्लेख, यदि कोई हो, नहीं किया गया है । अतएव, यह न्यायालय अभिवचनों के साथ ही विद्वान् राजस्व प्राधिकारियों द्वारा पारित आदेश का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात् विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री रमाकांत शर्मा द्वारा दिए गए इन तर्कों में सारवान् बल पाता है कि विद्वान् निचले विचारण न्यायालय के साथ ही राजस्व प्राधिकारियों के समक्ष अपीलार्थियों-वादियों द्वारा लिए गए आधार में पूर्ण भिन्नता है और इस प्रकार, विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय में कोई अवैधता और कमी नहीं है । विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय के साथ ही निचले न्यायालय के अभिलेखों का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात् इस न्यायालय को विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय में कोई अवैधता और कमी दिखाई नहीं देती है जो प्रकटतः क्रमशः पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों के सही परिशीलन पर आधारित है । अपीलार्थी-वादी, वाद भूमि में अपने कब्जे को

साबित करने में समर्थ नहीं हुए हैं, बजाय, इसके प्रत्यर्थी-प्रतिवादी द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत विश्वसनीय साक्ष्य से इस तथ्य के बारे में सुझाव मिलता है कि वादियों-अपीलार्थियों के हित-पूर्वाधिकारी का नाम राजस्व अभिलेख के कब्जे के कालम में गलत तौर पर अभिलिखित हो गया था जिसमें प्रत्यर्थी-प्रतिवादी द्वारा फाइल आवेदन की कार्यवाहियों में राजस्व प्राधिकारियों द्वारा विधि के अनुसरण में सुधार कर दिया गया था । इसके अतिरिक्त, पुनरावृत्ति को रोकते हुए यह कथन किया जा सकता है कि प्रत्यर्थी-प्रतिवादी के स्वामित्व और कब्जे के बारे में भूमि सुधार अधिकारी द्वारा निकाले गए निष्कर्ष अंतिम हो गए हैं और इस प्रकार, इस पर निचले न्यायालय द्वारा वर्तमान कार्यवाहियों में विचार नहीं किया जा सकता था । तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्न का उत्तर दिया जाता है । (पैरा 16, 17, 18 और 19)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2005 की नियमित द्वितीय अपील सं. 172.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री संजीव कुथियाल, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री रमाकांत शर्मा, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ सुश्री देवियानी शर्मा, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा – सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन फाइल यह नियमित द्वितीय अपील, विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, सोलन, जिला सोलन द्वारा 2000 की सिविल अपील सं. 61-एन. एल./13 में पारित तारीख 11 जनवरी, 2005 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध निदेशित है जिसके द्वारा उन्होंने विद्वान् उप-न्यायाधीश, नालागढ़, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश द्वारा पारित तारीख 29 अगस्त, 2000 के उस निर्णय और डिक्री को उलट दिया था, जिसमें वादियों द्वारा स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के वाद को डिक्री कर दिया गया था ।

2. अभिलेखों से प्रकट होने वाले संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि वादियों-अपीलार्थियों (जिन्हें इसमें इसके पश्चात् "वादियों" कहा गया है) ने ग्राम बेह कनैतन, परगना धरमपुर पहाड़, तहसील नालागढ़, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में स्थित खेवट/खतौनी सं. 23 मीन/24, खसरा सं. 14(7-9), 18(0-5), 37(4-15), 60(2-9), 81(0-11), 85(0-3), 89(0-10), 123(0-1),

313(0-2), 221(0-4), 223(0-7), 224(0-7), कीटा 12, माप 17 बीघा, 3 बिस्वा भूमि (जिसे इसमें इसके पश्चात् "वाद भूमि" कहा गया है) में समाविष्ट वाद भूमि के ऊपर वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादी के कब्जे में किसी भी तरीके से हस्तक्षेप करने से प्रतिवादियों को अवरुद्ध करते हुए, स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए वाद फाइल किया था । वादियों द्वारा यह प्रकथन किया गया है कि प्रतिवादी पिछले 20 वर्षों से अधिक समय से ग्राम भग्गूअल में रह रहे हैं और वर्ष 1995-96 के लिए जमाबंदी के अनुसार, वादी, प्रोफार्मा प्रतिवादियों के साथ वाद भूमि के कब्जे में अभिलिखित हैं जिसमें वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादियों का कब्जा प्रतिवादी की जानकारी में पूर्ण और स्वच्छंद है । वादियों द्वारा यह भी प्रकथन किया गया है कि वाद भूमि, वर्ष 1931-32 अर्थात् वादियों और उनके हक पूर्वाधिकारियों के जीवनकाल के दौरान से ही उनके कब्जे सहित जोत में हैं । वादियों का दावा यह है कि आरम्भतः वाद भूमि का बंधक किया गया था और नामांतरण सं. 30, तारीख 29 सितम्बर, 2005 बी. के. प्रविष्ट थी और बंधक के तथ्य को तहसीलदार, नालागढ़ द्वारा नामंजूर कर दिया गया था । तथापि, वादियों का कब्जा तारीख 20 सितम्बर, 2005 बी. के. तक निरन्तर बना रहा और चूंकि उसके बाद वादियों ने अनन्य रूप से प्रतिवादी या उसके हक पूर्वाधिकारी की जानकारी में अनन्य रूप से वाद भूमि को अधिभोग में ले लिया गया था और तब से उसके बाद उनका कब्जा शांतिपूर्ण और निरन्तर बना रहा । वादियों का दावा यह है कि प्रतिवादी या उसके हक-पूर्वाधिकारी ने वादियों के कब्जे पर कभी भी कोई आक्षेप नहीं किया अथवा यहां तक कि वाद भूमि पर उनके पिता के जीवनकाल के दौरान भी कोई आक्षेप नहीं किया । वादियों द्वारा यह भी अभिकथन किया गया है कि प्रथम बंदोबस्त में वादियों के हक-पूर्वाधिकारी श्री मस्त राम वाद भूमि के कब्जे में थे और रुलिया इसका प्रथम स्वामी था । वादियों द्वारा यह प्रकथन किया गया है कि प्रतिवादी ने अपने कृत्य और आचरण द्वारा वाद भूमि के कब्जे में स्वामियों के रूप में वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादियों को स्वीकार कर लिया था और वह स्वयं या रुलिया के माध्यम से वर्ष 1931 तक वाद भूमि के आधिपत्य में कभी भी आक्षेप नहीं किया । वादियों द्वारा यह भी प्रकथन किया गया है कि प्रतिवादी, वाद भूमि पर वादियों के कब्जे में हस्तक्षेप करने से विबंधित है । वादियों का दावा यह भी है कि प्रतिवादी ने वादियों को राजस्व प्राधिकारियों के अवैध आदेश के बहाने से वाद भूमि से बेकब्जा करने की धमकी दी है । इस पृष्ठभूमि में, वादियों ने वाद भूमि

पर उनके कब्जे में हस्तक्षेप करने से प्रतिवादियों को अवरुद्ध करते हुए, स्थायी व्यादेश के लिए वाद फाइल किया है ।

3. प्रतिवादी ने लिखित कथन फाइल करते हुए, वाद कायम रखने, सुने जाने और अधिकारिता के आधार पर वादियों के दावे का खंडन किया । गुणागुणों पर, प्रतिवादी द्वारा यह अभिकथन किया गया है कि वह वाद भूमि के कब्जे सहित स्वामी है और वादियों तथा प्रोफार्मा प्रतिवादी द्वारा वाद भूमि को कभी भी जोता नहीं गया और राजस्व अभिलेखों में उनके नामों की प्रविष्टियां गलत और अवैध हैं । प्रतिवादी द्वारा यह अभिकथित किया गया है कि भूमि सुधार अधिकारी ने प्रतिवादी की प्रविष्टि को सही किया है जिसके आदेश को जिला कलक्टर, सोलन द्वारा भी कायम रखा गया है और वह अंतिम हो गया है । प्रतिवादी द्वारा यह भी अभिकथित किया गया है कि न्यायालय के समक्ष सिविल वाद कायम रखे जाने योग्य नहीं है । पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में प्रतिवादी ने वादियों द्वारा फाइल वाद को खारिज करने की ईप्सा की है ।

4. प्रत्युत्तर के माध्यम से, वादियों ने लिखित कथन में किए गए अभिकथनों से इनकार करते हुए, वादपत्र में किए गए प्रकथनों की पुनः पुष्टि की है और लिखित कथन में किए गए प्रतिकूल प्रकथनों का खंडन किया है ।

5. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर, विद्वान् विचारण न्यायालय ने अवधारण के लिए निम्नलिखित विवाद्यकों को विरचित किया था :–

"(1) क्या वादी व्यादेश का अनुतोष पाने के हकदार हैं ?

(2) क्या यह वाद कायम रखे जाने योग्य है ?

(3) क्या वादियों के पास कोई वाद-हेतुक नहीं है ?

(4) क्या वादियों को वर्तमान वाद फाइल करने के लिए सुने जाने का अधिकार नहीं है ?

(5) क्या वादियों के पक्ष में राजस्व अभिलेखों में अभिलिखित प्रविष्टियां गलत, अवैध, अकृत और शून्य हैं, जैसा कि अभिकथित है ?

(6) अनुतोष ।"

6. तत्पश्चात्, विद्वान् विचारण न्यायालय ने क्रमशः पक्षकारों द्वारा

अभिलेख पर प्रस्तुत अभिवचनों के साथ ही साक्ष्यों के आधार पर, विधि के अनुसरण के सिवाय वाद भूमि से वादियों को बेकब्जा करने से प्रतिवादी को अवरुद्ध करते हुए, स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए वादियों का वाद डिक्री कर दिया ।

7. विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित पूर्वोक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित और असंतुष्ट होकर प्रतिवादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, सोलन, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश के न्यायालय में एक अपील फाइल की, जिन्होंने क्रमशः पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत अभिवचनों के साथ ही साक्ष्यों को उल्लिखित करते हुए, अपील मंजूर कर ली और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को अपास्त कर दिया ।

8. पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, अपीलार्थियों-वादियों ने विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश, सोलन, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश द्वारा पारित पूर्वोक्त निर्णय और डिक्री को चुनौती देते हुए इसे अभिखंडित और अपास्त करने की प्रार्थना के साथ वर्तमान नियमित द्वितीय अपील फाइल की जिसके द्वारा वादियों का वाद खारिज कर दिया गया था ।

9. इस न्यायालय ने तारीख 2 अगस्त, 2006 के आदेश द्वारा निम्नलिखित सारवान् विधि के प्रश्न पर अपील स्वीकार कर ली :–

> "(1) क्या प्रथम अपील न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकालने में गंभीर अवैधता कारित की है कि वादी-अपीलार्थी वाद भूमि के कब्जा नहीं है जबकि राजस्व कागजातों की प्रविष्टियों में वर्ष 1931 से वर्ष 1996 तक उनका कब्जा दर्शित किया गया है जब भूमि सुधार अधिकारी द्वारा प्रविष्टियों में सुधार के लिए आदेश पारित किया गया था ?"

10. इस न्यायालय द्वारा विरचित पूर्वोक्त विधि के सारवान् प्रश्न का उत्तर देते समय, इस न्यायालय के पास क्रमशः पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत अभिवचनों, प्रत्यक्ष या दस्तावेजी साक्ष्यों का परिशीलन करने का अवसर था विशिष्टतया प्रदर्श डी-1 और डी-2 अर्थात् क्रमशः भूमि सुधार अधिकारी और कलक्टर, सोलन, जिला सोलन द्वारा पारित तारीख 29 अक्तूबर, 2006 और तारीख 31 दिसम्बर, 1997 के आदेशों की प्रतिलिपियां, जिसका परिशीलन करने के पश्चात् यह न्यायालय सुनिश्चित तौर पर अपीलार्थियों-वादियों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेल श्री संजीव कुथियाल द्वारा दी गई इन दलीलों/निवेदनों से सहमत नहीं हैं

कि विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय सही परिप्रेक्ष्य में साक्ष्यों का मूल्यांकन करने में असफल रहा है, बजाय इसके यह न्यायालय इस बात से संतुष्ट है कि विद्वान् निचले प्रथम अपील न्यायालय ने ध्यानपूर्वक प्रश्नगत विवाद्यक पर विचार किया है और यह सही तौर पर निष्कर्ष निकाला है कि वादियों को कब्जे में होने को दर्शित करने वाली प्रविष्टि को राजस्व अभिलेखों में गलत तौर पर प्रविष्टि की गई हैं, जैसा कि प्रदर्श डी-1 से सुस्पष्ट है ।

11. पूर्वोक्त आदेशों प्रदर्श डी-1 और डी-2 के ध्यानपूर्वक परिशीलन से यह सुझाव मिलता है कि इसमें के प्रत्यर्थी-प्रतिवादी ने वाद भूमि में स्वयं को कब्जे सहित संयुक्त स्वामी होने का दावा करते हुए सिविल न्यायालय में सिविल वाद सं. 173/1 फाइल किया था । तथापि, यह तथ्य शेष रह जाता है कि प्रत्यर्थी-प्रतिवादी द्वारा फाइल पूर्वोक्त सिविल वाद को वर्तमान अपीलार्थियों-वादियों द्वारा वाद कायम रखने के बारे में उद्भूत आक्षेप पर वापस ले लिया गया था । पूर्वोक्त वाद द्वारा, जैसा कि अभिलेखों से प्रकट होता है प्रत्यर्थी-प्रतिवादी ने वाद भूमि के कब्जे में स्वामी होने के बारे में अपीलार्थियों-वादियों को दर्शित करते हुए, राजस्व प्रविष्टियों, जैसा कि वर्ष 1931-32 के लिए जमाबंदी, जो वर्ष 1995-96 तक निरन्तर बना रहा, में प्रलक्षित होता है, को चुनौती दी थी । चूंकि, अपीलार्थियों-वादियों द्वारा वाद कायम रखने के बारे में विनिर्दिष्ट आक्षेप किए गए थे, इसलिए, प्रत्यर्थी-प्रतिवादी सही ही राजस्व अभिलेखों में की गई प्रविष्टियों में सुधार करने के लिए भूमि सुधार अधिकारी के पास आवेदन फाइल किया था । भूमि सुधार अधिकारी, नालागढ़ द्वारा मिसिल सं. 23/94 में पारित तारीख 29 अक्तूबर, 1996 के आदेश प्रदर्श डी-1 के परिशीलन से यह स्पष्टतः सुझाव मिलता है कि भूमि सुधार अधिकारी द्वारा अंतिम आदेश पारित करने के पूर्व दोनों पक्षकारों को सुना गया था । पूर्वोक्त आदेश प्रदर्श डी-1 के ध्यानपूर्वक परिशीलन से यह सुझाव मिलता है कि भूमि सुधार अधिकारी ने स्वयं के समक्ष उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि अपीलार्थियों-वादियों के नाम वर्ष 1931-32 और 1935-36 के लिए जमाबंदी में स्वामित्व और कब्जे के कालम में गलत तौर पर प्रविष्ट हो गया था । भूमि सुधार अधिकारी ने यह भी निष्कर्ष निकाला है कि अपीलार्थियों-वादियों के पक्ष में पश्चात्वर्ती प्रविष्टियां गलत हैं और विधि के अनुसरण में नहीं हैं । प्रतिवादी द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत प्रदर्श डी-1 के परिशीलन से भी यह सुझाव मिलता है कि भूमि सुधार अधिकारी-सह-सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, नालागढ़ द्वारा पारित तारीख 29 अक्तूबर, 1996 के पूर्वोक्त

आदेश के विरुद्ध वर्तमान अपीलार्थियों-वादियों द्वारा कलक्टर, सोलन, जिला सोलन के समक्ष अपील फाइल की गई थी जिसे वर्ष 1997 की वाद सं. 4/7 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया था जो तारीख 8 नवम्बर, 1996 को संस्थित हुआ था । विद्वान् कलक्टर, सोलन ने तारीख 30 दिसम्बर, 1997 के अपने आदेश द्वारा अपील को नामंजूर करते हुए भूमि सुधार अधिकारी द्वारा पारित तारीख 29 अक्तूबर, 1996 के आदेश को कायम रखा था । यह न्यायालय पक्षकारों में से किसी के भी द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत किसी साक्ष्य से यह समझने की स्थिति में नहीं है, जिससे कि इस तथ्य के बारे में सुझाव मिलता है कि राजस्व प्राधिकारियों द्वारा पारित किए गए पूर्वोक्त आदेशों को हिमाचल प्रदेश भूमि राजस्व अधिनियम के अधीन सक्षम प्राधिकारी के समक्ष कभी भी चुनौती दी गई थी, जिसका तात्पर्य यह है कि तारीख 29 अक्तूबर, 1996 का आदेश जिसकी कलक्टर द्वारा भी तारीख 30 दिसम्बर, 1997 के अपने आदेश द्वारा पुष्टि कर दी गई थी, अंतिम हो गया था । यह न्यायालय पूर्वोक्त आदेशों प्रदर्श डी-1 और डी-2 का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात् श्री कुथियाल द्वारा दी गई इन दलीलों में कोई बल नहीं पाता है कि पूर्वोक्त आदेशों को भूमि राजस्व प्राधिकारियों द्वारा अपीलार्थियों-वादियों के पीछे पारित किए गए थे क्योंकि स्वीकृततः राजस्व प्राधिकारियों द्वारा पारित पूर्वोक्त आदेशों के परिशीलन से यह सुझाव मिलता है कि वे आदेश अपीलार्थियों-वादियों की उपस्थिति में पारित किए गए थे जिन्होंने क्रमशः भूमि सुधार अधिकारी द्वारा पारित आदेशों को जिला कलक्टर के समक्ष अपील फाइल करते हुए चुनौती दी थी ।

12. अभिवचनों, विनिर्दिष्टतः अपीलार्थियों-वादियों द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 7 के नियम 1 के अधीन फाइल स्थायी प्रतिषेधात्मक व्यादेश के लिए वाद का परिशीलन करने के पश्चात् यह न्यायालय, प्रत्यर्थी-प्रतिवादी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री रमाकांत शर्मा द्वारा किए गए इन प्रकथनों से सहमत है कि अपीलार्थियों-वादियों द्वारा फाइल वाद, भूमि सुधार अधिकारी द्वारा पारित तारीख 29 अक्तूबर, 1996 के आज्ञापक आदेश से असफल हो गया था जिसमें वर्ष 1931-32 के लिए जमाबंदी में स्वामित्व और कब्जे के कालम में अपीलार्थियों-वादियों के हित-पूर्वाधिकारी के नाम को प्रदर्शित करने वाली प्रविष्टि अवैध अभिनिर्धारित कर दी गई थी । अभिलेखों से यह स्पष्टतः प्रकट होता है कि पूर्वोक्त वाद तारीख 9 फरवरी, 1998 को फाइल किया गया था अर्थात् कलक्टर के न्यायालय में अपीलार्थी-वादी द्वारा फाइल अपील खारिज होने के पश्चात्, जो

तारीख 30 दिसम्बर, 1997 को आदेश प्रदर्श डी-2 द्वारा विनिश्चित हुआ था ।

13. दस्तावेजी साक्ष्य अर्थात् प्रदर्श डी-1 और प्रदर्श डी-2 पर गंभीरतापूर्वक विचार करने के पश्चात्, मुझे यह निष्कर्ष निकालने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि विद्वान् विचारण न्यायालय अपीलार्थियों-वादियों का वाद डिक्री करते समय यह मूल्यांकन करने में असफल रहा है कि राजस्व न्यायालय द्वारा वर्ष 1931-32 में अपीलार्थियों-वादियों के पक्ष में किए गए अभिकथित तौर पर प्रविष्टि के बारे में पूर्णतः स्पष्ट निष्कर्ष निकाला था । विद्वान् निचला विचारण न्यायालय इस तथ्य का उल्लेख करने में भी असफल रहा कि राजस्व प्राधिकारी द्वारा पारित पूर्वोक्त आदेश की पुष्टि अपील प्राधिकारी द्वारा की गई थी और इस प्रकार, वाद पर पुनः विचार और विनिश्चय नहीं किया जा सकता था और इस प्रकार, विद्वान् निचले न्यायालय को वाद भूमि पर अपीलार्थियों-वादियों के कब्जे के बारे में निष्कर्ष अभिलिखित करने का कोई अवसर नहीं था । रुचिपूर्ण तौर पर, वादपत्र में राजस्व प्राधिकारियों द्वारा पूर्वोक्त आदेशों को पारित करने के बारे में कोई उल्लेख, यदि कोई हो, नहीं किया गया है, जिसका तात्पर्य यह है कि अपीलार्थियों-वादियों ने वाद फाइल करने के माध्यम से न्यायालय की आंखों में धूल झोंकने का प्रयास किया है । अभिलेखों से यह भी प्रकट होता है कि प्रथमदृष्ट्या प्रत्यर्थी-प्रतिवादी ने प्रविष्टियों में सुधार करने के लिए सिविल वाद के माध्यम से सिविल न्यायालय में वाद फाइल किया था किन्तु वे राजस्व अभिलेखों में सुधार करने के लिए राजस्व प्राधिकारियों के समक्ष गए ।

14. प्रत्येक चीज को छोड़ते हुए, प्रत्यर्थी-प्रतिवादी के आवेदन पर राजस्व प्राधिकारियों द्वारा पारित पूर्वोक्त आदेशों प्रदर्श डी-1 और डी-2 को कोई चुनौती, यदि कोई हो, नहीं दी गई थी और अपीलार्थियों-वादियों द्वारा फाइल वर्तमान वाद में अपीलार्थियों-वादियों द्वारा इसके पश्चात् अपील फाइल की गई थी । अपीलार्थियों-वादियों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों का परिशीलन करने से भी अभिलेख पर कहीं भी यह साबित नहीं होता है कि वे वाद भूमि के कब्जे में हैं ।

15. यह सत्य है कि वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादी को कब्जे के कालम में वर्ष 1996-97 और 1995-96 के लिए जमाबंदी की प्रतियों अर्थात् प्रदर्श पी 16 और प्रदर्श पी 15 में गैर-अधिभोगी किराएदार के रूप में वाद भूमि के कब्जे में स्वामियों के रूप में दर्शित किया गया है । निःसंदेह, सत्य की विधिक उपधारणा इन जमाबंदी प्रविष्टियों से संबद्ध है किन्तु ऐसी उपधारणा खंडनीय होती हैं ।

16. वर्तमान मामले में, वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादी को जमाबंदी में प्रविष्टियों के आधार पर वाद भूमि के कब्जे में होना अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है, विनिर्दिष्टतः, तब जब अपीलार्थी-वादी अभिलेख पर यह साबित करने में असफल रहे हैं कि किस आधार पर श्री कांशी राम और भगतू, वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादी के हित-पूर्वाधिकारी के नाम वर्ष 1931-32 में राजस्व अभिलेख में अभिलिखित हुआ था । जब वादियों का यह स्वीकृत पक्षकथन है कि प्रतिवादी, वाद भूमि के स्वामी हैं तब यह तत्कालीन पदधारी पर निर्भर करता था कि वह राजस्व प्राधिकारियों द्वारा पारित इस प्रभाव का आदेश या निर्देश, यदि कोई हों, कि श्री कांशी राम और भगतू, उनके हित-पूर्वाधिकारियों के नामों को वाद भूमि के कब्जे में प्रविष्ट करने का आदेश देता । वादियों और उनके हित-पूर्वाधिकारियों के नाम वर्ष 1935-36 से वर्ष 1991-92 के लिए जमाबंदी की प्रतियों प्रदर्श पी 4 से प्रदर्श पी 14 में वाद भूमि के कब्जे में अभिलिखित किए गए हैं । स्वीकृततः, वादियों ने ऐसा कोई रपट रोजनामचा प्रस्तुत नहीं किया है जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि राजस्व प्राधिकारियों द्वारा राजस्व प्रविष्टियों में परिवर्तन करने के लिए कुछ आदेश पारित किए गए थे जो स्वीकृततः, वर्ष 1935-36 के पूर्व के थे, जिनमें प्रतिवादी-वादी के हित-पूर्वाधिकारी के नाम थे । इसी प्रकार, वादियों-अपीलार्थियों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत अभिवचनों में ऐसा कुछ नहीं है जिनसे इस तथ्य के बारे में सुझाव मिलता है कि वे किराएदारों के रूप में वाद भूमि के कब्जे में थे और इस प्रकार, विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय ने सही ही यह निष्कर्ष निकाला है कि वाद भूमि में उनके नामों की अभिलिखित प्रविष्टियां गलत और अवैध हैं और बिना किसी आधार के हैं । इसी प्रकार, अपीलार्थियों-वादियों का यह स्वीकृत पक्षकथन है कि उन्होंने नामांतरण को अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया है जिसे बंधन के बारे में प्रविष्ट किया गया था और इसके अतिरिक्त ऐसे बंधक को स्वीकृत वादियों के पक्ष में अनुप्रमाणित नहीं किया गया था, इसके बजाय, इसे राजस्व प्राधिकारियों द्वारा रद्द कर दिया गया था और इस प्रकार, विद्वान् निचले न्यायालय ने सही ही यह निष्कर्ष निकाला है कि वादी, ऐसे नामांतरण के आधार पर यह प्रत्याख्यान नहीं कर सकते हैं कि उनका कब्जा राजस्व अभिलेखों में अभिलिखित किया गया है । चूंकि, बंधक का नामांतरण, तहसीलदार द्वारा अनुप्रमाणित नहीं हुआ था, बजाय इसके ऐसी प्रविष्टि, यदि कोई हो, को नामंजूर करने का आदेश दिया गया था, जिसके आधार पर राजस्व प्राधिकारी द्वारा तारीख 26 अक्तूबर, 1996 के आदेश प्रदर्श डी-1 में इसे सही ही अवैध अभिनिर्धारित किया गया था ।

17. उपर्युक्त के अलावा, वादियों द्वारा अभिलेख पर ऐसा कोई मौखिक साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है जिसका इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करने के लिए परिशीलन किया जा सके कि वे वाद भूमि के कब्जे में थे, इसके बजाय, वादियों के स्वयं साक्षियों द्वारा किए गए कथनों से यह सुझाव मिलता है कि वाद भूमि घटनास्थल पर खाली पड़ा था क्योंकि प्रतिवादी, तहसील कसौली के ग्राम भग्गुअल में स्थानांतरित हो गया था । उपर्युक्त के अलावा, वाद भूमि की प्रकृति, बंजर कादिम, गैर-मुमकिन बिर्द, घासनी के रूप में अभिलिखित है, जैसा कि वर्ष 1991-92, 1995-96 और वर्ष 1996-97 के लिए जमाबंदियों की प्रतियों अर्थात् प्रदर्श पी 14 से प्रदर्श पी 17 से प्रदर्शित होता है । पूर्वोक्त प्रविष्टियां, आरम्भ से ही निरन्तर दर्ज थीं, इसलिए, यह प्रकट होता है कि वाद भूमि वादियों के जोत कब्जे में नहीं थीं । इसी प्रकार, वादियों द्वारा अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है, जिससे इस तथ्य के बारे में सुझाव मिलता है कि उन्होंने वाद भूमि की प्रकृति में परिवर्तन किया था या कोई अन्य प्रत्यक्ष कार्य किया था, अतएव, विद्वान् निचले न्यायालय ने यह सही ही निष्कर्ष निकाला है कि वादियों को बंजर कादिम और गैर-मुमकिन भूमि के कब्जे में होना भी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है और ऐसी भूमि का कब्जा, जो बंजर है और बिना जोत के है, हक धारक के अधिभोग में होना चाहिए ।

18. उपर्युक्त के अलावा, भूमि सुधार अधिकारी द्वारा पारित आदेश के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि वादियों और प्रोफार्मा प्रतिवादी ने किराया संदाय पर गैर-अधिभोगी किराएदार के रूप में स्वयं को वाद भूमि के कब्जे में होने का दावा किया है और यह भी दावा किया है कि प्रत्यर्थी-प्रतिवादी के पक्ष में प्रविष्टि गलत और अवैध थी । वादियों ने भूमि सुधार अधिकारी के समक्ष यह दावा किया था कि वे वाद भूमि के कब्जे में प्रविष्ट हुए थे जो वर्तमान वाद में लिए गए आधार के पूर्णतया प्रतिकूल है जिसमें उन्होंने वर्ष 1931-32 के लिए जमाबंदी के आधार पर स्वयं को वाद भूमि के कब्जे में होने का दावा किया था । इसके अतिरिक्त, अभिवचनों से इस तथ्य के बारे में ऐसा कोई सुझाव नहीं मिलता है कि वे गैर-अधिभोगी किराएदार के रूप में प्रविष्ट हुए थे । इसी प्रकार, वर्ष 1926 में वाद भूमि में किराएदार के रूप में उनके प्रविष्ट होने के बारे में कोई उल्लेख, यदि कोई हो, नहीं किया गया है । अतएव, यह न्यायालय अभिवचनों के साथ ही विद्वान् राजस्व प्राधिकारियों द्वारा पारित आदेश का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात् विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री रमाकांत शर्मा द्वारा दिए गए इन तर्कों में सारवान् बल पाता है कि विद्वान् निचले विचारण न्यायालय के

साथ ही राजस्व प्राधिकारियों के समक्ष अपीलार्थियों-वादियों द्वारा लिए गए आधार में पूर्ण भिन्नता है और इस प्रकार, विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय में कोई अवैधता और कमी नहीं है ।

19. विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय के साथ ही निचले न्यायालय के अभिलेखों का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात् इस न्यायालय को विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय में कोई अवैधता और कमी दिखाई नहीं देती है जो प्रकटतः क्रमशः पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों के सही परिशीलन पर आधारित है । अपीलार्थी-वादी, वाद भूमि में अपने कब्जे को साबित करने में समर्थ नहीं हुए हैं, बजाय, इसके प्रत्यर्थी-प्रतिवादी द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत विश्वसनीय साक्ष्य से इस तथ्य के बारे में सुझाव मिलता है कि वादियों-अपीलार्थियों के हित-पूर्वाधिकारी का नाम राजस्व अभिलेख के कब्जे के कालम में गलत तौर पर अभिलिखित हो गया था जिसमें प्रत्यर्थी-प्रतिवादी द्वारा फाइल आवेदन की कार्यवाहियों में राजस्व प्राधिकारियों द्वारा विधि के अनुसरण में सुधार कर दिया गया था । इसके अतिरिक्त, पुनरावृत्ति को रोकते हुए यह कथन किया जा सकता है कि प्रत्यर्थी-प्रतिवादी के स्वामित्व और कब्जे के बारे में भूमि सुधार अधिकारी द्वारा निकाले गए निष्कर्ष अंतिम हो गए हैं और इस प्रकार, इस पर निचले न्यायालय द्वारा वर्तमान कार्यवाहियों में विचार नहीं किया जा सकता था । तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्न का उत्तर दिया जाता है ।

20. परिणामतः, इसमें उपर्युक्त सविस्तार चर्चा को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय को प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित उस निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है जो साक्ष्य के साथ ही विधि के समुचित मूल्यांकन पर आधारित है । अतएव, यह अपील खारिज की जाती है । तद्नुसार, विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को कायम रखा जाता है और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है । अन्तरिम आदेश, यदि कोई हों, बातिल किए जाते हैं । सभी प्रकीर्ण आवेदनों को भी निपटाया जाता है ।

द्वितीय अपील खारिज की गई ।

क.

गतांक से आगे.......

अध्याय 4

राज्य सूचना आयोग

15. राज्य सूचना आयोग का गठन – (1) प्रत्येक राज्य सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा .... (राज्य का नाम) सूचना आयोग के नाम से ज्ञात एक निकाय का गठन करेगी, जो ऐसी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे कृत्यों का पालन करेगा, जो उसे इस अधिनियम के अधीन सौंपे जाएं ।

(2) राज्य सूचना आयोग निम्नलिखित से मिलकर बनेगा –

(क) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त ; और

(ख) दस से अनधिक उतनी संख्या में राज्य सूचना आयुक्त, जितने आवश्यक समझे जाएं ।

(3) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्तों की नियुक्ति, राज्यपाल द्वारा निम्नलिखित से मिलकर बनी किसी समिति की सिफारिश पर की जाएगी, –

(i) मुख्यमंत्री, जो समिति का अध्यक्ष होगा ;

(ii) विधान सभा में विपक्ष का नेता ; और

(iii) मुख्यमंत्री द्वारा नामनिर्देशित किया जाने वाला मंत्रिमंडल का सदस्य ।

स्पष्टीकरण – शंकाओं को दूर करने के प्रयोजनों के लिए यह घोषित किया जाता है कि जहां विधान सभा में विपक्षी दल के नेता को उस रूप में मान्यता नहीं दी गई है, वहां विधान सभा में सरकार के विपक्षी एकल सबसे बड़े समूह के नेता को विपक्षी दल का नेता समझा जाएगा ।

(4) राज्य सूचना आयोग के कार्यों का साधारण अधीक्षण, निदेशन और प्रबंध राज्य मुख्य सूचना आयुक्त में निहित होगा, जिसकी राज्य सूचना आयुक्तों द्वारा सहायता की जाएगी और वह सभी ऐसी शक्तियों का प्रयोग कर सकेगा और सभी ऐसे कार्य और बातें कर सकेगा जो राज्य सूचना आयोग द्वारा इस अधिनियम के अधीन किसी अन्य प्राधिकारी के निर्देशों के अध्यधीन रहे बिना स्वतंत्र रूप से प्रयोग की जा सकती हैं या की जा सकती हैं ।

(5) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्त विधि, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, समाजसेवा, प्रबंध, पत्रकारिता, जनसंपर्क माध्यम या प्रशासन और शासन में व्यापक ज्ञान और अनुभव वाले समाज में प्रख्यात व्यक्ति होंगे ।

(6) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त, यथास्थिति, संसद् का सदस्य या किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के विधान-मंडल का सदस्य नहीं होगा या कोई अन्य लाभ का पद धारण नहीं करेगा या किसी राजनैतिक दल से संबद्ध नहीं होगा या कोई कारबार नहीं करेगा या कोई वृत्ति नहीं करेगा ।

(7) राज्य सूचना आयोग का मुख्यालय राज्य में ऐसे स्थान पर होगा, जिसे राज्य सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट करे और राज्य सूचना आयोग, राज्य सरकार के पूर्व अनुमोदन से, राज्य में अन्य स्थानों पर अपने कार्यालय स्थापित कर सकेगा ।

16. पदावधि और सेवा शर्तें – (1) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त उस तारीख से, जिसको वह अपना पद ग्रहण करता है, पांच वर्ष की अवधि के लिए पद धारण करेगा और पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होगा :

परंतु कोई राज्य मुख्य सूचना आयुक्त पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त करने के पश्चात् उस रूप में पद धारण नहीं करेगा ।

(2) प्रत्येक राज्य सूचना आयुक्त उस तारीख से, जिसको वह अपना पद ग्रहण करता है, पांच वर्ष की अवधि के लिए या पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त करने तक, इनमें से जो भी पूर्वतर हो, पद धारण करेगा और राज्य सूचना आयुक्त के रूप में पुनर्नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होगा :

परंतु प्रत्येक राज्य सूचना आयुक्त, इस उपधारा के अधीन अपना पद रिक्त करने पर, धारा 15 की उपधारा (3) में विनिर्दिष्ट रीति से राज्य मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र होगा :

परंतु यह और कि जहां राज्य सूचना आयुक्त की राज्य मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में नियुक्ति की जाती है, वहां उसकी पदावधि राज्य सूचना आयुक्त और राज्य मुख्य सूचना आयुक्त के रूप में कुल मिलाकर पांच वर्ष से अधिक नहीं होगी ।

(3) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या कोई राज्य सूचना आयुक्त

अपना पद ग्रहण करने से पूर्व राज्यपाल या इस निमित्त उसके द्वारा नियुक्त किए गए किसी अन्य व्यक्ति के समक्ष पहली अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए उपवर्णित प्ररूप के अनुसार शपथ या प्रतिज्ञान लेगा और उस पर अपने हस्ताक्षर करेगा ।

(4) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या कोई राज्य सूचना आयुक्त, किसी भी समय, राज्यपाल को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपने पद का त्याग कर सकेगा :

परंतु राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या किसी राज्य सूचना आयुक्त को धारा 17 में विनिर्दिष्ट रीति से हटाया जा सकेगा ।

(5) संदेय वेतन और भत्ते तथा सेवा के अन्य निबंधन और शर्तें –

(क) राज्य मुख्य सूचना आयुक्त की वही होंगी, जो किसी निर्वाचन आयुक्त की हैं ;

(ख) राज्य सूचना आयुक्त की वही होंगी, जो राज्य सरकार के मुख्य सचिव की हैं :

परन्तु यदि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या कोई राज्य सूचना आयुक्त अपनी नियुक्ति के समय भारत सरकार के अधीन या किसी राज्य सरकार के अधीन किसी पूर्व सेवा के संबंध में कोई पेंशन, अक्षमता या क्षति पेंशन से भिन्न, प्राप्त कर रहा है तो राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त के रूप में सेवा के संबंध में उसके वेतन में से उस पेंशन की रकम को, जिसके अंतर्गत पेंशन का ऐसा भाग जिसे संराशिकृत किया गया था और सेवानिवृत्ति उपदान के समतुल्य पेंशन को छोड़ कर अन्य प्रकार के सेवानिवृत्ति फायदों के समतुल्य पेंशन भी है, कम कर दिया जाएगा :

परन्तु यह और कि जहां राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त, अपनी नियुक्ति के समय, किसी केन्द्रीय अधिनियम या राज्य अधिनियम द्वारा या उसके अधीन स्थापित किसी निगम या केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार के स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन किसी सरकारी कंपनी में की गई किसी पूर्व सेवा के संबंध में सेवानिवृत्ति फायदे प्राप्त कर रहा है वहां राज्य मुख्य सूचना आयुक्त राज्य सूचना आयुक्त के रूप में सेवा के संबंध में उसके वेतन में से सेवानिवृत्ति फायदों के समतुल्य पेंशन की रकम कम कर दी जाएगी :

परन्तु यह और कि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्तों के वेतन, भत्तों और सेवा की अन्य शर्तों में उनकी नियुक्ति के पश्चात् उनके लिए अलाभकारी रूप में परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

(6) राज्य सरकार, राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और राज्य सूचना आयुक्तों को उतने अधिकारी और कर्मचारी उपलब्ध कराएगी जितने इस अधिनियम के अधीन उनके कृत्यों के दक्ष पालन के लिए आवश्यक हों और इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए नियुक्त किए गए अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को संदेय वेतन और भत्ते तथा सेवा के निबंधन और शर्तें ऐसी होंगी, जो विहित की जाएं ।

17. राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त का हटाया जाना – (1) उपधारा (3) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या किसी राज्य सूचना आयुक्त को राज्यपाल के आदेश द्वारा साबित कदाचार या असमर्थता के आधार पर उसके पद से तभी हटाया जाएगा, जब उच्चतम न्यायालय ने, राज्यपाल द्वारा उसे किए गए किसी निर्देश पर जांच के पश्चात् यह रिपोर्ट दी हो कि, यथास्थिति, राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त को उस आधार पर हटा दिया जाना चाहिए ।

(2) राज्यपाल, उस राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त को, जिसके विरुद्ध उपधारा (1) के अधीन उच्चतम न्यायालय को निर्देश किया गया है, ऐसे निर्देश पर उच्चतम न्यायालय की रिपोर्ट की प्राप्ति पर राज्यपाल द्वारा आदेश पारित किए जाने तक, पद से निलंबित कर सकेगा और यदि आवश्यक समझे तो ऐसी जांच के दौरान कार्यालय में उपस्थित होने से प्रतिषिद्ध भी कर सकेगा ।

(3) उपधारा (1) में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी राज्यपाल, राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या किसी राज्य सूचना आयुक्त को, आदेश द्वारा, पद से हटा सकेगा, यदि, यथास्थिति, राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त –

(क) दिवालिया न्यायनिर्णीत किया गया है ; या

(ख) वह ऐसे किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध ठहराया गया है जिसमें राज्यपाल की राय में नैतिक अधमता अंतर्वलित है ; या

(ग) वह अपनी पदावधि के दौरान अपने पद के कर्तव्यों से परे

किसी वैतनिक नियोजन में लगा हुआ है ; या

(घ) राज्यपाल की राय में, मानसिक या शारीरिक अक्षमता के कारण पद पर बने रहने के अयोग्य है ; या

(ङ) उसने ऐसे वित्तीय या अन्य हित अर्जित किए हैं, जिनसे, राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या राज्य सूचना आयुक्त के रूप में उसके कृत्यों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना है ।

(4) यदि राज्य मुख्य सूचना आयुक्त या कोई राज्य सूचना आयुक्त, किसी प्रकार, राज्य सरकार द्वारा या उसकी ओर से की गई किसी संविदा या करार से संबद्ध या उसमें हितबद्ध है या किसी निगमित कंपनी के किसी सदस्य को किसी रूप में से अन्यथा और उसके अन्य सदस्यों के साथ सामान्यतः उसके लाभ में या उससे प्रोद्भूत होने वाले किसी फायदे या परिलब्धियों में हिस्सा लेता है तो वह उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए कदाचार का दोषी समझा जाएगा ।

अध्याय 5

सूचना आयोगों की शक्तियां और कृत्य, अपील तथा शास्तियां

18. सूचना आयोगों की शक्तियां और कृत्य – (1) इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए, यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य आयोग का यह कर्तव्य होगा कि वह निम्नलिखित किसी ऐसे व्यक्ति से शिकायत प्राप्त करे और उसकी जांच करे, –

(क) जो, यथास्थिति, किसी केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी को, इस कारण से अनुरोध प्रस्तुत करने में असमर्थ रहा है कि इस अधिनियम के अधीन ऐसे अधिकारी की नियुक्ति नहीं की गई है या, यथास्थिति, केन्द्रीय सहायक लोक सूचना अधिकारी या राज्य सहायक लोक सूचना अधिकारी ने इस अधिनियम के अधीन सूचना या अपील के लिए धारा 19 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी अथवा ज्येष्ठ अधिकारी या, यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग को उसके आवेदन को भेजने के लिए स्वीकार करने से इंकार कर दिया है ;

(ख) जिसे इस अधिनियम के अधीन अनुरोध की गई कोई

जानकारी तक पहुंच के लिए इंकार कर दिया गया है ;

(ग) जिसे इस अधिनियम के अधीन विनिर्दिष्ट समय-सीमा के भीतर सूचना के लिए या सूचना तक पहुंच के लिए अनुरोध का उत्तर नहीं दिया गया है ;

(घ) जिससे ऐसी फीस की रकम का संदाय करने की अपेक्षा की गई है, जो वह अनुचित समझता है या समझती है ;

(ङ) जो यह विश्वास करता है कि उसे इस अधिनियम के अधीन अपूर्ण, भ्रम में डालने वाली या मिथ्या सूचना दी गई है ; और

(च) इस अधिनियम के अधीन अभिलेखों के लिए अनुरोध करने या उन तक पहुंच प्राप्त करने से संबंधित किसी अन्य विषय के संबंध में ।

(2) जहां, यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग का यह समाधान हो जाता है कि उस विषय में जांच करने के लिए युक्तियुक्त आधार हैं, वहां वह उसके संबंध में जांच आरंभ कर सकेगा ।

(3) यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग को, इस धारा के अधीन किसी मामले में जांच करते समय वही शक्तियां प्राप्त होंगी, जो निम्नलिखित मामलों के संबंध में सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के अधीन किसी बात का विचारण करते समय सिविल न्यायालय में निहित होती हैं, अर्थात् :–

(क) किन्हीं व्यक्तियों को समन करना और उन्हें उपस्थित कराना तथा शपथ पर मौखिक या लिखित साक्ष्य देने के लिए और दस्तावेज या चीजें पेश करने के लिए उनको विवश करना ;

(ख) दस्तावेजों के प्रकटीकरण और निरीक्षण की अपेक्षा करना ;

(ग) शपथपत्र पर साक्ष्य को अभिग्रहण करना ;

(घ) किसी न्यायालय या कार्यालय से किसी लोक अभिलेख या उसकी प्रतियां मंगाना ;

(ङ) साक्षियों या दस्तावेजों की परीक्षा के लिए समन जारी करना ; और

(च) कोई अन्य विषय, जो विहित किया जाए ।

(4) यथास्थिति, संसद् या राज्य विधान-मंडल के किसी अन्य अधिनियम में अंतर्विष्ट किसी असंगत बात के होते हुए भी, यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग इस अधिनियम के अधीन किसी शिकायत की जांच करने के दौरान, ऐसे किसी अभिलेख की परीक्षा कर सकेगा, जिसे यह अधिनियम लागू होता है और जो लोक प्राधिकारी के नियंत्रण में है और उसके द्वारा ऐसे किसी अभिलेख को किन्हीं भी आधारों पर रोका नहीं जाएगा ।

19. अपील – (1) ऐसा कोई व्यक्ति, जिसे धारा 7 की उपधारा (1) या उपधारा (3) के खंड (क) में विनिर्दिष्ट समय के भीतर कोई विनिश्चय प्राप्त नहीं हुआ है या जो, यथास्थिति केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी के किसी विनिश्चय से व्यथित है, उस अवधि की समाप्ति से या ऐसे किसी विनिश्चय की प्राप्ति से तीस दिन के भीतर ऐसे अधिकारी को अपील कर सकेगा, जो प्रत्येक लोक प्राधिकरण में, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या लोक सूचना अधिकारी की पंक्ति से ज्येष्ठ पंक्ति का है :

परन्तु ऐसा अधिकारी, तीस दिन की अवधि की समाप्ति के पश्चात् अपील को ग्रहण कर सकेगा, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि अपीलार्थी समय पर अपील फाइल करने में पर्याप्त कारण से निवारित किया गया था ।

(2) जहां अपील धारा 11 के अधीन, यथास्थिति, किसी केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या किसी राज्य लोक सूचना अधिकारी द्वारा पर व्यक्ति की सूचना प्रकट करने के लिए किए गए किसी आदेश के विरुद्ध की जाती है वहां संबंधित पर व्यक्ति द्वारा अपील, उस आदेश की तारीख से 30 दिन के भीतर की जाएगी ।

(3) उपधारा (1) के अधीन विनिश्चय के विरुद्ध दूसरी अपील उस तारीख से जिसको विनिश्चय किया जाना चाहिए था या वास्तव में प्राप्त किया गया था, नब्बे दिन के भीतर केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग को होगी :

परन्तु, यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग नब्बे दिन की अवधि की समाप्ति के पश्चात् अपील को ग्रहण कर सकेगा,

यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि अपीलार्थी समय पर अपील फाइल करने से पर्याप्त कारण से निवारित किया गया था ।

(4) यदि, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी का विनिश्चय जिसके विरुद्ध अपील की गई है, पर व्यक्ति की सूचना से संबंधित है तो यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग उस पर व्यक्ति को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर देगा ।

(5) अपील संबंधी किन्हीं कार्यवाहियों में यह साबित करने का भार कि अनुरोध को अस्वीकार करना न्यायोचित था, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी पर, जिसने अनुरोध से इनकार किया था, होगा ।

(6) उपधारा (1) या उपधारा (2) के अधीन किसी अपील का निपटारा, लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से, अपील की प्राप्ति के तीस दिन के भीतर या ऐसी विस्तारित अवधि के भीतर, जो उसके फाइल किए जाने की तारीख से कुल पैंतालीस दिन से अधिक न हो, किया जाएगा ।

(7) यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग का विनिश्चय आबद्धकर होगा ।

(8) अपने विनिश्चय में, यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग को निम्नलिखित की शक्ति है –

(क) लोक प्राधिकरण से ऐसे उपाय करने की अपेक्षा करना, जो इस अधिनियम के उपबंधों का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हो, जिनके अंतर्गत निम्नलिखित भी है –

(i) सूचना तक पहुंच उपलब्ध कराना, यदि विशिष्ट प्ररूप में ऐसा अनुरोध किया गया है ;

(ii) यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी को नियुक्त करना ;

(iii) कतिपय सूचना या सूचना के प्रवर्गों को प्रकाशित करना ;

(iv) अभिलेखों के अनुरक्षण, प्रबंध और विनाश से संबंधित अपनी पद्धतियों में आवश्यक परिवर्तन करना ;

(v) अपने अधिकारियों के लिए सूचना के अधिकार के संबंध में प्रशिक्षण के उपबंध को बढ़ाना ;

(vi) धारा 4 की उपधारा (1) के खंड (ख) के अनुसरण में अपनी एक वार्षिक रिपोर्ट उपलब्ध कराना ;

(ख) लोक प्राधिकारी से शिकायतकर्ता को, उसके द्वारा सहन की गई किसी हानि या अन्य नुकसान के लिए प्रतिपूरित करने की अपेक्षा करना ;

(ग) इस अधिनियम के अधीन उपबंधित शास्तियों में से कोई शास्ति अधिरोपित करना ;

(घ) आवेदन को नामंजूर करना ।

(9) यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग शिकायतकर्ता और लोक प्राधिकारी को, अपने विनिश्चय की, जिसके अंतर्गत अपील का कोई अधिकार भी है, सूचना देगा ।

(10) यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग, अपील का विनिश्चय ऐसी प्रक्रिया के अनुसार करेगा, जो विहित की जाए ।

20. शास्ति – (1) जहां किसी शिकायत या अपील का विनिश्चय करते समय, यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग की यह राय है कि, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी ने, किसी युक्तियुक्त कारण के बिना सूचना के लिए, कोई आवेदन प्राप्त करने से इंकार किया है या धारा 7 की उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट समय के भीतर सूचना नहीं दी है या असद्भावपूर्वक सूचना के लिए अनुरोध से इंकार किया है या जानबूझकर गलत, अपूर्ण या भ्रामक सूचना दी है या उस सूचना को नष्ट कर दिया है, जो अनुरोध का विषय थी या किसी रीति से सूचना देने में बाधा डाली है, तो वह ऐसे प्रत्येक दिन के लिए, जब तक आवेदन प्राप्त किया जाता है या सूचना दी जाती है, दो सौ पचास रुपए की शास्ति अधिरोपित करेगा, तथापि, ऐसी शास्ति की कुल रकम पचीस हजार रुपए से अधिक नहीं होगी :

परंतु, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी को, उस पर कोई शास्ति अधिरोपित किए जाने के पूर्व, सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दिया जाएगा :

परंतु यह और कि यह साबित करने का भार कि उसने युक्तियुक्त रूप से और तत्परतापूर्वक कार्य किया है, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी पर होगा ।

(2) जहां किसी शिकायत या अपील का विनिश्चय करते समय, यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग की यह राय है कि, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी, किसी युक्तियुक्त कारण के बिना और लगातार सूचना के लिए कोई आवेदन प्राप्त करने में असफल रहा है या उसने धारा 7 की उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट समय के भीतर सूचना नहीं दी है या असद्भावपूर्वक सूचना के लिए अनुरोध से इंकार किया है या जानबूझकर गलत, अपूर्ण या भ्रामक सूचना दी है या ऐसी सूचना को नष्ट कर दिया है, जो अनुरोध का विषय थी या किसी रीति से सूचना देने में बाधा डाली है वहां वह यथास्थिति, ऐसी केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी के विरुद्ध उसे लागू सेवा नियमों के अधीन अनुशासनिक कार्रवाई के लिए सिफारिश करेगा ।

अध्याय 6
प्रकीर्ण

21. सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई के लिए संरक्षण – कोई वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही किसी भी ऐसी बात के बारे में, जो इस अधिनियम या उसके अधीन बनाए गए किसी नियम के अधीन सद्भावपूर्वक की गई है या की जाने के लिए आशयित है, किसी व्यक्ति के विरुद्ध न होगी ।

22. अधिनियम का अध्यारोही प्रभाव होना – इस अधिनियम के उपबंध, शासकीय गुप्त बात अधिनियम, 1923 और तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में या इस अधिनियम से अन्यथा किसी विधि के आधार पर प्रभाव रखने वाली किसी लिखत में उससे असंगत किसी बात के होते हुए भी, प्रभावी होंगे ।

23. न्यायालयों की अधिकारिता का वर्जन – कोई न्यायालय, इस अधिनियम के अधीन किए गए किसी आदेश के संबंध में कोई वाद, आवेदन या अन्य कार्यवाही ग्रहण नहीं करेगा और ऐसे किसी आदेश को, इस अधिनियम के अधीन किसी अपील के रूप में के सिवाय किसी रूप में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।

24. अधिनियम का कतिपय संगठनों को लागू न होना – (1) इस अधिनियम में अंतर्विष्ट कोई बात, केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित आसूचना और सुरक्षा संगठनों को, जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट है या ऐसे संगठनों द्वारा उस सरकार को दी गई किसी सूचना को लागू नहीं होगी :

परंतु भ्रष्टाचार और मानव अधिकारों के अतिक्रमण के अभिकथनों से संबंधित सूचना इस उपधारा के अधीन अपवर्जित नहीं की जाएगी :

परन्तु यह और कि यदि मांगी गई सूचना मानवाधिकारों के अतिक्रमण के अभिकथनों से संबंधित है तो सूचना केन्द्रीय सूचना आयोग के अनुमोदन के पश्चात् ही दी जाएगी और धारा 7 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसी सूचना अनुरोध की प्राप्ति के पैंतालीस दिन के भीतर दी जाएगी ।

(2) केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में किसी अधिसूचना द्वारा, अनुसूची का उस सरकार द्वारा स्थापित किसी अन्य आसूचना या सुरक्षा संगठन को उसमें सम्मिलित करके या उसमें पहले से विनिर्दिष्ट किसी संगठन का उससे लोप करके, संशोधन कर सकेगी और ऐसी अधिसूचना के प्रकाशन पर ऐसे संगठन को अनुसूची में, यथास्थिति, सम्मिलित किया गया या उसका उससे लोप किया गया, समझा जाएगा ।

(3) उपधारा (2) के अधीन जारी की गई प्रत्येक अधिसूचना, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जाएगी ।

(4) इस अधिनियम की कोई बात ऐसे आसूचना और सुरक्षा संगठनों को लागू नहीं होगी, जो राज्य सरकार द्वारा स्थापित ऐसे संगठन हैं, जिन्हें वह सरकार समय-समय पर, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट करे :

परन्तु भ्रष्टाचार और मानव अधिकारों के अतिक्रमण के अभिकथनों से संबंधित सूचना इस उपधारा के अधीन अपवर्जित नहीं की जाएगी :

परन्तु यह और कि यदि मांगी गई सूचना मानव अधिकारों के अतिक्रमण अभिकथनों से संबंधित है तो सूचना राज्य सूचना आयोग के अनुमोदन के पश्चात् ही दी जाएगी और धारा 7 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसी सूचना अनुरोध की प्राप्ति के पैंतालीस दिनों के भीतर दी जाएगी ।

(5) उपधारा (4) के अधीन जारी की गई प्रत्येक अधिसूचना राज्य

विधान-मंडल के समक्ष रखी जाएगी ।

25. मानीटर करना और रिपोर्ट करना – (1) यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग, प्रत्येक वर्ष के अंत के पश्चात्, यथासाध्यशीघ्रता से उसे वर्ष के दौरान इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के संबंध में एक रिपोर्ट तैयार करेगा और उसकी एक प्रति समुचित सरकार को भेजेगा ।

(2) प्रत्येक मंत्रालय या विभाग, अपनी अधिकारिता के भीतर लोक प्राधिकारियों के संबंध में, ऐसी सूचना एकत्रित करेगा और उसे यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग को उपलब्ध कराएगा, जो इस धारा के अधीन रिपोर्ट तैयार करने के लिए अपेक्षित है और इस धारा के प्रयोजनों के लिए, उस सूचना को देने तथा अभिलेख रखने से संबंधित अपेक्षाओं का पालन करेगा ।

(3) प्रत्येक रिपोर्ट में, उस वर्ष के संबंध में, जिससे रिपोर्ट संबंधित है निम्नलिखित के बारे में कथन होगा, –

(क) प्रत्येक लोक प्राधिकारी से किए गए अनुरोधों की संख्या ;

(ख) ऐसे विनिश्चयों की संख्या, जहां आवेदक अनुरोधों के अनुसरण में दस्तावेजों तक पहुंच के लिए हकदार नहीं थे, इस अधिनियम के वे उपबंध, जिनके अधीन ये विनिश्चय किए गए थे और ऐसे समयों की संख्या, जब ऐसे उपबंधों का अवलंब लिया गया था ;

(ग) पुनर्विलोकन के लिए यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग को निर्दिष्ट की गई अपीलों की संख्या, अपीलों की प्रकृति और अपीलों के निष्कर्ष ;

(घ) इस अधिनियम के प्रशासन के संबंध में किसी अधिकारी के विरुद्ध की गई अनुशासनिक कार्रवाई की विशिष्टियां ;

(ङ) इस अधिनियम के अधीन प्रत्येक लोक प्राधिकारी द्वारा एकत्रित की गई प्रभारों की रकम ;

(च) कोई ऐसे तथ्य, जो इस अधिनियम की भावना और आशय को प्रशासित और कार्यान्वित करने के लिए लोक प्राधिकारियों के किसी प्रयास को उपदर्शित करते हैं ;

(छ) सुधार के लिए सिफारिशें, जिनके अंतर्गत इस अधिनियम या अन्य विधान या सामान्य विधि के विकास, समुन्नति, आधुनिकीकरण, सुधार या संशोधन के लिए विशिष्ट लोक प्राधिकारियों के संबंध में सिफारिशें या सूचना तक पहुंच के अधिकार को प्रवर्तनशील बनाने से सुसंगत कोई अन्य विषय भी हैं ।

(4) यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार, प्रत्येक वर्ष के अंत के पश्चात्, यथासाध्यशीघ्रता से, उपधारा (1) में निर्दिष्ट, यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग की रिपोर्ट की एक प्रति संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष या जहां राज्य विधान-मंडल के दो सदन हैं, वहां प्रत्येक सदन के समक्ष और जहां राज्य विधान-मंडल का एक सदन है वहां उस सदन के समक्ष रखवाएगी ।

(5) यदि केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग को ऐसा प्रतीत होता है कि इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का प्रयोग करने के संबंध में किसी लोक प्राधिकारी की पद्धति, इस अधिनियम के उपबंधों या भावना के अनुरूप नहीं है तो वह प्राधिकारी को ऐसे उपाय विनिर्दिष्ट करते हुए, जो उसकी राय में ऐसी अनुरूपता को बढ़ाने के लिए किए जाने चाहिएं, सिफारिश कर सकेगा ।

26. समुचित सरकार द्वारा कार्यक्रम तैयार किया जाना – (1) समुचित सरकार, वित्तीय और अन्य संसाधनों की उपलब्धता की सीमा तक –

(क) जनता की, विशेष रूप से, उपेक्षित समुदायों की इस बारे में समझ की, वृद्धि करने के लिए, कि इस अधिनियम के अधीन अनुध्यात अधिकारों का प्रयोग कैसे किया जाए शैक्षिक कार्यक्रम बना सकेगी और आयोजित कर सकेगी ;

(ख) लोक प्राधिकारियों को, खंड (क) में निर्दिष्ट कार्यक्रमों को बनाने और उनके आयोजन में भाग लेने और ऐसे कार्यक्रमों का स्वयं जिम्मा लेने के लिए प्रोत्साहित कर सकेगी ;

(ग) लोक प्राधिकारियों द्वारा उनके क्रियाकलापों के बारे में सही जानकारी का समय से और प्रभावी रूप में प्रसारित किए जाने को बढ़ावा दे सकेगी ;

(घ) लोक प्राधिकरणों के, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारियों या राज्य लोक सूचना अधिकारियों को प्रशिक्षित कर सकेगी और लोक प्राधिकरणों द्वारा स्वयं के उपयोग के लिए

सुसंगत प्रशिक्षण सामग्रियों का उत्पादन कर सकेगी ।

(2) समुचित सरकार, इस अधिनियम के प्रारंभ से अठारह मास के भीतर, अपनी राजभाषा में, सहज व्यापक रूप और रीति से ऐसी सूचना वाली एक मार्गदर्शिका संकलित करेगी, जिसकी ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा युक्तियुक्त रूप में अपेक्षा की जाए, जो अधिनियम में विनिर्दिष्ट किसी अधिकार का प्रयोग करना चाहता है ।

(3) समुचित सरकार, यदि आवश्यक हो तो, उपधारा (2) में निर्दिष्ट मार्गदर्शी सिद्धांतों को नियमित अंतरालों पर अद्यतन और प्रकाशित करेगी, जिनमें विशिष्टतया और उपधारा (2) की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना निम्नलिखित सम्मिलित होगा –

(क) इस अधिनियम के उद्देश्य ;

(ख) धारा 5 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त प्रत्येक लोक प्राधिकरण के, यथास्थिति, केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी का डाक और गली का पता, फोन और फैक्स नंबर और यदि उपलब्ध हो तो उसका इलैक्ट्रोनिक डाक पता ;

(ग) वह रीति और प्ररूप जिसमें, यथास्थिति, किसी केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी से किसी सूचना तक पहुंच का अनुरोध किया जाएगा ;

(घ) इस अधिनियम के अधीन लोक प्राधिकरण के, यथास्थिति, किसी केन्द्रीय लोक सूचना अधिकारी या राज्य लोक सूचना अधिकारी से उपलब्ध सहायता और उसके कर्तव्य ;

(ङ) यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग से उपलब्ध सहायता ;

(च) इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त या अधिरोपित किसी अधिकार या कर्तव्य के संबंध में कोई कार्य करने या करने में असफल रहने के बारे में विधि में उपलब्ध सभी उपचार, जिनके अंतर्गत आयोग को अपील फाइल करने की रीति भी है ;

(छ) धारा 4 के अनुसार अभिलेखों के प्रवर्गों के स्वैच्छिक प्रकटन के लिए प्रावधान करने वाले उपबंध ;

(ज) किसी सूचना तक पहुंच के लिए अनुरोधों के संबंध में संदत्त की जाने वाली फीसों से संबंधित सूचनाएं ; और

(झ) इस अधिनियम के अनुसार किसी सूचना तक पहुंच प्राप्त करने के संबंध में बनाए गए या जारी किए गए कोई अतिरिक्त विनियम या परिपत्र ।

(4) समुचित सरकार को, यदि आवश्यक हो, नियमित अंतरालों पर मार्गदर्शी सिद्धांतों को अद्यतन और प्रकाशित करना चाहिए ।

27. **नियम बनाने की समुचित सरकार की शक्ति** – (1) समुचित सरकार, इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियम बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित सभी या किसी विषय के लिए उपबंध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(क) धारा 4 की उपधारा (4) के अधीन प्रसारित की जाने वाली सामग्रियों के माध्यम की लागत या प्रिन्ट लागत मूल्य ;

(ख) धारा 6 की उपधारा (1) के अधीन संदेय फीस ;

(ग) धारा 7 की उपधारा (1) और उपधारा (5) के अधीन संदेय फीस ;

(घ) धारा 13 की उपधारा (6) और धारा 16 की उपधारा (6) के अधीन अधिकारियों और अन्य कर्मचारियों को संदेय वेतन और भत्ते तथा उनकी सेवा के निबंधन और शर्तें ;

(ङ) धारा 19 की उपधारा (10) के अधीन अपीलों का विनिश्चय करते समय, यथास्थिति, केन्द्रीय सूचना आयोग या राज्य सूचना आयोग द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया ;

(च) कोई अन्य विषय, जो विहित किए जाने के लिए अपेक्षित हो या विहित किया जाए ।

28. **नियम बनाने की सक्षम प्राधिकारी की शक्ति** – (1) सक्षम प्राधिकारी, इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियम बना सकेगा ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित सभी या किसी विषय के लिए उपबंध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(i) धारा 4 की उपधारा (4) के अधीन प्रसारित की जाने वाली सामग्रियों के माध्यम की लागत या प्रिन्ट लागत मूल्य ;

(ii) धारा 6 की उपधारा (1) के अधीन संदेय फीस ;

(iii) धारा 7 की उपधारा (1) के अधीन संदेय फीस ; और

(iv) कोई अन्य विषय, जो विहित किए जाने के लिए अपेक्षित हो या विहित किया जाए ।

29. नियमों का रखा जाना – (1) इस अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह ऐसी कुल तीस दिन की अवधि के लिए सत्र में हो, जो एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकती है, रखा जाएगा और यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं या दोनों सदन इस बात से सहमत हो जाएं कि ऐसा नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो ऐसा नियम तत्पश्चात्, यथास्थिति, केवल ऐसे उपांतरित रूप में ही प्रभावी होगा या उसका कोई प्रभाव नहीं होगा । तथापि, उस नियम के ऐसे उपांतरित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

(2) इस अधिनियम के अधीन किसी राज्य सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम अधिसूचित किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र राज्य विधान-मंडल के समक्ष रखा जाएगा ।

30. कठिनाइयों को दूर करने की शक्ति – (1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा ऐसे उपबंध बना सकेगी, जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों, जो उसे कठिनाई को दूर करने के लिए आवश्यक और समीचीन प्रतीत होते हों :

परन्तु कोई ऐसा आदेश इस अधिनियम के प्रारंभ से दो वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

(2) इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।

31. निरसन – सूचना स्वातंत्र्य अधिनियम, 2002 (2003 का 5) इसके द्वारा निरसित किया जाता है ।

पहली अनुसूची

[धारा 13(3) और धारा 16(3) देखिए]

मुख्य सूचना आयुक्त, सूचना आयुक्त, राज्य मुख्य सूचना आयुक्त, राज्य सूचना आयुक्त द्वारा ली जाने वाली शपथ या किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्ररूप

"मैं, ...

जो मुख्य सूचना आयुक्त/सूचना आयुक्त/राज्य मुख्य सूचना आयुक्त/राज्य सूचना आयुक्त नियुक्त हुआ हूं, <u>ईश्वर की शपथ लेता हूं</u> कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत
सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं

के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा, मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूंगा तथा मैं सम्यक् प्रकार से और श्रद्धापूर्वक तथा अपनी पूरी योग्यता, ज्ञान और विवेक से अपने पद के कर्तव्यों का भय या पक्षपात, अनुराग या द्वेष के बिना पालन करूंगा तथा मैं संविधान और विधियों की मर्यादा बनाए रखूंगा ।" ।

दूसरी अनुसूची

(धारा 24 देखिए)

केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित आसूचना और सुरक्षा संगठन

1. आसूचना ब्यूरो ।
2. मंत्रिमंडल सचिवालय के अनुसंधान और विश्लेषण खंड ।
3. राजस्व आसूचना निदेशालय ।
4. केन्द्रीय आर्थिक आसूचना ब्यूरो ।
5. प्रवर्तन निदेशालय ।
6. स्वापक नियंत्रण ब्यूरो ।
7. वैमानिक अनुसंधान केन्द्र ।
8. विशेष सीमान्त बल ।
9. सीमा सुरक्षा बल ।
10. केन्द्रीय आरक्षित पुलिस बल ।
11. भारत-तिब्बत सीमा बल ।
12. केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल ।
13. राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड ।
14. असम राइफल्स ।

[1][15. सशस्त्र सीमा बल ।]

16. आयकर महानिदेशालय (अन्वेषण) ।
17. राष्ट्रीय तकनीकी अनुसंधान संगठन ।
18. वित्तीय आसूचना यूनिट, भारत ।

[2][19. विशेष संरक्षा ग्रुप ।]

20. रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन ।
21. सीमा सड़क विकास बोर्ड ।

---

[1] सा. का. नि. 347, तारीख 28.9.2005 द्वारा प्रतिस्थापित ।

[2] सा. का. नि. 347, तारीख 28.9.2005 द्वारा (28.9.2005 से) अंतःस्थापित ।

[1][22. राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् सचिवालय ।"]

[2]["23. केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ।

24. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण ।

25. राष्ट्रीय आसूचना ग्रिड ।"]

---

[1] सा. का. नि. 726(अ) तारीख 8.10.2008 द्वारा अंतःस्थापित ।

[2] सा. का. नि. 442(अ) तारीख 9.6.2011 द्वारा जोड़ा गया ।

Cover iii

कार्यालय आदेश तारीख 13 फरवरी, 2017 के अनुसार विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पाठ्य पुस्तकों पर छूट देने की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम व प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पुस्तक की मुद्रित कीमत (रुपयों में)	7 वर्ष से पुराने संस्करण पर 35% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)	8 से 15 वर्ष पुराने संस्करण पर 50% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)	15 वर्ष से अधिक पुराने संस्करण पर 75% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)
1.	भारत का विधिक इतिहास - श्री सुरेन्द्र मधुकर - 1989	30	—	—	8
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि - डा. एन. वी. परांजपे - 1990	40	—	—	10
3.	वाणिज्य विधि - डा. आर. एल. भट्ट - 1993	108	—	—	27
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धांत - श्री शर्मन लाल अग्रवाल - 1993	40	—	—	10
5.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय - डा. एस. सी. खरे - 1996	115	—	—	29
6.	श्रम विधि - श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा - 1996	452	—	—	113
7.	संविदा विधि - डा. रामगोपाल चतुर्वेदी - 1998	275	—	—	69
8.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान - डा. सी. के. पारिख - 1999	293	—	—	74
9.	आधुनिक पारिवारिक विधि - श्री राम शरण माथुर - 2000	429	—	—	108
10.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) - विधि साहित्य प्रकाशन - 2000	225	—	—	57
11.	हिन्दू विधि - डा. रवीन्द्र नाथ - 2001	425	—	—	106
12.	भारतीय भागीदारी अधिनियम - श्री माधव प्रसाद वशिष्ठ - 2001	165	—	—	41
13.	प्रशासनिक विधि - डा. कैलाश चन्द्र जोशी - 2001	200	—	—	50
14.	भारतीय दंड संहिता - डा. रवीन्द्र नाथ - 2002	741	—	—	185
15.	विधिक उपचार - डा. एस. के. कपूर - 2002	311	—	—	78
16.	विधि शास्त्र - डा. शिवदत्त शर्मा - 2005	580	—	290	—
17.	मानव अधिकार - डा. शिवदत्त शर्मा - 2006	120	—	60	—

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Cover IV

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ पाठकों की सुविधा के लिए शृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105